वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 84

जम्बूद्वीप मण्डल विधान

(महामृत्युंजय विधान)

-रचयित्री-

गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी

परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के आर्यिका दीक्षा स्वर्ण जयंती वर्ष (अप्रैल 2006-अप्रैल 2007) के अन्तर्गत उनकी जन्मदात्री माँ पूज्य आर्यिका श्री रत्नमती माताजी की 36वीं दीक्षा तिथि के अवसर पर प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

फोन नं.- (01233) 280184, 280236

पंचम संस्करण	मगशिर कृष्णा 3	मूल्य
1100 प्रतियाँ	वीर.नि.सं. 2533	60/-
	8 नवम्बर 2006	

विषय-सूचिका

विषय		पृष्ठ
१. पीठिका, मंगलाचरण, जम्बूद्वीप भक्ति, रक्षाविधिः		१–८
पूजन प्रारम्भ	पूजा नं०	
५. जम्बूद्वीप पूजा	१	११
६. जम्बूद्वीप भरतक्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा	२	१४
७. जम्बूद्वीप भरतक्षेत्र वर्तमानकालीन पूजा	३	२१
८. जम्बूद्वीप भरतक्षेत्र भविष्यत्कालीन पूजा	४	२८
९. भरतक्षेत्र के तीर्थंकर केवलि साधु पूजा	५	३४
१०. जम्बूद्वीप ऐरावतक्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा	६	५८
११. जम्बूद्वीप ऐरावतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	७	६४
१२. जम्बूद्वीप ऐरावतक्षेत्र भविष्यत्कालीन तीर्थंकर पूजा	८	७१
१३. ऐरावतक्षेत्र के तीर्थंकर केवली साधु पूजा	९	७८
१४. सीमंधर आदि चार तीर्थंकर पूजा	१०	८५
१५. बत्तीस विदेह तीर्थंकर केवली साधु पूजा	११	९०
१६. जिनधर्म पूजा	१२	१२८
१७. जिनागम पूजा	१३	१४६
१८. सुदर्शन मेरु पूजा	१४	१६२
१९. षट्कुलाचल जिनालय पूजा	१५	१६९
२०. चार गंजदत जिनालय पूजा	१६	१७४
२१. जम्बूवृक्ष शाल्मलिवृक्ष पूजा	१७	१७८
२२. सोलह वक्षारगिरि पूजा	१८	१८३
२३. चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा	१९	१८९
२४. हिमवन आदि देवभवन गृह चैत्यालय पूजा	२०	१९९
२५. सर्व देवभवन गृह चैत्यालय पूजा	२१	२२४
२६. कृत्रिम जिनमंदिर जिनबिम्ब पूजा	२२	२३४
२७. समवसरण पूजा	२३	२४२
२८. सिद्ध पूजा	२४	२५२
२९. बड़ी जयमाला		२६२
३०. प्रशस्ति		२६७
३१. आरती		२७१
३२. भजन		२७२

आद्य वक्तव्य

वीर निर्वाण संवत् पच्चीससौ (२५००) ईस्वी सन् उन्नीससौ चौहत्तर (१९७४) के ज्येष्ठ मास में मैं यहाँ हस्तिनापुर के बड़े मंदिर में ठहरी हुई थी। भगवान महावीर और उनका धर्मतीर्थ ऐतिहासिक तीर्थ क्षेत्र हस्तिनापुर में "बाल विकास" आदि समयोचित पुस्तकें लिख रही थी। 'ब्रह्मचारी मोतीचन्द मवाना के कतिपय श्रेष्ठीवर्ग एवं क्षेत्र के मैनेजर मुनीम आदि का सहयोग लेकर जंबूद्वीप रचना के लिए कई खेत वालों से बात करके जमीन खरीदने के प्रयत्न में लगे हुए थे। मवाना के एक सेठ ने आकर मेरे सामने प्रार्थना की—माताजी ! आप यहीं चातुर्मास कर लीजिये; हम लोग इस जंबूद्वीप रचना का काम यहीं करायेंगे। कई बार कई एक श्रेष्ठियों ने, मेरठ के लोगों ने व स्थानीय विद्वानों ने भी चातुर्मास के लिये प्रार्थना की, फिर भी निर्वाणोत्सव के प्रसंग में आचार्य धर्मसागरजी महाराज भी ससंघ दिल्ली आ रहे थे। आचार्य रत्न श्री देशभूषणजी महाराज तो ससंघ पहले ही विराजमान थे व मुनि श्री विद्यानंदजी महाराज भी दिल्ली में विराजमान थे उस चातुर्मास में हमें भी दिल्ली ही रहना था। अतः मैंने यही कहा कि मैं आषाढ़ शुक्ला पंचमी तक विहार अवश्य कर दूंगी चूँकि मुझे आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी तक दिल्ली पहुँचना है।

यद्यपि मोतीचंद ज्येष्ठ की भंयकर लू और धूप में भी दिन रात एक कर जगह खरीदने के पुरुषार्थ में लगे हुये थे फिर भी तात्कालिक सफलता नहीं दिख रही थी। एक दिन यहाँ मंदिर जी में णमोकर मंत्र का अखंड पाठ कराया। आषाढ़ सुदी एकम को अखंड पाठ चल रहा था। सायंकाल सामायिक के बाद मेरे मन में भाव आया कि एक छोटा सा जंबूद्वीप विधान बनाऊँ, लिखना शुरू किया उपयोग की इतनी स्थिरता हुई कि पहले एक समुच्चय पूजा बनाई पुनः दूसरी पूजा बनाकर अकृत्रिम अठत्तर चैत्यालयों के अठत्तर अर्घ आदि बनाये बाद में रात्रि के एक बजे के बाद कुछ विश्राम किया अनंतर पिछली रात्रि में उठकर प्रतिक्रमण, सामायिक आदि नित्यक्रिया से निवृत्त होकर पुनः विधान की जयमाला लिखने बैठ गई। इधर महामंत्र का अखंड पाठ भी पूर्ण हुआ। मैं जयमाला की अंतिम पंक्ति लिख रही थी कि मोतीचंद आकर बोले—माताजी ! नशिया जाने के रास्ते में जो एक छोटा सा खेत है अभी मैंने एक आदमी को भेजकर उस खेत वाले किसान को बुलाया है आप आशीर्वाद दीजिये कि मैं आज ही इसका सौदा पक्का करना चाहता हूँ मैंने अपनी विधान की पंक्तियाँ पूरी की मोतीचंद को आशीर्वाद दिया और शुद्धि करके आहार के लिये चली गई। श्री महेशचंदजी के यहाँ मेरा आहार हो रहा था, मोती चंद भी वहीं बैठे आहार दे रहे थे कि एक व्यक्ति ने आकर सूचना दी।

मोतीचंदजी ! आपको श्री सुकुमारचंदजी बुला रहे हैं, उन्होंने खेत वाले को बयाना देकर जगह का सौदा पक्का कर दिया है। मोतीचंदजी प्रसन्न होकर गये और मध्याह्न में ही रजिस्ट्री करानी है ऐसा निर्णय करके आये। मोचीचंदजी को जब मैंने मध्याह्न में अपनी जंबूद्वीप रचना दिखाई तो वे बोले कि यह विधान तो बनते ही फल गया जब इसे करायेंगे तो यह बहुत ही फलेगा।

अगले दिन आषाढ़ सुदी तीज को बहुत ही हर्षोल्लास के वातावरण में सुमेरु का शिलान्यास कराया गया। मैंने प्रातः नव बजे शिलान्यास कराकर आहार के बाद यहाँ से दिल्ली के लिये विहार कर दिया। सरधना पहुँचते ही वहाँ यह विधान बड़े ही उत्साह से भक्तों ने किया।

वह विधान उस समय इस जंबूद्वीप रचना के लिये बीजभूत था उसी समय मेरे मन में भावना बन चुकी थी कि जंबूद्वीप का एक विस्तृत विधान बनाना है। बीच में अनेक ग्रन्थों के अनुवाद, स्वतंत्र ग्रन्थ रचना आदि के व्यासंग में यह योग टलता गया और अब जंबूद्वीप की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के बाद इस विधान को बनाने का योग आया। यह महाविधान कल्पवृक्ष के समान है अथवा अपमृत्यु को टालने में 'महामृत्युंजय' विधान इस सार्थक नाम को धारण करने वाला है।

सन् ७४ में इस जगह का क्रय करके सुमेरु पर्वत का शिलान्यास किया गया। फरवरी सन् ७५ में इस स्थल पर छोटा सा एक मंदिर बनाकर सात हाथ की उत्तुंग भगवान् महावीर स्वामी की प्रतिमा का पंचकल्याणक संपन्न हुआ। यह प्रतिमा साक्षात् कल्पवृक्ष है इसके अनेक अतिशय प्रत्यक्ष देखे गये हैं। वैसे ही सन् १९७९ में सुमेरु पर्वत का पंचकल्याणक संपन्न हुआ वह सुमेरु भी बहुत ही अतिशयपूर्ण है । इस विधान में सर्वप्रथम जंबूद्वीप भक्ति है। उसके बाद जंबूद्वीप के रक्षक अनावृत यक्ष का आह्वानन कर उन्हें यज्ञभाग दिया गया है, ऐसे ही चार गोपुर द्वार के देवों को व श्री ह्री आदि छह देवियों का आह्वानन कर उन्हें भी यज्ञांश समर्पित किया है।

पूजन के प्रारम्भ में जंबूद्वीप की समुच्चय पूजा है। इसके आगे सर्वप्रथम जंबूद्वीप के भरत क्षेत्र के आर्यखंड में होने वाली भूत, वर्तमान व भविष्यत्कालीन चौबीस, तीर्थंकरों की तीन पूजायें हैं। पुनः इसी आर्यखंड में हुये अनंत चौबीसी, केवली गणधर मुनिगण व वर्तमानकालीन गणधर, तीर्थक्षेत्र तथा भाविकालीन अनंत चौबीसी की एक पूजा व अनेक अर्घ हैं। इसके बाद जंबूद्वीप के ऐरावत क्षेत्र के आर्यखंड में होने वाली भूत वर्तमान भविष्यत् कालीन तीन चौबीसी की तीन पूजायें हैं और वहाँ के आर्यखंड के भूतकालीन अनंत व भाविकालीन अनंत चौबीसी तथा गणधर मुनिगण आदि की पूजा व अर्घ हैं।

अनंतर विदेह क्षेत्र में विद्यमान सीमंधर, युगमंधर, बाहु, सुबाहु इन चार तीर्थंकरों की पूजा है। इसके बाद बत्तीस विदेहों के त्रैकालिक तीर्थंकर केवली, गणधर, मुनिगण आदि की एक पूजा में अनेक अर्घ हैं। पुनः जंबूद्वीप की चौतीस

कर्मभूमि के होने वाले जिनधर्म की पूजा है इसमें जीवदया, वस्तु स्वभाव, दशलक्षण, रत्नत्रय, सोलह कारण आदि धर्मों को अर्घ हैं। इसके बाद चौंतीस कर्मभूमि में होने वाले जिन आगम की पूजा में बारह अंग, बारहवें अंग के पांच भेद व उनके प्रभेदों के अर्घ तथा चौदह प्रकीर्णक के अर्घ हैं।

पुनः जंबूद्वीप के अकृत्रिम अठत्तर जिनमंदिरों की पूजा में सर्वप्रथम सुदर्शन मेरु की पूजा में १६ चैत्यालय के चार पांडुकादि शिलाओं के अर्घ हैं। इसी तरह षट् कुलाचल पूजा, चार गजदंतों की पूजा, जंबूवृक्ष, शाल्मली वृक्ष की पूजा, सोलह वक्षारों की पूजा व चौंतीस विजयार्धों की पूजा व अर्घ हैं। इसमें छह पूजाओं में अठत्तर अर्घ हैं।

अनंतर हिमवान् पर्वत आदि के देवभवनों के गृह चैत्यालयों की एक पूजा में १७५ अर्घ है। पुनः जंबूद्वीप के नंदन वन आदि में स्थित देवभवनों के चैत्यालयों की एक पूजा व अनेक अर्घ हैं। पुनः इन चौंतीस कर्मभूमियों के सर्वकृत्रिम-राजा प्रजा आदि द्वारा बनवाये गये त्रैकालिक जिनमंदिर और जिनप्रतिमाओं की एक पूजा व अनेक अर्घ हैं। इसके बाद समवसरण की एक पूजा लिखकर चौबीस वर्तमान के तीर्थंकरों के समवसरण के अर्घ हैं। अनंतर सब के अंत में सिद्धपूजा है व इस जंबूद्वीप से सर्वत्र जल स्थल आदि से मुक्ति को प्राप्त करने वाले सिद्धों को अर्घ चढ़ाया है। इसके बाद एक समुच्चय रूप से बड़ी जयमाला है।

इस प्रकार इस 'जंबूद्वीप महाविधान' में चौबीस पूजायें हैं, एक हजार आठ अर्घ हैं, सत्ताईस पूर्णार्घ्य हैं एवं २५ जयमालायें हैं। उनका खुलासा इस प्रकार है—

पूजा	*अर्घ*	*पूर्णार्घ्य*	*जयमाला*
१. जंबूद्वीप पूजा	०	०	१
२. भरतक्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा	२४	१	१
३. भरतक्षेत्र वर्तमानकालीन तीर्थंकर पूजा	२४	१	१
४. भरतक्षेत्र भविष्यत्कालीन तीर्थंकर पूजा	२४	१	१
५. भरतक्षेत्र के केवली गणधर आदि की पूजा	१२०	३	१
६. ऐरावतक्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा	२४	१	१
७. ऐरावतक्षेत्र वर्तमानकालीन तीर्थंकर पूजा	२४	१	१
८. ऐरावतक्षेत्र भविष्यत्कालीन तीर्थंकर	२४	१	१
९. ऐरावतक्षेत्र के केवली आदि की पूजा	१३	१	१
१०. विदेह के सीमंधर आदि की पूजा	४	१	१
११. विदेह क्षेत्र के केवली आदे की पूजा	२२४	१	१

१२. जिनधर्म पूजा	७६	१	१
१३. जिनागम पूजा	६७	१	१
१४. सुदर्शन मेरु पूजा	२०	१	१
१५. षट् कुलाचल पूजा	६	१	१
१६. गजदंत पूजा	४	१	१
१७. जंबूवृक्ष पूजा	२	१	१
१८. वक्षार पूजा	१६	१	१
१९. विजयार्ध पूजा	३७	१	१
२०. हिमवान आदि देवभवन के गृह चैत्यालय पूजा	१७५	१	१
२१. सर्वदेवभवन गृह चैत्यालय पूजा	२९	१	१
२२. कृत्रिम जिनमंदिर जिनप्रतिमा पूजा	१५	१	१
२३. समवसरण पूजा	२७	१	१
२४. सिद्ध पूजा	२९	१	१
२५. बड़ी जयमाला			१

इस जंबूद्वीप विधान को करने के लिये हस्तिनापुर में खुले में बने हुये जंबूद्वीप में आकर करने से यथास्थान अर्घ चढ़ाने में बहुत ही आनंद आयेगा। यदि आप अपने ही गांव में करना चाहते हैं तो मंदिर के विशाल प्रांगण में यह मंडल रचना करिये या अन्यत्र खुले स्थान में पांडाल बनाना चाहिये। इसका मंडल मध्यम रूप में तो २४×२४ फुट का होना चाहिये फिर यदि इससे बड़ा ४०×४० फुट का मंडल हो तो प्रत्येक अर्घ चढ़ाने के स्थान का अधिक खुलासा रहेगा। स्थानाभाव में मंडल छोटा भी कर सकते हैं।

मंडल में बीच में सुमेरु पर्वत रखना चाहिये। अनंतर चारों तरफ रांगोली से या रंगे हुये चावलों से पूरे जंबूद्वीप का चित्र बनाना चाहिये। दक्षिण से प्रारंभ कर हिमवान्, महाहिमवान, निषध, नील, रुक्मी और शिखरी ये छह पर्वत पीले, सफेद, तपाये स्वर्ण जैसे पीले, नीले, सफेद और पीले क्रम से इन रंगों के बनाना चाहिये। प्रत्येक पर्वत के बीच में सरोवर और उनसे निकलती हुई गंगा-सिन्धु आदि चौदह नदियाँ दिखानी चाहिये। नदियों व सरोवरों का जल किंचित् नीला दिखाना चाहिये। विदेह में सोलह वक्षार और बारह विभंगा नदियों से बत्तीस देश करके प्रत्येक में छह खंड दिखाना चाहिये। ऐसे ही भरत-ऐरावत में छह खंड दिखाकर आर्यखंड के बीच में अयोध्या नगरी दिखानी चाहिये। मेरु की चारों विदिशाओं में चार गजदंत बनाकर मेरु से ईशान में उत्तर कुरु में जंबूद्वीप और मेरु के नैऋत्य कोण में देवकुरु में शाल्मलि वृक्ष दिखाना चाहिये। मेरु के सोलह चैत्यालय से लेकर सर्व अठत्तर चैत्यालय दिखाना चाहिये।

इस मंडल को अच्छी तरह सजाना चाहिये। चंवर, छत्र, चंदोवा, आठ मंगलद्रव्य, घंटा, किंकणी छोटी-छोटी झंडियों से मंडल को सजाकर गोटे की माला, फूलमाला आदि से सुसज्जित करना चाहिये। सामने वेदी में भगवान् विराजमान हों और मंडल पर बीच में एक ऊँची चौकी पर भगवान् को विराजमान करना चाहिये। नारियल मंडल पर ही चढ़ाना चाहिये।

पूजा करके अर्घ कहाँ चढ़ना? यदि आप हस्तिनापुर में आकर जंबूद्वीप में विधान कर रहे हैं तब सर्वप्रथम मेरु के जंबूद्वीप के विजय द्वार के पास बैठकर या खड़े होकर पहले जंबूद्वीप की समुच्चय पूजा करिये पुनः दक्षिण में भरतक्षेत्र के आर्यखंड में आकर भरतक्षेत्र के भूतकालीन चौबीस तीर्थंकरों की पूजा करते हुये चार पूजायें करिये। इसके बाद ऐरावत क्षेत्र के आर्यखंड में चार पूजायें करिये अनंतर पूर्व विदेह के सामने बैठकर सीमंधर आदि चार तीर्थंकरों की पूजा करके उन तीर्थंकरों को यथा स्थान उन की नगरियों में अर्घ चढ़ाना चाहिये। पुनः विदेह क्षेत्र के बत्तीस आर्यखंडों में प्रत्येक में सात-सात अर्घ चढ़ाना है।

इसके बाद भरतक्षेत्र के आर्यखंड में बैठकर जिनधर्म की पूजा करके वहीं सब अर्घ चढ़ाकर पूर्णार्घ्य बोलकर एक-एक अर्घ ऐरावत, पूर्व विदेह और पश्चिम विदेह में चढ़ा देना चाहिये। ऐसे ही जिनागम की पूजा भी भरत क्षेत्र के आर्यखंड में करके पूर्णार्घ्य के समय ऐरावत, पूर्व विदेह, पश्चिम विदेह में भी अर्घ चढ़ा देना चाहिये।

इसके अनंतर सुमेरु भक्ति पढ़कर पुष्पांजलि करके सुमेरु पूजा में सोलह अर्घ्य चढ़ाकर उन-उन मंदिरों पर ध्वजा चढ़ानी होती हैं। पुनः कुलाचल आदि से लेकर विजयार्ध पर्वत के जिनमन्दिरों की पूजा तक ध्वजा चढ़ाना है। इस प्रकार जंबूद्वीप के अकृत्रिम अठत्तर जिन मंदिरों की पूजा होती है। अनंतर देवभवनों के गृह चैत्यालय की पूजा में भी ध्वजा चढ़ाई जावेंगी। बाद में कृत्रिम जिनमंदिर पूजा में भी अर्घ में ध्वजायें चढ़ानी होती हैं और समवसरण पूजा में भी ध्वजा चढ़ानी चाहिये। इस प्रकार

७८ ध्वजायें तो ऐसे चिह्न की हों—

एवं शेष देवभवन के गृह चैत्यालयों की ऐसी बनानी चाहिये—

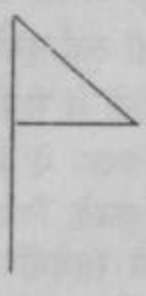

इसके बाद में सिद्धों की पूजा करके अर्घ में जहाँ-जहाँ से सिद्ध होने वालों को अर्घ है वहीं-वहीं अर्घ चढ़ाना चाहिये।

यदि अपने गांव में मंडल पर पूजा करनी है तो भी मंडल में यही क्रम रहेगा बस अन्तर इतना ही रहेगा कि वहाँ अकृत्रिम कृत्रिम जिनमंदिरों के अर्घ में मंदिर स्थापित कर ध्वजा चढ़ाना होगी जैसा कि इन्द्रध्वज विधान में करते हैं। तब इसमें तीन सौ सत्ताइस (३२७) मंदिर स्थापित करके तीन सौ सत्ताइस ध्वजायों चढ़ानी चाहिये। ध्वजाओं का यह भेद केवल मंदिर व गृह चैत्यालय तथा कृत्रिम मंदिर का अंतर दिखाने के लिये किया है इसमें कोई खास बात नहीं है।

विधान विधि :

इस विधान को करने की इच्छा हो तो सर्वप्रथम निर्ग्रंथ गुरु या आर्यिका आदि के निकट पहुँचकर उनसे प्रार्थना करके उन्हें इस विधान में लाना चाहिये। शुभ मुहूर्त में अच्छे प्रतिष्ठाचार्य या विधानाचार्य से झंडारोहण कराना चाहिये। पुनः नांदी मंगल अंकुरारोपण विधि करके जलयात्रा (घटयात्रा) से जल लाकर वेदी शुद्धि करनी चाहिये।

जिस दिन मंडलविधान प्रारम्भ करना हो, सब इंद्र-इंद्राणी और पूजक स्त्री-पुरुष शुद्ध केसरिया वस्त्र पहनकर मंदिर जी में गुरु को श्रीफल चढ़ाकर उनसे आशीर्वाद प्राप्त कर उन्हें पूजन मंडप में लावे। अनंतर विंधानाचार्य सकलीकरण, इंद्रप्रतिष्ठा, मंडप प्रतिष्ठा कराकर विधान प्रारम्भ करके रक्षाविधि संपन्न करें। पुनः संगीत की ध्वनि के साथ पूजन प्रारम्भ कर देवें।

जाप्यानुष्ठान की विधि करके इस विधान के जाप्य का सवा लाख या सुविधानुसार कम से कम इक्कीस हजार का संकल्प कराना चाहिये।

जाप्य यह है—

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

अथवा चौबीस अक्षरी जाप्य—

ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

ॐ ह्रीं अर्हं नवदेवताभ्यो नमः।

इन दोनों में से किसी भी एक जाप्य का अनुष्ठान करना चाहिये।

इस विधान में भी कम से कम आठ दिन लगेंगे। पुनः नवमें दिन पूर्णाहुति देकर हवन करके विधानपूर्ण करके रथयात्रा महोत्सव करना चाहिये। यदि शक्ति संपन्न हों तो साधर्मी जनों का प्रीतिभोज करके उन्हें कुछ भेंट आदि देकर धर्म प्रभावना करनी चाहिये।

इस प्रकार विधिवत् किया गया यह विधान यजमान के सर्व मनोरथों को सफल करेगा, सर्व अमंगल, अकाल, अतिवृष्टि आदि आपत्तियों को दूर करेगा तथा

अनेक प्रकार हवाई जहाज, मोटर, कार, रेल आदि के एक्सीडेंट के निमित्त से होने वाली आकस्मिक दुर्घटनायें तथा ज्वर, पीलिया, पक्षाघात, हृदय-रोग, ब्लडप्रेशर आदि रोग और किन्हीं निमित्तों से होने वाली अपमृत्यु भी टल जाती है। अतएव इसका 'महामृत्युंजय-विधान' यह नाम भी सार्थक ही है।

यह विधान करने वालों को, कराने वालों को, अनुमोदन करने वालों को सर्वसुख प्रदान करे तथा देश, राज्य, राष्ट्र आदि में सर्वत्र मंगल करे यही मेरी मंगल कामना है।

—गणिनी आर्यिका ज्ञानमती

ज्येष्ठ शुक्ला ८, वीर सं० २५१२
दि० १५-६-१९८६ रविवार
हस्तिनापुर (मेरठ)

जम्बू द्वीप

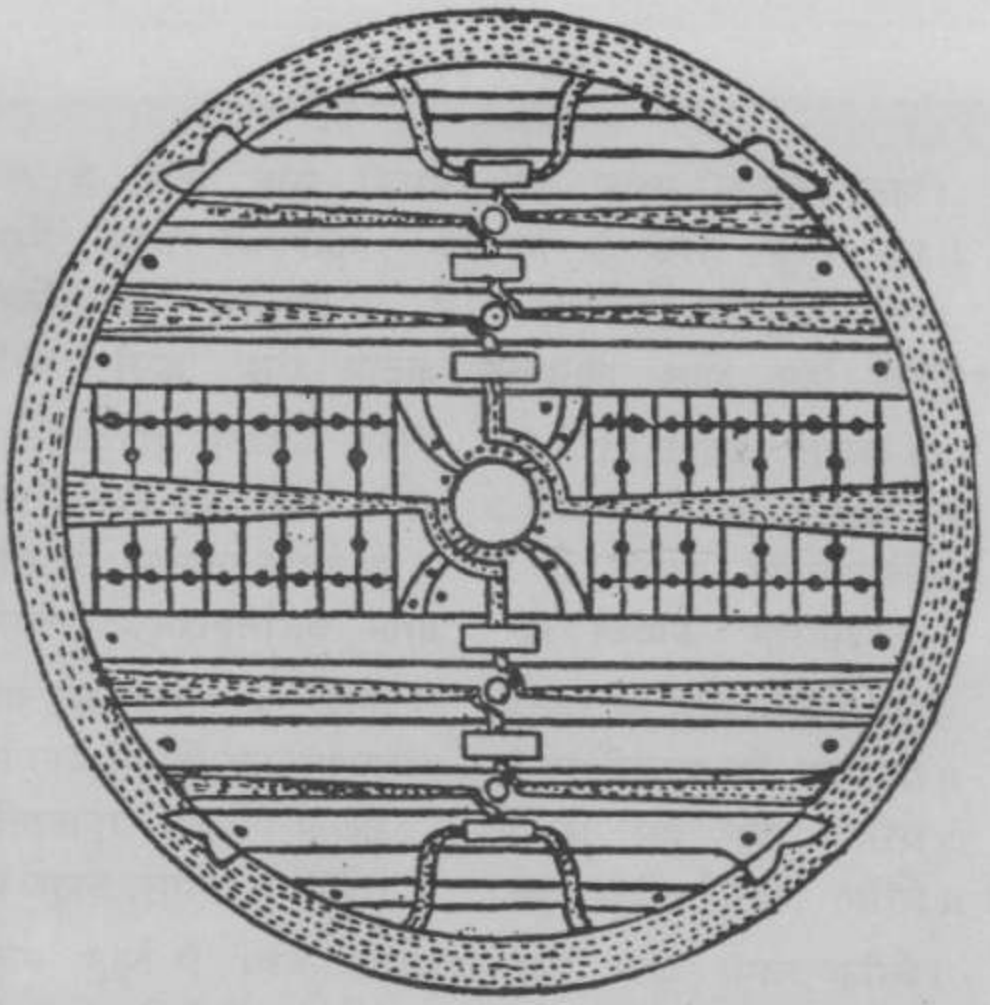

मंडल विधान

● हिमवन आदि के चैत्यालय

जम्बूद्वीप मण्डल विधान

अथ पीठिका

शंभुछंद

मेरू है ठीक मध्य जिसमें, वह पहला जंबूद्वीप कहा।
इसमें अट्ठत्तर जिनमंदिर, शाश्वत है उनसे पूज्य रहा॥
इसमें ही कर्मभूमियों में, तीर्थंकर महापुरुष होते।
अर्हंत सिद्ध सूरी पाठक, साधूगण आदि यहाँ होते॥१॥

यह जबूंद्वीप विधान यद्पि, सब रोग उपद्रव नाशक है।
सब इच्छित देकर स्वर्ग सौख्य, दे शिवपथ में भी साधक है॥
फिर भी अपमृत्यु टालने में, यह है विशेष महिमाशाली।
इसलिये महामृत्युंजय नामा, यह विधान गरिमाशाली॥ २॥

जब इस विधान को करना हो, गुरुवर के सन्निध में आवो।
सविनय विनती कर शुभाशीष, लेकर विधान को रचवाओ॥
हस्तिनापुर जंबूद्वीप में आ, इसमें ही सब पूजा करिये।
या अपने नगर में मंदिर में, यह जंबूद्वीप मंडल भरिये॥ ३॥

उत्तम मुहूर्त में ध्वज आरोहण कर नांदी मंगल करिये।
अंकुरारोपणी विधि करके, सकलीकरणादि विधी करिये॥
जाप्यानुष्ठान सहित क्रम से, उत्सवपूर्वक पूजा करिये।
संगीत गीत नृत्यादि वाद्य, करके सब जन का मन हरिये॥ ४॥

शाश्वत जिनमंदिर अट्ठत्तर की, पूजा में बहुभक्ती से।
मंदिर थापित कर ध्वजा चढ़ाओ, श्रीफल अर्घ धरो रुचि से॥
सब देवभवन के जिनगृह की, कृत्रिम जिनगृह की पूजा में।
तुम ध्वजा चढ़ाकर अर्घ करो, शुभ यश फैलावो सब जग में॥ ५॥

सज्जाती सद्गृहस्थ इन दो परम स्थानों से सहित भव्य।
हो श्रद्धावान् विनीत देव गुरु, भक्त न्याय अर्जित सुद्रव्य॥

वह श्रावक ही उत्तम विधान, करने का अधिकारी होता।
तब ही विधान के फल से देश राष्ट्र में सर्वक्षेम होता॥ ६॥

दोहा

जम्बूद्वीप विधान यह, करो कराओ भव्य।
'ज्ञानमती' को पूर्ण कर, शिव सुख लहो अलभ्य॥ ७॥

मंगलाचरण

शंभुछंद

सिद्धी के दाता कल्पवृक्ष, बिन मांगे वाञ्छित देते हैं।
चिंतामणि रत्न कहें अद्भुत, बिन चिंते सब कुछ देते हैं॥
पारसमणि हैं आश्चर्यजनक, भक्तों को पारस करते हैं।
उन सिद्धों की वंदना करूँ, उनसे मम इच्छित फलते हैं॥ १॥

इस युग के आदिपुरुष ब्रह्मा, जिनऋषभदेवको नित्य नमूँ।
श्री शांतिनाथ जिन कुंथुनाथ, अरनाथ जिनेश्वर को प्रणमूँ॥
महावीर प्रभू को वंदन कर, श्रीबाहुबली को भी ध्याऊँ।
यह जम्बूद्वीप बना जिनके, प्रसाद से उनके गुण गाऊँ॥ २॥

यह जंबूद्वीप विधान रचा, जो सब जग में मंगलकारी।
यह लोकोत्तम यह शरणभूत, यह सब जन मन को सुखकारी॥
यह सर्वोपद्रव हरने में, समरथ यह सब व्याधी हरता।
यह इष्ट वियोग अनिष्ट योग, शोकादि सर्व आधी हरता॥ ३॥

हो अपमृत्यू का योग यदी, यह जंबूद्वीप विधान करो।
विधिवत् जाप्यानुष्ठान करो, फिर पूर्णाहुति दे हवन करो॥
निश्चित ही ग्रह अनुकूल बनें, अपमृत्यु टले दीर्घायु मिले।
जीवन भर सुख संपत्ति शांति, होवे मनवांछित पूर्ण फले॥ ४॥

जो वायुयान बस कार रेल, साइकिल आदि की दुर्घटना।
इनके संघट्टन पतन आदि, से हो अकाल में ही मरना॥
हो गैस अंगीठी विस्फोटक, या गैस विषैल फैलने से।
हो अग्निकांड तूफान व झंझावायू आँधी चलने से॥ ५॥

भूकंप नदी में बाढ़, व सागर उद्वेलित हो जाने से।
विद्युत् उल्का के गिरने से, बिजली[1] स्पर्श हो जाने से॥
डाकू चोरादि व राजाभय, बहु आकस्मिक घटनाओं से।
इस ही विधान के करने से, बच जाओ सब विपदाओं से॥ ६॥

इस ही विधान से अतीवृष्टि, दुर्भिक्ष अकाल सभी टलते।
होवें सुभिक्ष वहाँ चारों दिश, जल मेघ समय पर ही बरसें॥
पर कृत सब बाधायें मिटतीं, व्यंतरकृत भी उपसर्ग मिटें।
हो रक्तचाप या हृदय रोग, कुष्ठादि रोग भी शीघ्र मिटें॥ ७॥

दोहा

जंबूद्वीप विधान से, मिटे उपद्रव रोग।
ईति भीति सब ही टले, मिले शीघ्र सब सौख्य॥ ८॥

इति जिनयज्ञप्रतिज्ञापनाय मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जम्बूद्वीप भक्ति

उपजाति छंद

सुदर्शनाद्रिं प्रणिपत्य मूर्ध्ना, तत्रस्थितान् षोडशचैत्यगेहान्।
तेषु स्थिताश्च प्रतिमा जिनानां, वंदे विशुद्ध्या शिवसौख्यसिद्धयै॥ १॥

चौबोल छंद

मेरु सुदर्शन गिरि को मस्तक, नत होकर के प्रणमन कर।
उस पर स्थित षोडश जिनगृह, सब गृह में प्रतिमा मनहर॥
उन सब जिनगृह जिनप्रतिमा को, त्रय शुद्धि से वंदूँ मैं।
भक्तिभाव से नितप्रति प्रणमूँ, शिवसुख सिद्धि हेतु मैं॥१॥

चतुःप्रमा ये गजदंतशैलाः, तेषु त्रिलोकाधिपमंदिराणि।
तत्राप्तरूपाणि नमोस्तु तेभ्यः, स्वात्मोत्थसौख्यं मम शीघ्रमस्तु॥ २॥

विदिशाओं में गजदंताचल, चार कहे हैं सुन्दरतम।
उनमें त्रिभुवन पति जिनवर के, मन्दिर शोभें अति उत्तम॥

---

१. करेंट।

उन मंदिर में आप्त प्रभू की प्रतिमाएँ शाश्वत शोभें।
नमोऽस्तु उन सबको नित मेरा स्वात्मजन्य सुख मम होवे॥ २॥

जिनालया: षट्कुलपर्वतेषु, ह्यकृत्रिमा रत्नमया: विरेजु:।
जैनेन्द्रबिम्बानि विभांति तेषु, नमामि भूत्यै किल तानि मोदात्॥ ३॥

षट्कुल पर्वत पर चैत्यालय रत्नमयी शोभें शाश्वत।
उनगृह में प्रतिमाएँ इक सौ आठ प्रमाण सभी में नित॥
अकृत्रिम जिनबिम्ब मनोहर उनको मुद से नमूँ सदा।
शिवसुख विभव प्राप्ति के हेतू षट् जिन मंदिर नमूँ मुदा॥ ३॥

विदेहदेशस्थितषोडशेषु, वक्षारशैलेषु जिनालया: स्यु:।
तत्र स्थितास्ता: प्रतिमा: प्रवंदे, भवाग्निशान्त्यै शिरसा त्रिसंध्यं॥४॥

पूर्व और पश्चिम विदेह के शुभ वक्षार गिरि षोडश।
उन पर षोडश जिनमंदिर हैं अकृत्रिम रत्नों के शुभ॥
उनमें राजित जिनवर प्रतिमा को वंदूँ त्रयकाल मुदा।
भव भय अग्नि शांत करने को, शिर नत हो मैं नमूँ सदा॥४॥

ये प्राग्विदेहेषु सुपश्चिमेषु, द्विषोडशप्राकृतिका: सुदेशा:।
सर्वेषु मध्ये विजयार्धशैला:, तत्रस्थजैनेन्द्रगृहाणि वंदे॥५॥

पूर्वापर बत्तिस विदेह में बत्तिस रजताचल पर्वत।
उन पर बत्तिस जिन चैत्यालय अकृत्रिम शोभें संतत॥
उनमें राजित जिनवर प्रतिमा भक्ति भाव से वंदूँ मैं।
भव संताप नाश मम होवे त्रिकरणशुचि से अर्चूं मैं॥ ५॥

ऐरावते यौ भरतेऽपि कांतौ रूप्याचलौ द्वौ च तयो: जिनानां।
निकेतने तत्र जिनेश्वरार्चा:, मन: प्रसत्यै किल ता: प्रमौमि॥६॥

भरतक्षेत्र अरु ऐरावत में दो विजयारध पर्वत हैं।
उन पर जिन मंदिर दो राजें भावभक्ति से वंदूँ मैं॥
उन मंदिर में जिनवर प्रतिमा वंदन करूँ सदा शुचि से।
मन प्रसन्नता हेतु नमूँ मैं, भव दु:ख नाश करूँ झट से॥६॥

जम्बूद्रुमे शाल्मलिशाखिनि द्वौ, चैत्यालयौ तौ प्रणमामि नित्यं।
तत्रस्थचैत्यानि शिवांतकानां, संस्तौमि भक्त्या भवदु:ख शान्त्यै॥ ७॥

जम्बूशाल्मलि दो वृक्षों पर दो जिन चैत्यालय शाश्वत।
उनमें जिनवर की प्रतिमाएँ रत्नमयी शोभें नित प्रति॥

भवदुःख अंतक जिनवर के प्रतिबिम्ब उन्हें मैं नमूँ सदा।
भवदुःख शांति हेतु भक्ती से सतत संस्तवन करूँ मुदा॥ ७॥

मेरौ षोडशशैले, गजदंते ये चतुप्रमाः जिननिलयाः।
कुलशैले षड् मान्या, विदेहजे वक्षारगिरिषु ते षोडश॥ ८॥

मेरु सुदर्शन के षोडशजिनगृह गजदंत गिरि के चार।
कुलगिरि के षट् कहे विदेह क्षेत्र के षोडशगिरि वक्षार॥ ८॥

रूप्याद्रिचतुस्त्रिंशत्, तेषु गृहाः जम्बूद्रौ शाल्मलिवृक्षे।
एतान् सर्वान् मान्यान्, अष्टासप्ततिजिनालयान् प्रणमामि॥ ९॥

रजताचल के चौंतीस जिनगृह जम्बू शाल्मलि के दो जान।
ये सब अट्ठत्तर चैत्यालय उनको नमूँ सदा सुखदान॥ ९॥

मुनिवंदित-पादसरोज-युगं, सुरनायकनागनरेन्द्र-नुतं।
अकृतं भुवनत्रयजैनगृहं, प्रणपामि मनः शुद्धयै सततं॥ १०॥

मुनिगण वंदित पाद सरोरुह सुरपति नाग नरेन्द्र नुतं।
त्रिभुवन जिनगृह शाश्वत जितने मनःविशुद्धि हेतु प्रणमन॥ १०॥

विविधैः शुभमंगलवस्तुयुतै, घटमंगलतोरण धूपघटैः।
शुशुभे जिनसद्म सदानुपमं, प्रणमामि मनःशुद्धयै सततं॥ ११॥

मंगल द्रव्यविविध तोरण घट धूप कुम्भ मंगल शोभें।
मणिमाला से अनुपम जिनगृह मनःशुद्धिकृत प्रणमूँ मैं॥११॥

अनुष्टुप्—चतुर्विंशतितीर्थेशा, भारते वृषभादयः।
ऐरावतेऽपि ये जातास्तेभ्यो नित्यं नमोऽस्तु मे॥
सीमंधरादिचत्वारो, जिनेंद्रास्तान् नमाम्यहं।
वर्तमानान् विदेहेषु, केवलिनो मुनयश्च तान्॥ १२॥

भरतक्षेत्र में वृषभ आदि चौबिस तीर्थंकर का वंदन।
ऐरावत में भी चौबिस ही उनको मेरा नित्य नमन॥
विदेहक्षेत्र में सीमंधर युगमंधर बाहु सुबाहु जिन।
वर्तमान केवलि श्रुतिकेवलि ऋषिगण आदिक उन्हें नमन॥ १२॥

जम्बूद्वीपेऽत्र यावन्तोऽर्हद्गणभृद्यतीश्वराः।
सिद्धाःसिद्ध्यंति सेत्स्यंति, तान् तत्क्षेत्राणि च स्तुवे॥
पंचकल्याणमेदिन्यः, सातिशयस्थलानि च।
वंदे कृताकृतांश्चापि, जिनचैत्यजिनालयान्॥ १३॥

जम्बूद्वीप में जितने भी तीर्थंकर गणधर औ यतिगण।
सिद्ध हुये होते औ होंगे उन्हें उन क्षेत्रों को भि नमन॥
पंचकल्याणक भूमि तथा अतिशययुत क्षेत्र सभी प्रणमूँ।
कृत्रिम अकृत्रिम जिनप्रतिमा जिनगृह को भी मैं नित्य नमूँ॥१३॥

अंतातीता जिनवरगृहा धातकी-पुष्करार्धे—
ष्विष्वाकारे सुरुचकगिरौ मानुषांके प्रभूता:॥
पूज्या ये कुण्डलगिरिवरे द्वीपनंदीश्वरे च।
तत्रस्थान् तान् प्रतिदिनमहं जैनगेहान् प्रवंदे॥ १४॥

धातकि पुष्करार्ध द्वीपों में इष्वाकार गिरी ऊपर।
मनुजोत्तर नगपर जिनगृह हैं नंदीश्वर वर द्वीप रुचिर॥
रुचकगिरी कुंडलपर्वत पर जितने जिन मंदिर राजें।
उन मंदिर के जिनबिम्बों को वंदू पाप तिमिर भाजें॥ १४॥

ये त्रैलोक्ये भवनभुवने व्यंतरे स्वर्गलोके।
ज्योतिर्लोके जिनवरगृहा: संति विभ्राजमाना:॥
एते सर्वे भुवनमहिता: साधुवृन्दै: सुवंद्या।
दद्युर्मह्यं जिनसुगुणसंपत् सदा तांश्च वंदे॥ १५॥

त्रिभुवन में जो भवनवासि व्यंतर ज्योतिषगृह स्वर्गों में।
श्री जिनवरगृह शोभित होतें उनमें प्रतिमा अगणित हैं॥
ये सब त्रिभुवन पूज्य जिनालय साधुगणों से वंदित हैं।
वंदूँ सबके सदा मुझे वे जिनगुण संपत्ति देवें॥ १५॥'

नमोऽस्तु जिनमूर्तये सकलतापविच्छित्तये।
नमोऽस्तु जिनमूर्तये सकलदोष संशुद्धये॥
नमोऽस्तु जिनमूर्तये सकलसौख्य-संसिद्धये।
पुनीहि जिनदेव! मां भवभयात् हि रक्षां कुरु॥ १६॥

नमोऽस्तु जिन प्रतिमा को मेरा सकल ताप विच्छेद करो।
नमोऽस्तु जिन प्रतिमा को मेरा सकल दोष से शुद्ध करो॥
नमोऽस्तु जिन प्रतिमा को मेरा सकल सौख्य संसिद्धि करो।
हे जिनदेव! पवित्र करो मम भव से रक्षा झटिति करो॥ १६॥

नमोऽस्तु जिनसद्मने त्रितयलोक-संपदभृते।
नमोऽस्तु परमात्मने सकललोकचूडामणे॥

नमोऽस्तु जिनमूर्तये सकलदोष विच्छित्तये।
पुनीहि मम रागमोहसहितं मनोऽज्ञानवत्॥ १७॥

नमोऽस्तु अकृत्रिम जिन मंदिर तीन लोक संपदभर्ता।
नमोऽस्तु परमात्मन्! परमेष्ठिन्! सकललोक चूड़ामणिनाथ॥
नमोऽस्तु जिन प्रतिमा को मेरा सकल दोष विच्छेद करो।
राग मोह युत मम अज्ञानवान् मन झटिति पवित्र करो॥ १७॥

जम्बूद्वीपस्तुतिर्भक्त्या, क्रियते नियतं मुदा।
भूयात् सा मेऽचिरायार्हज्ज्ञानमत्यै श्रियै ध्रुवं॥१८॥

जम्बूद्वीप जिनालय संस्तुति, भक्ति से मैं करूँ मुदा।
अर्हत् "ज्ञानमती" श्री मुझको होवे झटिती कर्मभिदा॥१८॥

अंचलिका

इच्छामि भंते! जंबूदीव भत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्स आलोचेउं, इमम्हि पढमे जंबूदीवम्हि मंदरसेले गजदंत— वक्खाररूप्प— कुलपव्वदेसु जंबूसालमलिरुक्खेसु दो भरहेरावएसु बत्तीसविदेहेसु चउत्तीस-कम्मभूमीसु अज्जखंडेसु किट्टिमाकिट्टिमाणं सव्वजिणायदणाणं, तित्थयर-सामण्ण-केवली-गणहर-सुदकेवली-विविध-रिद्धिजुत्तरिसि-मुणिजइअणगाराणं संततविहरमाण-सीमंधरादिचउाजणिंदाणं पंचकल्लाणभूमि-अइसयखेत्ताणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

भगवन्! जंबूद्वीप भक्ति का कायोत्सर्ग किया उसके।
आलोचन करने की इच्छा करना चाहूँ मैं रुचि से॥
जंबूद्वीप प्रथम यह इसमें मंदरगिरि गजदंताचल।
रूपाचल वक्षार कुलाचल जंबू तरु शाल्मलि तरुवर॥
इनमें शाश्वत जिनगृह विदेह बत्तिस दो भरतैरावत।
चौंतीस कर्मभूमि के आर्यखंड में जिनगृह नर सुरकृत॥
तीर्थंकर केवलि गणधर श्रुतकेवली विविध ऋद्धि के ईश।
ऋषि मुनि यति अनगार तथा सीमंधर आदि चार तीर्थेश॥
कर्मभूमि में पंच कल्याणक क्षेत्र व अतिशय क्षेत्र बहुत।
इन सबको मैं अर्चूं पूजूँ वंदन करूँ नमूँ नित प्रति॥
दुःखों का क्षय कर्मों का क्षय होवे बोधि लाभ होवे।
सुगति गमन हो समाधिमरणं मम जिनगुणसंपत्ति होवे॥

इति जम्बूद्वीप विधान मंडपान्तः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अथ रक्षाविधिः

अर्हंतो मंगलं कुर्युः, सिद्धाः कुर्युश्च मंगलम्।
आचार्याः पाठकाश्चापि, साधवो मम मंगलम्॥ १॥
जिनार्चाः जिनगेहाश्चा-कृताः जिनागमाः।
जिनधर्मोऽप्यमीः सर्वे, कुर्वंतु मम मंगलम्॥ २॥
सिद्धान् ध्यात्वा मनोब्जेऽहं, प्रागेवास्मद् विधानतः।
रक्षाविधिं विधास्येऽस्य, निर्विघ्न-परिपूर्तये॥ ३॥

इति मंडलस्योपरि दशदिक्षु च जिनयज्ञपूर्तिपर्यंतरक्षार्थं परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जंबूद्वीपाधिपो यक्षोऽनावृतो यक्षिणीयुतः।
सोऽत्रागच्छ त्वमागच्छ, यज्ञभागं गृहाण च॥
जिनभाक्तिकवात्सल्यात्, विघ्नान् सर्वान् जहि त्वरम्।
जम्बूद्वीपेऽत्र सर्वत्र, विहरन सर्वं शिवं कुरु॥१॥ युग्मं॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सिद्धाणं जंबूद्वीपरक्षक! हे अनावृतयक्ष! स्वपरिवारसमेत! अत्र आगच्छ आगच्छ परिपुष्पांजलिः।

हे यक्ष! तुभ्यं इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां प्रतिगृह्यतां इति स्वाहा। अर्घ्यं।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सिद्धाणं जंबूद्वीपरक्षक! हे अनावृतयक्ष! स्वपरिवारसमेत! अत्र तिष्ठ तिष्ठ सर्वविघ्नान् स्फोटय स्फोटय सहस्र-खंडान् कुरु कुरु सर्वं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा। परिपुष्पांजलिः।

जबूंद्वीपस्य पूर्वस्मिन्, द्वारे विजयनामके।
रक्षको विजयो देवः, त्वमेहि रक्ष पूजकान्॥ २॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्वद्वाररक्षक! हे विजयदेव! स्वपरिवारेण सह अत्र आगच्छ आगच्छ, तिष्ठ तिष्ठ, परिपुष्पांजलिः।

इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं चंदनं अक्षतं पुष्प चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यंज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां प्रतिगृह्यतां इति स्वाहा। अर्घ्यं।

वैजयंतो महाद्वारो, जबूंद्वीपस्य दक्षिणे।
त्वं यक्ष! वैजयंताख्य! एह्यत्र रक्ष रक्ष भोः॥ ३॥

ॐ ह्रीं अर्हं दक्षिणद्वार रक्षक! हे वैजयंतदेव! स्वपरिवारेण सह अत्र आगच्छ आगच्छ, तिष्ठ तिष्ठ, परिपुष्पांजलिः।

इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञ-भागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां प्रतिगृह्यतां इति स्वाहा। अर्घ्यं।

जयंताख्यो महाद्वारो, जबूंद्वीपस्य पश्चिमे।
जयंतनाम हे देव! त्वमत्रागच्छ रक्ष भोः॥ ४॥

ॐ ह्रीं अर्हं पश्चिमद्वाररक्षक! हे जयंतदेव! स्वपरिवारेण सह अत्र आगच्छ आगच्छ, तिष्ठ तिष्ठ, परिपुष्पांजलिः।

इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञ-भागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां प्रतिगृह्यतां इति स्वाहा। अर्घ्यं।

द्वारोऽपराजिताख्योऽयं, जबूंद्वीपे ह्युदग्दिशि।
कुरु सर्वं शुभं यक्ष! अपराजित! एहि भोः॥ ५॥

ॐ ह्रीं अर्हं उत्तरद्वाररक्षक! हे अपराजितदेव! स्वपरिवारेण सह अत्र आगच्छ आगच्छ, तिष्ठ तिष्ठ, परिपुष्पांजलिः।

इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञ-भागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां प्रतिगृह्यतां इति स्वाहा। अर्घ्यं।

पद्मद्रहाम्बुजस्था या, सेवते जिनमातरम्।
आकारयामि तां प्रीत्या, पूजायां सपरिच्छदां॥ ६॥

ॐ ह्रीं अर्हं हिमवत्पर्वतमध्यस्थितपद्मद्रहकमलनिवासिनि! श्री देवि! स्वपरिवारैः सह अत्र एहि एहि तिष्ठ तिष्ठ परिपुष्पांजलिः।

इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञ-भागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां प्रतिगृह्यतां इति स्वाहा। अर्घ्यं।

महापद्मद्रहाब्जस्था, ह्रीदेवी जिनमातरम्।
सेवते परया भक्त्या, यज्ञेऽस्मिन् आह्वायामि ताम्॥ ७॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाहिमवत्पर्वतमध्यस्थितमहापद्मद्रहकमलनिवासिनि! ह्री देवि! स्वपरिवारैः सह अत्र एहि एहि तिष्ठ तिष्ठ परिपुष्पांजलिः।

इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञ-भागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां प्रतिगृह्यतां इति स्वाहा। अर्घ्यं।

तिगिञ्छद्रह-कंजस्था, धृतिदेवी स्ववैभवैः।
जिनयज्ञ इहागत्य, धर्मप्रीतिं प्रदर्शय॥ ८॥

ॐ ह्रीं अर्हं निषधपर्वतमध्यस्थिततिगिञ्छद्रहकमलनिवासिनि! धृति देवि! स्वपरिवारैः सह अत्र एहि एहि तिष्ठ तिष्ठ परिपुष्पांजलिः।

इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञ-भागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां प्रतिगृह्यतां इति स्वाहा। अर्घ्यं।

शांतिधारा

ॐ नमः सिद्धेभ्यः। श्री वीतरागाय नमः। ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पार्श्वतीर्थंकराय द्वादशगणपरिवेष्टिताय, शुक्लध्यानपवित्राय, सर्वज्ञाय, स्वयंभुवे, सिद्धाय, बुद्धाय, परमात्मने, परमसुखाय, त्रैलोक्यमहीव्याप्ताय, अनन्तसंसारचक्रपरिमर्दनाय, अनन्तदर्शनाय अनंतज्ञानाय, अनन्तवीर्याय, अनन्तसुखाय, सिद्धाय, बुद्धाय, त्रैलोक्यवशङ्कराय, सत्यज्ञानाय, सत्यब्रह्मणे, धरणेन्द्रफणामण्डलमण्डिताय, ऋष्यार्यिका-श्रावक-श्राविकाप्रमुख- चतुस्संघोपसर्ग-विनाशनाय, घातिकर्मविनाशकाय, अघातिकर्मविनाशनाय, अपवायं छिंद छिंद, भिंद भिंद। मृत्युं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। अतिकामं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। रतिकामं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। क्रोधं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। अग्निं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वशत्रुं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वोपसर्गं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वविघ्नं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वभयं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वराजभयं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वचौरभयं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वदुष्टभयं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वमृगभयं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वमात्मचक्रभयं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वपरमंत्रं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वशूलरोगं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वक्षयरोगं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वकुष्ठरोगं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वक्रूररोगं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वनरमारीं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वगजमारीं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वाश्वमारीं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वगोमारीं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वमहिषमारीं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्तधान्यमारीं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्ववृक्षमारीं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वगलमारीं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वपत्रमारीं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वपुष्पमारीं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वफलमारीं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वराष्ट्रमारीं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वदेशमारीं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वविषमारीं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्ववेतालशाकिनीभयं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्ववेदनीयं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वमोहनीयं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द। सर्वकर्माष्टकं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द।

ॐ सुदर्शन-महाराज-चक्रविक्रमतेजोबलशौर्यवीर्यशांतिं कुरु कुरु। सर्वजनानन्दनं कुरु कुरु। सर्वभव्यानन्दनं कुरु कुरु। सर्वगोकुलानन्दनं कुरु कुरु।

सर्वग्रामनगरखेटकर्वटमटंबपत्तनद्रोणमुखसंवाहानंदनं कुरु कुरु। सर्वलोकानन्दनं कुरु कुरु। सर्व देशानन्दनं कुरु कुरु। सर्व यजमानानन्दनं कुरु कुरु। सर्व दुःखं, हन हन, दह दह, पच पच, कुट कुट, शीघ्रं शीघ्रं।

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु व्याधिर्व्यसनवर्जितं।
अभयं क्षेममारोग्यं स्वस्तिरस्तु विधीयते॥

शिवमस्तु। कुलगोत्रधनधान्यं सदास्तु। चन्द्रप्रभ-वासुपूज्यमल्लिवर्द्धमान पुष्पदन्त शीतल-मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ इत्येभ्यो नमः।

(इत्यनेन मन्त्रेण नवग्रहशान्त्यर्थं गन्धोदकधारावर्षणम्॥)

(गन्धोदकवन्दनमंत्रः)

निर्मलं निर्मलीकारं, पवित्रं पापनाशनम्।
जिनगन्धोदकं वन्दे कर्माष्टकनिवारणम्॥

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते प्रक्षीणाशेषदोषकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये नमः श्री शांतिनाथाय शांतिकराय सर्वपापप्रणाशनाय सर्वविघ्नविनाशनाय सर्वरोगोपसर्गाप-मृत्यु- विनाशनाय सर्वपरकृतक्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्वक्षामडामरविनाशनाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अर्हं नमः सर्वशांतिं कुरु कुरु वषट् स्वाहा।

। इति महाशांतिमंत्र।

इस जबूंद्वीप में जिनमंदिर, कृत्रिम अकृत्रिम जितने हैं।
तीर्थंकर केवलि सर्व साधु, उन सबको मेरा वंदन है॥ ३॥
ॐ ह्रीं जबूंद्वीपसंबंधि-कृत्रिमाकृत्रिम-जिनालय-जिनबिंब-तीर्थंकरकेवलिसर्व-साधुभ्यः अक्षतं.....।

कुवलय बेला वर मौलसिरी, मचकुन्द कमल ले आया हूँ।
शृंगार हार कामारिजयी, जिनवर पद भजने आया हूँ॥इस०॥ ४॥
ॐ ह्रीं जबूंद्वीपसंबंधि-कृत्रिमाकृत्रिम-जिनालय-जिनबिंब-तीर्थंकरकेवलिसर्व-साधुभ्यः पुष्पं.....।

मोदक फैनी घेवर ताजे, पकवान बनाकर लाया हूँ।
निज आतम अनुभव चखने को, नैवेद्य चढ़ाने आया हूँ॥इस०॥ ५॥
ॐ ह्रीं जबूंद्वीपसंबंधि-कृत्रिमाकृत्रिम-जिनालय-जिनबिंब-तीर्थंकरकेवलिसर्व-साधुभ्यः नैवेद्यं.....।

दीपक ज्योति के जलते ही, अज्ञान अंधेरा भगता है।
इस हेतु से दीपक पूजा, करते ही ज्ञान चमकता है॥इस०॥ ६॥
ॐ ह्रीं जबूंद्वीपसंबंधि-कृत्रिमाकृत्रिम-जिनालय-जिनबिंब-तीर्थंकरकेवलिसर्व-साधुभ्यः दीपं.....।

धूपायन में वर धूप खेय, दशदिश में धूम उठे भारी।
बहु जनम जनम संचित भी, दुःखकर सब कर्म जले भारी॥इस०॥७॥
ॐ ह्रीं जबूंद्वीपसंबंधि-कृत्रिमाकृत्रिम-जिनालय-जिनबिंब-तीर्थंकरकेवलिसर्व-साधुभ्यः धूपं.....।

वर आम बिजौरा नींबू औ, गन्ना मीठा ले आया हूँ।
शिव कांता सत्वर वरने की, बस आशा लेकर आया हूँ॥इस०॥ ८॥
ॐ ह्रीं जबूंद्वीपसंबंधि-कृत्रिमाकृत्रिम-जिनालय-जिनबिंब-तीर्थंकरकेवलिसर्व-साधुभ्यः फलं.....।

जल चंदन अक्षत फूल चरू, वर दीप धूप फल लाया हूँ।
तुम चरणों अर्घ चढ़ा करके, भव संकट हरने आया हूँ॥इस०॥ ९॥
ॐ ह्रीं जबूंद्वीपसंबंधि-कृत्रिमाकृत्रिम-जिनालय-जिनबिंब-तीर्थंकरकेवलिसर्व-साधुभ्यः अर्घ्यं.....।

सोरठा

क्षीरोदधि समश्वेत, उज्ज्वल जल ले भृंग में।
श्री जिन चरण सरोज, धारा देते भव मिटे॥ १०॥
शांतये शांतिधारा।

सुरतरु के सुम लाय, प्रभु पद में अर्पण करूँ।
कामदेव मद नाश, पाऊँ आनन्द धाम मैं॥ ११॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा

परम ज्योति परमात्मा, सकल विमल चिद्रूप।
जिनवर गणधर साधुगण, नमूँ-नमूँ निजरूप॥ १॥

शंभुछंद

जय-जय सुमेरुगिरि के जिनगृह, सोलह शाश्वत हैं रत्नमयी।
जय-जय जिनमंदिर चारों ही, गजदंत गिरी के स्वर्णमयी॥
जय-जय जंबूतरु शाल्मलि के, दो जिनमंदिर महिमाशाली।
जय-जय वक्षार गिरी के भी, सोलह जिनगृह गरिमाशाली॥ २॥

जय-जय चौंतिस विजयार्ध के, चौंतिस जिन मंदिर सुखकारी।
जय-जय छह कुल पर्वत के भी, छह जिनगृह भव-भव दुःखहारी॥
ये जंबूद्वीप के अट्ठत्तर, जिन मंदिर अकृत्रिम सुन्दर।
प्रति जिनगृह में जिन प्रतिमायें, हैं इकसौ आठ कहीं मनहर॥ ३॥

मेरु के पांडुक वन में चउ, विदिशा में चार शिलायें हैं।
तीर्थंकर के जन्माभिषेक से, पावन पूज्य शिलायें हैं॥
इस भरत और ऐरावत में होते हैं चौबिस तीर्थंकर।
केवलि श्रुत केवली गणधर मुनि साधुगण होते क्षेमंकर॥ ४॥

उनके कल्याणक से पवित्र पृथ्वी पर्वत भी तीर्थ बने।
जो उनकी पूजा करते हैं उनके मनवांछित कार्य बने॥
बत्तीस विदेह के तीर्थंकर सीमंधर युगमंधर स्वामी।
बाहु सुबाहु जिन विहरमाण केवल ज्ञानी अन्तर्यामी॥ ५॥

इन सर्व विदेहों में संतत, तीर्थंकर होते रहते हैं।
केवल ज्ञानी चारण ऋद्धि मुनिगण वहाँ विचरण करते हैं॥

आकाश गमन करने वाले, ऋषिगण मेरू पर जाते हैं।
निज आत्म सुधारसस्वादी भी, जिन वंदन कर हर्षाते हैं॥ ६॥

इस जंबूद्वीप के अट्ठत्तर शाश्वत जिन मंदिर को वंदन।
जितने भी कृत्रिम जिनगृह हों उन सबको भी शत-शत वंदन॥
जितने तीर्थंकर हुए यहाँ, हो रहे और भी होवेंगे।
उन सबको मेरा वंदन है, वे मेरा कलिमल धोवेंगे॥ ७॥

आचार्य उपाध्याय साधूगण जो भी उन कर्म भूमियों में।
चिन्मय आत्मा को ध्याते हैं सुस्थिर होकर निज आत्मा में॥
वे घाति चतुष्टय घात पुनः अर्हंत अवस्था पाते हैं।
इस कर्मभूमि से ही फिर वे, भगवान सिद्ध बन जाते हैं॥ ८॥

ॐ ह्रीं जबूंद्वीपसंबंधि-कृत्रिमाकृत्रिम-जिनालय-जिनबिंब-तीर्थंकरकेवलिसर्व-साधुभ्यः जयमाला अर्घ्यं....।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिनचैत्य चैत्यालय तथा जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर यहाँ पर कभी ना आवते॥१॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० २]

जम्बूद्वीपसम्बन्धि भरतक्षेत्रस्थ भूतकालीन तीर्थंकर पूजा

स्थापना—गीताछंद

जम्बूद्रुमांकितप्रथम जम्बूद्वीप में दक्षिण दिशी।
वर भरत क्षेत्र प्रधान तहँ षट्काल वर्तें नितप्रती॥
जहँभूतकाल चतुर्थ में चौबीस तार्थंकर भये।
थापूँ यहाँ वर भक्ति पूजन हेतु मन हर्षित भये॥ १॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—चाल-नंदीश्वरपूजा

जिनवचसम शीतल नीर कंचन भृंग भरूँ ।
जिनचरणांबुज में धार दे जगद्वंद्व हरूँ ॥
इस भरत क्षेत्र के भूत कालिक तीर्थंकर ।
मैं पूजूँ भक्तिसमेत होऊँ क्षेमंकर ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं . . . ।

जिनतनुसम सुरभित गंध , सुवरण पात्र भरूँ ।
जिनचरण सरोरुह चर्च , भव संताप हरूँ ॥इस० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं . . . . ।

जिनगुणसम उज्ज्वल धौत अक्षत थाल भरे ।
जिनचरण निकट धरपुंज , अक्षय सौख्य भरे ॥इस० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बधिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं . . . . ।

जिनयश सम सुरभित श्वेत , कुंद गुलाब लिये ।
मदनारिजयी जिनपाद , पूजूँ हर्ष हिये ॥इस० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं . . . ।

जिनवचनामृत सम शुद्ध व्यंजन थाल भरे ।
परमामृत तृप्त जिनेन्द्र पूजत भूख टरे ॥इस० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं . . . . ।

वर भेदज्ञानसम ज्योति , जगमग दीप लिये ।
जिनपद पूजत ही होत , ज्ञानउद्योत हिये ॥

इस भरत क्षेत्र के भूत कालिक तीर्थंकर।
मैं पूजूँ भक्तिसमेत होऊँ क्षेमंकर॥ ६॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं....।

दशगंध सुगंधित धूप खेवत कर्म जरें।
निजआतम सौरभ नित्य दशदिश माहिं भरें॥इस०॥ ७॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं....।

जिनध्वनि सम मधुर रसाल आम अनार भले।
जिनपद पूजत तत्काल फल सर्वोच्च मिले॥इस०॥ ८॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं....।

जल चंदन अक्षत पुष्प, नेवज दीप लिया।
वर धूप फलों से युक्त, अर्घ्य समर्घ्य किया॥इस०॥ ९॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....।

सोरठा

तीर्थंकरपरमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा।
चउसंघशांती हेतु, शांतीधारा मैं करूँ॥
शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

पंचकल्याणक के धनी, तीर्थंकर चौबीस।
अर्चनहित पुष्पांजली, करूँ नमाऊँ शीश॥ १॥
इति मंडलस्योपरि प्रथमदले पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अडिल्ल छंद

कर्मनाश निर्वाण महालक्ष्मी वरी।
तीर्थंकर निर्वाण सौख्य अमृत झरी॥
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय चित्त हरषाय के।
तिरुँ भवाम्बुधि भक्ति नौका पायकै॥ १॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनिर्वाणजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

भवसागर तिरकर भी सागर सिद्ध हैं।
मुनिगण वन्दे नितप्रति हर्ष समृद्ध हैं॥पूजूँ०॥ २॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसागरजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

'महासाधु' मिल नित्य प्रभूवंदन करें।
ऐसे महासाधु जिनवर भव दुख हरें॥पूजूँ०॥ ३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहासाधुजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

त्रिविधकर्ममल नाश विमल पद पा लिये।
तीर्थंकर 'विमलप्रभ' को नित वंदिये॥पूजूँ०॥ ४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविमलप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

लक्ष्मी अंतर बाह्य उभय से शोभते।
'श्रीधर' वरजिनराज भविकमन मोहते॥पूजूँ०॥ ५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधरजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

मोक्षगतीप्रद 'श्री सुदत्त' जिनराज हैं।
मुनिगण गणधर वंदित जग सिरताज हैं॥पूजूँ०॥ ६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुदत्तजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

मोक्षमहल है अमल कांतिधर सोहता।
श्री जिनेश 'अमलप्रभ' से मन मोहता॥पूजूँ०॥ ७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअमलप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

भव्यजनों का नित करते उद्धार जो।
'उद्धर' जिन को जजूँ भवोदधि पार जो॥पूजूँ०॥ ८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीउद्धरजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

'अंगिर' जिनवर भव भव दुख से दूर हैं।
भवि भव अग्नी शमन हेतु जल पूर हैं॥पूजूँ०॥ ९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअंगिरजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

'सन्मति' जिनवर जग को सन्मति दे रहे।
निज भक्तों की नौका भव से खे रहे॥
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय चित्त हरषाय के।
तिरुँ भवाम्बुधि भक्ति नौका पायकै॥ १०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसन्मतिजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

'सिंधुजिनेश्वर' गुणसिंधू जग में कहे।
जो पूजें सो स्वात्मसुधा बिंदू लहें॥पूजूँ०॥ ११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसिन्धुजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

'कुसुमांजलि' जिननाथ भविकजन दुःख हरें।
भक्ति कुसुम अंजलि से जन अर्चन करें॥पूजूँ०॥ १२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकुसुमांजलिजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

शिवसुखभर्त्ता 'शिवगण' जिनवर लोक में।
शिवसुख साधन हेतु जजें जन धोक दें॥पूजूँ०॥ १३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशिवगणजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

श्री 'उत्साह' जिनेश्वर गुणरत्नों भरें।
निजसुख के उत्साही जन पूजन करें॥पूजूँ०॥ १४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीउत्साहजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

प्रभु 'ज्ञानेश्वर' पूर्णज्ञान के नाथ हैं।
जो पूजें धर प्रीती बनें सनाथ हैं॥पूजूँ०॥ १५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीज्ञानेश्वरजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

परमपिता 'परमेश्वर' त्रिभुवन ईश हैं।
गणधर भी नित नमें नमावें शीश हैं॥पूजूँ०॥ १६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपरमेश्वरजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

'विमलेश्वर' तीर्थंकर को जो पूजते।
उन आतंम से सकल कर्ममल छूटते॥पूजूँ०॥ १७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविमेलश्वरजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

जिनकी यशवल्ली तिहूँजग में विस्तरी।
नाथ 'यशोधर' को मैं वंदूँ शुभघरी॥पूजूँ०॥ १८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीयशोधरजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

'कृष्ण' जिनेश्वर कृतस्न कर्म को चूर के।
पहुँचे शिवपुर धाम सर्वगुण पूर के॥पूजूँ०॥ १९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकृष्णजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

तीर्थंकर का नाम 'ज्ञानमति' जानिये।
उनको पूजत ज्ञान अतीन्द्रिय ठानिये॥पूजूँ०॥ २०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीज्ञानमतिजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

नाथ 'शुद्धमति' तीर्थंकर भवमल हरें।
उनको पूजत शुद्ध स्वात्म संपति वरें॥पूजूँ०॥ २१॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशुद्धमतिजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

जो भव्यों की भद्र करें करुणा लिये।
परमकारुणिक 'श्रीभद्र' सबके लिये॥पूजूँ०॥ २२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीश्रीभद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

सब दोषों को उलंघ नाम 'अतिक्रांत' है।
मृत्युमल्लहर, मुक्तिवल्लभाकांत हैं॥पूजूँ०॥ २३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअतिक्रांतजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

कर्मशान्त कर परमशांति को पा लिये।
शांतिजिनेश्वर शांति करो सबके लिये॥पूजूँ०॥ २४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशांतजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

गीता छंद

निर्वाण आदी शांत तीर्थंकर सुअंतिम जानिये।
पूर्णार्घ्य ले चौबीस जिनकी अर्चना विधि ठानिये॥
जो भक्ति श्रद्धा भाव से, तीर्थेश का अर्चन करें।
वे पुनर्भव को दूर कर निज आत्म का दर्शन करें॥ २५॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाणादिशांतजिनपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं.....।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्म-जिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

अनंगशेखर छंद

जयो जिनेन्द्र! आपके महान दिव्य ज्ञान में,
त्रिलोक औ त्रिकाल एक साथ भासते रहें।
जयो जिनेन्द्र! आपका अपूर्व तेज देख के,
असंख्य सूर्य और चन्द्रमा भि लाजते रहें॥ १॥
जयो जिनेन्द्र! आपकी ध्वनी अनच्छरी खिरे,
तथापि संख्य भाषियों को बोध है करा रही।
जयो जिनेन्द्र! आपका अचिन्त्य ये माहात्म्य देख,
भक्ति से प्रजा समस्त आप आप आ रही॥ २॥
जिनेश! आपकी सभा असंख्य जीव से भरी,
अनन्त वैभवों समेत भव्य चित्त मोहती।
जिनेश! आपके समीप साधु वृंद औ गणीन्द्र,
केवली मुनीन्द्र और आर्यिकायें शोभतीं॥ ३॥
सुरेंद्र देवियों कि टोलियाँ असंख्य आ रहीं,
खगेश्वरीं कि पक्तियाँ अनेक गीत गा रहीं।
कुभूमिगोचरी मनुष्य नारियाँ तमाम हैं,
पशू तथैव पक्षियों कि टोलियाँ भि आ रहीं॥ ४॥
सुबारहों सभा विषे स्वकीय ही स्वकीय में,
असंख्य भव्य बैठ के जिनेश देशना सुने।
सुतत्त्व सात नौ पदार्थ पाँच अस्तिकाय और,
द्रव्य छह स्वरूप को भले प्रकार से गुनें॥ ५॥
निजात्म तत्त्व को संभाल तीन रत्न से निहाल
बार बार भक्ति से मुनीश हाथ जोड़ते।
अनंत सौख्य में निमित्त आपको विचार के,
अनन्त दुःख हेतु ज्ञान कर्म बंध तोड़ते॥ ६॥
स्वमोह बेल को उखाड़ मृत्यु मल्ल को पछाड़,
मुक्ति अंगना निमित्त लोक शीश जा बसे।

प्रसाद सेंहि आपके अनंत भव्य जीव राशि,
आपके समान होय आप पास आ लसें॥ ७॥
असंख्य जीव मात्र दृष्टि समीचीन पाय के,
अनन्त कालरूप पंच परावर्त मेटते।
सुभक्ति के प्रभाव से असंख्य कर्मनिर्जरा,
करें अनंत शुद्धि से निजात्म सौख्य सेवते॥ ८॥

दोहा

नाथ आप गुणसिंधु हैं, को कहि पावे पार।
'ज्ञानमती' दुख मेट के, करो भवांबुधि पार॥ ९॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जयमाला-अर्घ्यं निर्वपामीति.....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीता छंद

जो भव्य जम्बूद्वीप के तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिनचैत्य चैत्यालय तथा जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से वे आत्म निधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर यहाँ पर कभी न आवते॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० ३]

जम्बूद्वीप संबंधि भरतक्षेत्रस्थ वर्तमानकालीन तीर्थंकर पूजा

स्थापना—गीताछंद

वृषभादि चौबिस तीर्थंकर इस भरत के विख्यात हैं।
जो प्रथित जंबूद्वीप के संप्रति जिनेश्वर ख्यात हैं॥
इन तीर्थंकर के तीर्थ में सम्यक्त्व निधि को पाय के।
थापूँ यहाँ पूजननिमित अतिचित्त में हरषाय के॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—स्रग्विणीछंद

देवगंगासलिल स्वर्ण झारी भरूँ।
नाथ पादाब्ज में तीन धारा करूँ॥
श्री वृषभ आदि चौबीस जिनराज को।
पूजते ही लहूँ स्वात्म साम्राज्य को॥ १ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मजरा-मृत्युविनाशनाय जलं... ।

गंध केशर घिसा के कटोरी भरूँ।
आपके पाद पंकज समर्चन करूँ॥श्रीवृषभ० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः संसार-तापविनाशनाय चंदनं. . . . ।

चन्द्र की चाँदनी सम धवल शालि हैं।
जो जजें पुँज से वे सुकृतशालि हैं॥श्रीवृषभ० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अक्षतं. . . . ।

कुंद मचकुंद बेला चमेली लिये।
कामहरनाथ पद में समर्पित किये॥श्रीवृषभ० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पुष्पं. . . . ।

पूरिका लड्डुओं से भरूँ थाल मैं।
पूजहूँ आपको क्षुध व्यथा नाशने॥श्रीवृषभ० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं. . . . ।

दीप कर्पूर की ज्योति से पूजते।
ज्ञान उद्योत हो मोह अरि छूटते॥श्रीवृषभ० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः दीपं. . . . ।

धूप दशगंध ले अग्नि में खेवते।
आत्म सौरभ उठे नाथ पद सेवते॥श्रीवृषभ० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः धूपं. . . . ।

आम अंगूर केला अनंनास ले।
नाथ पद पूजते मुक्ति संपति मिले ॥श्रीवृषभ० ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः फलं....।
तोयगंधादि वसुद्रव्य ले थाल में।
अर्घ्य अर्पण करूँ नायके भाल मैं ॥श्रीवृषभ० ॥ ९ ॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँ जग शांतीकर सदा।
चउसंघ शांती हेत, शांतीधारा मैं करूँ॥
शांतये शांतिधारा।
हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

शुद्ध बुद्ध परमातमा, पाया ज्ञान प्रभात।
परमानंद निजात्म में, मग्न रहें दिन रात ॥१ ॥
इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

नरेन्द्र छंद—(चाल-परम परंज्योति कोटि चंद्रादित्य..)

वृषभदेव के चरण कमल को, नित शत इंद्र जजें हैं।
कर्मकालिमा दूर भगाकर स्वातम तत्त्व भजे हैं॥
मैं भी दृढ़ भक्ति से पूजूँ, कर्म शृंखला टूटे।
प्रभू मुक्ती होने तक मेरा सम्यक रत्न न छूटे॥१ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवृषभजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
कर्म शत्रु को जीत अजित जिन जग में ख्यात हुये हैं।
नाथ आपका आश्रय लेकर बहुजन पार हुये हैं॥मैं० ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअजितजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

दृढ़ पुरुषार्थ सफल कर तुमने भव भयनाश किया है।
इसीलिये इंद्रो ने सार्थक, संभव नाम दिया है॥
मैं भी दृढ़ भक्ति से पूजूँ, कर्म शृंखला टूटे।
प्रभू मुक्ती होने तक मेरा सम्यक रत्न न छूटे॥ ३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसंभवजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

सब जग को आनंदित करते, अभिनंदन भगवंता।
जो जन ध्यावें हृदय कमल में, भवभय व्याधि हरंता॥मैं० ॥४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअभिनंदनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

कुमति त्याग कर सुमति वरणकर, सुमति नाम प्रभु पाया।
मुझको भी सुमती दीजै अब, मैं जग से अकुलाया॥मैं० ॥५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुमतिजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

मुक्तिपद्म से आलिंगित, पद्मप्रभु जग नामी।
जो जन पादपद्म तुम सेते, होते शिवश्री स्वामी॥मैं० ॥६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपद्मप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री सुपार्श्व के पास आयके मिटे सकल जग फिरना।
प्रभो आप वच नाव पायके, होय भवोदधि तिरना॥मैं० ॥७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुपार्श्वजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

चन्द्रनाथ तुम आस्य चन्द्र से वचनामृत झरता है।
कर्णपुटों से पीते ही तो हर्षाम्बुधि बढ़ता है॥मैं० ॥८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचन्द्रप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

गणधरगण भी प्रभु गुण गाकर पार नहीं पाते हैं।
पुष्पदंत तुम नाम मात्र से निज आनंद पाते हैं॥मैं० ॥९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपुष्पदंतजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

मोह अग्नि से झुलस रहा जग, शीतल शीतल करिये।
नाथ! शीघ्र ही भाक्तिक जनकी, सकल भरम बुधि हरिये॥मैं० ॥१०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशीतलजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री श्रेयांस जगत मैं सबको श्रेयस्कर हितकारी।
इन्द्र नरेन्द्र सभी मिल पूजें गुणगावें रुचिधारी॥मैं० ॥११॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीश्रेयोजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

वासुपूज्य वासवगण पूजित, वसुगुण मुख्य धरे हैं।
सुरकिन्नरियाँ वीणा लेके, प्रभु गुण गान करे हैं॥मैं० ॥१२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
भावकर्ममल द्रव्य कर्ममल, धोकर विमल हुये हैं।
विमलधाम हेतू मुनिगण भी, तुम पदलीन हुये हैं॥मैं॥१३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविमलजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
भव अनंत का सर्वनाश कर, नाथ अनंत सुखी हैं।
तुम पद पंकज जो भवि पूजे, होते पूर्ण सुखी हैं॥मैं० ॥१४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
धर्मचक्रधर धर्मजिनेश्वर, दशविध धर्मप्रदाता।
मुनिगण सुरगण विद्याधर गण, वंदत पावें साता॥मैं० ॥१५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्मनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
शांतिनाथ तुम पद आश्रय ले, भविजन शांती पाते।
इसी हेतु जग से अकुलाकर, तुम शरणागत आते॥मैं० ॥१६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
चिच्चैतन्य सुधारस दाता, कुन्थुनाथ भगवंता।
जो तुम वंदे भव दुख खण्डे, चित्सुख आश धरंता॥मैं०॥१७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकुंथुनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
अरजिनवर का वंदन करके, सुरनर पुण्य कमाते।
निजकर में निजगुण संपति ले, सब दुख दोष गंवाते॥मैं० ॥१८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअरनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
काममल्ल औ मोहमल्ल को, मृत्युमल्ल को चूरा।
मल्लिनाथ ने भक्तजनों के, मनवांछित को पूरा॥मैं० ॥१९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमल्लिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
मुनिसुव्रत भगवान स्वयं में, मुनिव्रतधर भवजीता।
उनके पदचिह्नों पर चलके, अगणित ने यम जीता॥मैं० ॥२०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमुनिसुव्रतजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
रत्नत्रयनिधि के स्वामी हैं, नमितीर्थंकर जग में।
फिर भी सर्व परिग्रह विरहित, मुद्रानग्न प्रगट में॥मैं० ॥२१॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनमिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

नेमिनाथ ने राजमती तज, मुक्ति बल्लभा चाही।
सरस्वती माता ने उनकी, अनुपम कीर्ती गाई॥
मैं भी दृढ़ भक्ती से पूजूँ, कर्म शृंखला टूटे।
प्रभू मुक्ती होने तक मेरा सम्यक रत्न न छूटे॥ २२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनेमिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

कमठ दैत्य के उपसर्गों से, परमसहिष्णु कहाये।
पारस नाम मंत्र मनधारे, सहनशक्ति वे पायें॥मैं० ॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

वर्धमान अतिवीर वीर प्रभु, सन्मति नाम तुम्हारे।
महावीर प्रभु को जो वन्दे, सकल अमंगल टारें॥मैं० ॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहावीरजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य

वृषभदेव को आदि ले, महावीर पर्यन्त।
श्री चौबीस जिनेश को, पूजत हो भव अंत॥मैं० ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवृषभादिवर्धमानांतेभ्यः पूर्णार्घ्यं.....।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा

चिन्मयचिंतामणि रतन, तीन भुवन के ईश।
गाऊँ तुम जयमालिका, नमूँ नमूँ नत शीश॥१॥

पृथ्वी छंद

जिनेन्द्र! तुम शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अविकार हो।
जिनेन्द्र! तुम वर्णहीन बिनमूर्ति साकार हो॥
निराभरण हो तथापि जग के अलंकार हो।
अनन्त गुण पुंजभूत फिर भी निराकार हो॥२॥
अनन्त शुचिदर्श से सकल लोक आलोकते।
अनन्त वरज्ञान से सकल भव्य संबोधते॥
अनन्त निज शक्ति से श्रम न हो कदाचित् तुम्हें।
अनन्त वर सौख्य से अमित काल तृप्ती तुम्हें॥३॥

न चक्षु नहि कर्ण, घ्राण नहि स्पर्शनेन्द्रिय तुम्हें।
न जीभ अतएव जिन अतीन्द्रिय स्वसुख तुम्हें॥
न शब्द रस गंध वर्ण विषयादि स्पर्श ना।
न क्रोध मद छद्म लोभ रति द्वेष संघर्ष ना॥४॥
न कर्म नो कर्मनाथ नहि भाव कर्मादि हैं।
न बंध न हि आस्रवादि नहि शल्य बाधादि हैं॥
न रोग शोकादि नाथ नहि जन्म मरणादि हैं।
न क्लेश नहि इष्ट निष्ट वीयोग योगादि हैं॥५॥
स्वयं परम तृप्त नाथ परमैक परमातमा।
स्वयं स्वयंभू स्वतः सुख स्वरूप सिद्धातमा॥
अमूर्तिक विभो तथापि चिनमूर्ति चिंतामणी।
अपूर्व तुम कल्पवृक्ष त्रैलोक्य चूड़ामणी॥६॥
अनन्त भव सिंधु से तुरत नाथ! तारो मुझे।
अनन्त दुःख अब्धि से जिनपते! उबारो मुझे॥
प्रभो मुझ समस्त दोष अब तो क्षमा कीजिये।
'स्वज्ञानमति' नाथ शीघ्र करके कृपा दीजिये॥ ७॥

घत्ता

वृषभादि जिनेश्वर, मुक्ति वधूवर, सुख संपतिकर तुमहिं नमूँ।
निज आतम शुचिकर, सम्यक निधि धर, फेर न भव वन बीच भ्रमूँ॥ ८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थ-वर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जयमाला अर्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा जिन धर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्ण कर यहँ पर कभी ना आवते॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० ४]

जम्बूद्वीप संबंधि भरतक्षेत्रस्थ भविष्यत्कालीन तीर्थंकर पूजा

स्थापना—गीताछंद

इस भरतक्षेत्र विषे जिनेश्वर भविष्यत में होंयगे।
उनके निकट में भव्य अगणित कर्मपंकिल धोंयगे॥
चौबीस तीर्थंकर सतत वे विश्व में मंगल करें।
मैं पूजहूँ आह्वान कर मुझ सर्व संकट परिहरें॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थ-भविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थ-भविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थ-भविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं—चामरछंद

सिंधु नीर स्वच्छ स्वर्ण भृंग में भराइये।
श्री जिनेन्द्रदेवपादपद्म में चढ़ाइये॥
भाविकाल के जिनेंद्रदेव की समर्चना।
जो करेंगे वे यहाँ कभी धरेंगे जन्म ना॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थ-भविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मजरा-मृत्युविनाशनाय जलं....।

अष्टगंध लेय नाथ पाद में चढ़ाइये।
मोहताप शांति हेतु भक्ति को बढ़ाइये॥भावि०॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थ-भविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः चंदनं....।

चंद्ररश्मि के समान धौत शालि थाल में।
नाथ अग्रपुंज देय सर्व सौख्य हाल में॥भावि०॥ ३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थ-भविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अक्षतं...।

पारिजात चंपकादि पुष्प लेय पूजिये।
काममल्ल चूर के निजात्म तृप्त हूजिये ॥भावि० ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थ-भविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पुष्पं ....।

मालपूप मोदकादिव्यंजनादि लाइये।
नाथ चर्णपूज भूख व्याधि को नशाइये ॥भावि० ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थ-भविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं....।

स्वर्ण पात्र में कपूर ज्वाल आरती करूँ।
मोहध्वांत नाश भेद ज्ञान भारती वरूँ ॥भावि० ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थ-भविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः दीपं ....।

अग्निपात्र में सुगंध धूप खेवते सदा।
कर्मपुंज को जलाय पाऊँ स्वात्म संपदा ॥भावि० ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थ-भविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः धूपं ....।

दाक्ष आम औ बदाम श्री फलादि लाइये।
स्वात्मसौख्य पान हेतु आपको चढ़ाइये ॥भावि० ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थ-भविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः फलं ....।

तोयगंध अक्षतादि अष्ट द्रव्य लाइये।
अर्घ्य को चढ़ायके अखंड सौख्य पाइये ॥भावि० ॥ ९ ॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थ-भविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं ...।

सोरठा

तीर्थंकरपरमेश तिहुँजग शांतिकर सदा।
चउसंघ शांति हेत, शांतिधारा मैं करूँ ॥ १० ॥
शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून., सुरभित करते दशदिशा।
तीर्थंकर पद पद्म पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥ ११ ॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

तीर्थंकर चौबीस ये सर्वोत्तम गुणखान।
पुष्पांजलि अपर्ण करूँ पूजन हेतु प्रधान॥ १॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

गीताछंद

श्री महापद्म जिनेंद्र के पदपद्म को जो पूजते।
जगद्वन्द्व फंद निमूल कर वे सर्वदुःख से छूटते॥
भावी जिनेश्वरदेव की मैं, भक्ति से पूजा करूँ।
नव लब्धि सिद्धि हेतु प्रभु की चित्त में श्रद्धा धरूँ॥ १॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहापद्मजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

सुरदेव तीर्थंकर सभी के पापमल को धोवते।
जो नित्य ही उनको जपें वे सर्वव्याधी खोवते॥भावी०॥ २॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुरदेवजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनवर सुपार्श्व अपूर्व भास्कर हृदय का तम नाशते।
उनके अलौकिक ज्ञान में तीनों भुवन ही भासते॥भावी०॥ ३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुपार्श्वजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्रीमन् स्वयंप्रभ देव अक्षय अतुल निधि के नाथ हैं।
जो भक्ति से आराधते वे सत्यमेव सनाथ हैं॥भावी०॥ ४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीस्वयंप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

सर्वात्मभूत जिनेंद्र के पदकमल की आराधना।
गणधर मुनीश्वर नित करें बस स्वात्म हेतु साधना॥भावी०॥ ५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसर्वात्मभूतजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री देवपुत्र जिनेंद्र भावी को सभी जन पूजते।
जो ध्यान में धारें उन्हीं के कर्मशत्रु धूजते॥भावी०॥ ६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीदेवपुत्रजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

तीर्थेश श्री कुलपुत्र त्रिभुवन के शिखामणि होयंगे।
जो भव्य नित आराधते वे सर्व संकट खोयंगे॥भावी०॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकुलपुत्रजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनवर उदंक अनन्त गुणमणि रत्न भूषित होयंगे।
भवि के अनंतानंत दुःखों को तुरत ही धोयंगे॥भावी०॥ ८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीउदंकजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
श्रीमान् प्रौष्ठिल तीर्थभर्ता धर्म के कर्ता कहे।
उनके चरण को पूजते यमराज दुःखहर्ता भये॥ भावी०॥ ९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रौष्ठिलजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
जयकीर्ति की जय बोलिये सब कर्म ढीले होयंगे।
जो नाम जिनवर का न लें चिरकाल दुःख में सोयंगे॥भावी०॥ १०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजयकीर्तिजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
जिनदेव मुनिसुव्रत तुम्हारी भक्ति चिंतामणि कही।
जो माँगते हैं भक्तजन तत्काल फल देवो वही॥भावी०॥ ११॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमुनिसुव्रतजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
अरनाथ तीर्थंकर तुम्हें वंदन करें शतइंद्र भी।
किन्नर मधुर ध्वनि से सदा गुणगान उच्चरते सभी॥भावी०॥ १२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअरनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
निष्पापजिन जिनभक्ति को निष्पाप कर देते अभी।
होंगे यद्यपि ये भविष में पर दुःख सब हरते अभी॥भावी०॥ १३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनिष्पापजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
बस ये कषायें ही जगत में सर्व को दुःख दे रहीं।
जो निष्कषाय जिनेन्द्र हैं वे धन्य हैं जग में सही॥भावी०॥ १४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनिष्कषायजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
जिनवर विपुलभगवान सबके पूज्य माने विश्व में।
जो अर्चते हैं भक्ति से वे धन्य होते विश्व में॥भावी०॥ १५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविपुलजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
जिनराज निर्मल आपकी पूजा कर्म को चूरती।
आराधकों के मनोवांछित को तुरत ही पूरती॥भावी०॥ १६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनिर्मलजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
श्री चित्रगुप्त जिनेन्द्र के पद में सुरेश्वर नित नमें।
देवांगनायें भक्ति से नर्तन करें सुरसंग में॥भावी०॥ १७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचित्रगुप्तजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनवर समाधिगुप्त के पदकंज की आराधना।
आराधकों के लिये सचमुच मुक्ति की ही साधना॥
भावी जिनेश्वरदेव की मैं, भक्ति से पूजा करूँ।
नव लब्धि सिद्धि हेतु प्रभु की चित्त में श्रद्धा धरूँ॥ १८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसमाधिगुप्तजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्रीमन् स्वयंभू तीर्थकर स्वयमेव मुक्ती पायेंगे।
उन साथ में उनके उपासक भी वहीं पर जायेंगे॥भावी०॥ १९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीस्वयंभूजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनराज अनिवर्तक सकलगुण शील के भंडार हैं।
जो भव्य श्रद्धा से जजें होते भवोदधि पार हैं॥भावी०॥ २०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअनिवर्तकजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्रीमान् जय तीर्थेश जयशाली महापुण्यात्मा।
वे शुद्ध बुद्ध अपूर्व अनुपम औ अमल परमात्मा॥भावी०॥ २१॥
ॐ ह्रीं अर्हं.श्रीजयनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनवर विमल निज आत्म समरस सुधारस मय को पियें।
वे फिर अनंतानंत अनवधि काल तक सुख से जियें॥भावी०॥ २२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविमलजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री देवपाल जिनेश के गुण गण अमल जो गावते।
वे तीन जग में कीर्ति वल्ली व्याप्त कर शिव पावते॥भावी०॥ २३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीदेवपालजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

निजनाम से इस लोक में सुअनंतवीर्य विख्यात हैं।
उन नाम से हि अनंत शक्ती प्रगट हो यह ख्यात है॥भावी०॥ २४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअनंतवीर्यजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य—दोहा

भरतक्षेत्र चौबीस जिन होंगे धर्मधुरीण।
पूरण अर्घ्य चढ़ायके, होऊँ धर्म प्रवीण॥ २५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहापद्मादिअनंतवीर्यान्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं।

जाप्य—ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा

चौबीसों जिनराजवर, कल्प वृक्ष सम आप।
भुक्ति मुक्ति फल देयकर, हरो सकल संताप॥ १॥

शंभुछंद

श्रेणिक नृप महापद्म नामक पहले तीर्थंकर होवेंगे।
श्रीकृष्ण सोलवें निर्मलप्रभु नामा तीर्थंकर होवेंगे॥
महादेव अनंतवीर्यनामा अंतिम तीर्थंकर हो करके।
ये धर्म तीर्थ करनेवाले इनके गुण गाऊँ रुचि धर के॥ २॥
जय-जय तीर्थंकर त्रिभुवन पति, जय जय अनुपम गुण के धारी।
जय जय चिच्चिंतामणी आप, चिंतित वस्तू दे सुखकारी॥
जय जय अनमोल रतन जग में, तुम नाम रसायन भी माना।
जय जय तुम नाम मंत्र उत्तम, वह महौषधि भी परधाना॥ ३॥

यह महामोह अहि के विष को, गारुत्मणि बन अपहरण करे।
भव वन की जन्म लता को भी, जड़ से उखाड़ कर दहन करे॥
तुम नाम अलौकिक शक्ति वाण, मृत्यु योद्धा का घात करे।
भव भव में बन्धे कर्म शत्रु, उन सबका जड़ से नाश करे॥ ४॥

तुम नाम मंत्र अद्भुत जग में, यह शिव ललना को वश्य करे।
समरसमय अतिशय सुख देके, कर्मोदय के सब कष्ट हरे॥
तुम नाम आर्त औ रौद्र ध्यान, दोनों को जड़ से नाशे है।
वरधर्म्य ध्यान औ शुक्लध्यान के, बल से निज को परकाशे है॥५॥
माया मिथ्यात्व निदान शल्य, तीनों को दहन करे क्षण में।
जो विषय वासना की इच्छा, उसको भी शमन करे क्षण में॥
चिच्चमत्कार मय चेतन की, परिणति में नित्य रमाता है।
तुम नाम मंत्र सचमुच भगवन्! स्वातम रसपान कराता है॥ ६॥
मैं शुद्ध बुद्ध हूँ अमल अकल, अविकारी ज्योति स्वरूपी हूँ।
निजदेह रूप देवालय में, रमते भी चिन्मयमूर्ती हूँ॥
इस विध से आतम अनुभव ही, पर से सब ममत हटाता है।
यह निज को निज के कारण ही, बस निज में रमण कराता है॥ ७॥

दोहा

नाम मंत्र प्रभु आपका, करे सकल कल्याण।
'ज्ञानमती' सुख सम्पदा, करे अंत निर्वाण॥ ८॥

ॐ ह्रीं अर्हं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधिभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः
जयमाला अर्घ्यं....।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिनचैत्य चैत्यालय तथा जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर यहँ पर कभी ना आवते॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० ५]

भरतक्षेत्र के तीर्थंकर केवली साधु पूजा

स्थापना—शंभुछंद

इस भरतक्षेत्र के आरजखंड में तीर्थंकर हुये अनंते हैं।
आगे भि अनंते होवेंगे, केवलि श्रुत केवलि नंते हैं॥
गणधर गुरु सूरीपाठक गण, साधूगण त्रैकालिक जितने।
इन सबकी पूजा करने से, हो आत्मशुद्धि निजकार्य बने॥१॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकर-केवलिगणधर-श्रुतकेवलिसर्वसाधुसमूह!
अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकर-केवलिगणधर-श्रुतकेवलिसर्वसाधुसमूह!
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकर-केवलिगणधर-श्रुतकेवलिसर्वसाधुसमूह!
अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टक—नाराचछंद

श्री जिनेंद्र की ध्वनी समान स्वच्छनीर है।
तीन धार देत ही मिले भवाब्धितीर है॥
तीर्थनाथ केवली मुनीश सर्व तीर्थ को।
पूजते हि प्राप्त हो अपूर्व ज्ञान ज्योति जो॥१॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकर-केवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः जलं....।

नाथ के प्रतापसम सुगंध गंध सार है।
चर्ण में चढ़ावते मिले समस्त सार है॥तीर्थनाथ०॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकर-केवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः चंदनं....।

धौतशालिनाथ कीर्ति के समान श्वेत हैं।
पूर्ण सौख्य हेतु पुंज शोभते विशेष हैं॥तीर्थनाथ०॥ ३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकर-केवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः अक्षतं....।

कुंद केतकी गुलाब गंध से भरे खिले।
आप पादपद्म अर्च ज्ञान कौमुदी खिले॥तीर्थनाथ०॥ ४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकर-केवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः पुष्पं....।

मिष्ट मालपूप आदि स्वर्ण थाल में भरे।
स्वात्मसौख्य हेतु नाथ आप पास में धरें॥तीर्थनाथ०॥ ५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकर-केवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः नैवेद्यं....।

रत्नदीप लेय के जिनेश आरती करूँ।
मोहध्वांत को निवार ज्ञान भारती भरूँ॥तीर्थनाथ०॥ ६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकर-केवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः दीपं....।

श्वेत चंदनादि मिश्रधूप अग्नि में जले।
अष्टकर्म नष्ट हेतु आत्म स्वच्छता मिले॥तीर्थनाथ०॥ ७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकर-केवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः धूपं

सेव आम दाड़िमादि थाल में भराय के।
मुक्ति अंगना वरूँ सु आप को चढ़ाय के॥
तीर्थनाथ केवली मुनीश सर्व तीर्थ को।
पूजते हि प्राप्त हो अपूर्व ज्ञान ज्योति जो॥ ८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकर-केवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः फलं....।

नीर गंध आदि अष्ट द्रव्य को मिलाय के।
तीन रत्न हेतु अर्घ्य आपको चढ़ाय के॥तीर्थनाथ०॥ ९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकर-केवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

दोहा

शांतिधारा मैं करूँ, श्री जिनवर पादाब्ज।
परम शांति को प्राप्तकर, पाऊँ निज साम्राज॥ १०॥

शांतये शांतिधारा।

बेला कमल गुलाब बहु, पुष्प सुगंधित लाय।
जिनपद पुष्पांजलि करूँ, रोग शोक नश जाय॥ ११॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

चौबोल छंद

निकट अतीत काल से पहले काल अनादी से लेकर।
अनंत अवसर्पिणि उत्सर्पिणि के अनन्त चौबिस जिनवर॥
उन सब अनन्त चौबीसी जिन तीर्थंकर की भक्ति करूँ।
काल अनादी से सम्बन्धित कर्म शुत्र को नष्ट करूँ॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधिआसन्नअतीतकालात्पूर्वअनन्तभूतकालीनअनंत-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

निकट भविष्य काल के नंतर काल चला आवेहि अनंत।
अनंत अवसर्पिणि उत्सर्पिणि में तीर्थंकर होय अनंत॥

भावी अनंत चौबीसी सब तीर्थंकर की भक्ति करूँ।
काल अनंतों से संबंधित कर्म शत्रु को नष्ट करूँ॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधिआसन्नभाविकालपश्चात्-अनंतभविष्यत्कालीन-अनंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

भूतकाल के अनंत अवसर्पिणि उत्सर्पिणि कालों में।
अनंत मानव घातिकर्म हन केवल ज्ञानी पूज्य बने॥
उन सब केवलि भगवंतो की नित प्रति अर्चा भक्ति करूँ।
वर्ण स्पर्श गंध रस विरहित निज आत्मा को प्राप्त करूँ॥३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधिभूतकालीनअनंतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

भाविकाल के अनंत अवसर्पिणि उत्सर्पिणि कालो में।
अनंत मानव घाति कर्म हन केवल ज्ञानी हो उनमें॥
उन सब केवलि भगवंतो की नित प्रति अर्चा भक्ति करूँ।
वर्ण स्पर्श गंध रस विरहित निज आत्मा को प्राप्त करूँ॥ ४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधिभाविकालीनअनंतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर प्रत्येक समय के अंतकृत केवली दश दश।
घोर घोर उपसर्ग सहनकर प्राप्त किया निज आतम पद॥
भरतक्षेत्र के सभी अंतकृत्केवलियों को नित्य जजूँ।
मुझ में भी उपसर्ग सहन की शक्ती हो इसलिए भजूँ॥ ५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधिआर्यखंडे प्रत्येकतीर्थंकरसमयदशदशघोरोपसर्ग-विजयिअंतकृत् केवलिभ्यः अर्घ्यं....।

वर्तमान हुंडावसर्पिणी में कुछ अघटित कार्य हुए।
उनमें तीजे चौथे पंचम कालों में केवली हुए॥
प्रथम अनंतवीर्य से लेकर अंतिम श्रीधरकेवलि तक।
हुए असंख्यातों मुनिकेवलि उन सबको मैं पूजूँ नित॥ ६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधिआर्यखंडे वर्तमानहुण्डावसर्पिणीकालसंजात-सर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

अड़तालीस गणधरवलय मंत्रों को अर्घ्य

दोहा

विसूचिकादि रोग को, नाश करन में दक्ष।
देश-सकल जिन संयमी, उनको पूजूँ नित्य॥ १॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा....।

ज्वर आदिक पीड़ाहरण, अवधिबोध मुनिराज।
जल गंधादिक अर्घ्य ले, जजूँ नमाकर माथ॥ २॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो ओहिजिणाणं अर्घ्यं....।

शिरोरोग नाशन कुशल, भयनाशक गण ईश।
परमावधि निधि धारते, जजूँ नमाकर शीश॥ ३॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो परमोहिजिणाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा....।

नेत्र रोग नाशक सदा, जाने मूर्तिक सर्व।
सर्वावधिधारक गुरू, पूजूँ गणधर सर्व॥ ४॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहिजिणाणं अर्घ्यं....।

कर्ण रोग पीड़ाहरण, केवल ज्ञान विकास।
जजूँ अनंतावधि मुनि, मम हो स्वात्म विकास॥ ५॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अणंतोहिजिणाणं अर्घ्यं....।

कुशूलगुल्मोदर प्रभृति, रोग नशे जिननाम।
कोष्ठ बुद्धि धारी मुनि, जजूँ उन्हें धर ध्यान॥ ६॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोट्ठबुद्धीणं अर्घ्यं....।

हिचकी संग्रहणी नशे, श्वास रोग नशजात।
बीज बुद्धिधर शास्त्रवित्, जजूँ उन्हें नत माथ॥ ७॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो बीजबुद्धीणं अर्घ्यं....।

वैर परस्पर का नशे, जिन मुनि के परसाद।
पदानुसारी ऋद्धिधर, जजूँ जोड़ जुग हाथ॥ ८॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो पादाणुसारीणं अर्घ्यं....।

नर आदि के शब्द बहु, भिन्न भिन्न सुन लेत।
वे संभिन्न श्रोता ऋषि, कास रोगहर लेत॥ ९॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो संभिण्णसोदाराणं अर्घ्यं....।

कवितावादित्वादि गुण, पूजन से प्रगटात।
स्वयंबुद्ध ऋद्धीश को, जजूँ नमाकर माथ॥ १०॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयंबुद्धाणं अर्घ्यं....।

उल्कादिक लख बुद्ध हो, ऋषि प्रत्येक सुबुद्ध।
प्रवादि विद्यामद हरण, जजूँ उन्हें त्रय शुद्ध॥ ११॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो पत्तेयबुद्धाणं अर्घ्यं....।

हितकर वचन उपाय से, समझे बोधित बुद्ध।
चौरादिक भय नाश कर, जजूँ सदा मन शुद्ध॥ १२॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो बोहियबुद्धाणं अर्घ्यं....।

नरलोकस्थित सरलचित, मन पर्ययधर ज्ञान।
ऋजुमति ऋद्धिधर जजूँ, सब जन शांतिनिधान॥ १३॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो उजुमदीणं अर्घ्यं....।

कुटिल मनोगत अर्थ लख, विपुलमति ऋद्धीश।
मनः सुपर्यय हेतु मैं, जजूँ उन्हें गण ईश॥ १४॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउलमदीणं अर्घ्यं....।

भव तनुभोग विरक्त भन, दश पूर्वी गण देव।
अंग पूर्व सुज्ञान मम, प्रगटे जजूँ अत एव॥ १५॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो दसपुव्वीणं अर्घ्यं....।

जिन पूजें स्वपरार्थवित्, होवें भविजन नित्य।
चउदश पूर्वी ऋद्धिधर, उन्हें जजूँ धर प्रीति॥ १६॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो चउदसपुव्वीणं अर्घ्यं....।

भूगगनादि स्वरादि औ, जीवित मृत्युनिमित्त।
अष्टांग जानें निमित्त, पूजूँ ज्ञान निमित्त॥ १७॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो अट्ठंगमहाणिमित्तकुसलाणं अर्घ्यं....।

अणिमादिक ऋद्धि सकल, धरें विक्रियद्धीश।
सामविधी में कुशल को, पूजूँ ऋद्धि निमित्त॥ १८॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउव्वइड्ढिपत्ताणं अर्घ्यं....।

कुल विद्यातप आदि से, विद्याधर मुनिराज।
नभोगामि भवि को करें, जजूँ उन्हें सुखकाज॥ १९॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं अर्घ्यं....।

जिन पूजन से मुष्टि औ, मन वस्तु का ज्ञान।
अधरगामि चारण ऋषी, यजूँ उन्हें सुखखान॥ २०॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो चारणाणं अर्घ्यं....।

अंगपूर्व श्रुतधर ऋषी, प्रज्ञाश्रमण गणेश।
जल गंधादिक से जजूँ, प्रज्ञाविकसित हेतु॥ २१॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण्णसमणाणं अर्घ्यं....।

जिन पूजन से गगन में, गमन करें भवि जीव।
गगन गामिनी ऋद्धियुत, जजूँ उन्हें नित एव॥ २२॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो आगासगामीणं अर्घ्यं....।

रिपु का द्वेष निवारते, आशीर्विष ऋद्धीश।
शुभवच सिद्धी हेतु मैं, यजूँ अर्घ्य से नित्त॥ २३॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो आसीविसाणं अर्घ्यं....।

दृष्टिमात्र से जन मरें, ये विषनाशक साधु।
जन का शोक निवारते, यजूँ अर्घ्य से आज॥ २४॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठिविसाणं अर्घ्यं....।

कुजन वचस्तम्भन करें, भवविरक्त गणनाथ।
बहुत उग्र तप ऋद्धिधर, यजूँ नमाकर माथ॥ २५॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गतवाणं अर्घ्यं....।

दीप्त ऋदि की दीप्ति से, मोहध्वांत कर नाश।
कुजन शक्ति थंभन करें, यजूँ उन्हें सुखकाज॥ २६॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्ततवाणं अर्घ्यं....।

तपे तवे पर जल सदृश, भुक्त अन्न हो जाय।
निज भवाग्नि शांत्यर्थ मैं, यजूँ गणीश्वर पांय॥ २७॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो तत्ततवाणं अर्घ्यं....।

वेला वेला बहुविधा तप तपते गणनाथ।
नीरस्तंभन शक्तिधर यजूँ उन्हें शुभकाज॥ २८॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो महातवाणं अर्घ्यं....।

परमघोर तप ऋद्धि से, रुग अहिबंधन शांत।
क्रुधितसिंह नहिं कुछ करें, यजूँ तुम्हें मुनिनाथ॥ २९॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरतवाणं अर्घ्यं....।

घोर गुणी मुनि ऋद्धि वश, काय कामला रोग।
नष्ट करें बहुगुण भरें, यजूँ उन्हें धर मोद॥ ३०॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणाणं अर्घ्यं....।

कर्मशत्रु संहार में, जिनका विक्रम सिद्ध।
सिंह भयांतक मुनि यजूँ, घोर पराक्रम ऋद्धि॥ ३१॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरपरक्कमाणं अर्घ्यं....।

सुरनरतिर्यक कृत सहें, घोर उपद्रव साधु।
भूतादिक भयनाशते, यजूँ उन्हें ऋषिराज॥३२॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणबंभयारीणं अर्घ्यं....।

आमौषधि ऋद्धी हरे, भविजन के सब रोग।
जन्मांतर का वैर हर, जजूँ गणीश्वर मोद॥ ३३॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो आमोसहिपत्ताणं अर्घ्यं....।

जिन ऋषि के निष्ठीव से, नशे रोग अपमृत्यु।
खेलौषधि ऋद्धी सहित, जजूँ गणीश्वर नित्य॥ ३४॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो खेल्लोसहिपत्ताणं अर्घ्यं....।

स्वेदबिंदु औ मल सभी, हरें रोग भ्रम सर्व।
जल्लौषधि ऋद्धी सहित, यजूँ यतीश्वर सर्व॥ ३५॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो जल्लोसहिपत्ताणं अर्घ्यं....।

हरें रोग विष्ठादि भी, विप्रौषधि प्रभाव।
गजमारी आदिक नशें, यजूँ यती धर भाव॥ ३६॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विप्पोसहिपत्ताणं अर्घ्यं....।

सर्वौषधि से रोग विष, नरमारी हो नष्ट।
उन गणधर ऋद्धीश को, यजूँ चढ़ाकर अर्घ्य॥ ३७॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताणं अर्घ्यं....।

दो घटिका में मनबली, चिंते द्वादश अंग।
अश्व मारि हत्त गणधरा, जजूँ तुम्हें नत अंग॥ ३८॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो मणबलीणं अर्घ्यं....।

दो घटिका में वचबली, द्वादशांग पढ़ लेत।
मेषमारिहत् गुरुवरा जजूँ वचोबल हेतु॥ ३९॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो वचिबलीणं अर्घ्यं....।

त्रिजग उठाने में बली, कायबली योगीश।
गोमारी हंता गुरू, जजूँ कायबल हेतु॥ ४०॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो कायबलीणं अर्घ्यं....।

क्षीर स्रवी के हाथ में, विष भी हो झट क्षीर।
कुष्ठ क्षयादि रोग हर, जजूँ तुम्हें हर पीर॥ ४१॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो खीरसवीणं अर्घ्यं....।

घृतस्रावी के हाथ में, रूक्ष अन्न घृत होत।
सब विध ज्वर भी नष्ट हों, जजूँ तुम्हें धर तोष॥ ४२॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सप्पिसवीणं अर्घ्यं....।

मधुरस्रवी के कर दिया, अन्न मधुर रस होय।
पित्तादिरुज को हरे, जजूँ भक्ति वश होय॥ ४३॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो महुरसवीणं अर्घ्यं....।

अमृतस्रावी कर दिया, विष अमृत औ वाक्।
सुधा बने सब रोग विष, जजूँ उन्हें नत माथ॥ ४४॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो अमियसवीणं अर्घ्यं....।

जिस घर में आहार लें, सब भोजन अक्षीण।
जहँ बैठे अक्षीण थल; जजूँ उन्हें नत शीश॥ ४५॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो अक्खीणमहाणसाणं अर्घ्यं....।

वर्धमान वैभव श्रिया वर्धमान भगवान।
श्रितजन शिव साधन बढ़े जजूँ तुम्हें धर ध्यान॥ ४६॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणाणं अर्घ्यं....।

नमूँ सर्व सिद्धायतन सिद्धि वधू वश हेत।
नाम मंत्र भी सिद्धरस पूजूँ भक्ति समेत॥ ४७॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सिद्धायदणाणं अर्घ्यं....।

हे भगवन्! महति प्रभो महावीर भुवनेश।
वर्धमान बुद्धि ऋषी जजूँ तुम्हें शुभ हेत॥ ४८॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमोभयवदोमहदिमहावीरवड्ढमाणबुद्धिरिसीणंअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

तीर्थंकर चौबीस के, समवसरण के मध्य।
जितने गणधर मुनिवरा, जजूँ भक्ति से सर्व॥

नरेंद्र छंद

'वृषभदेव' के समवसरण में, चौरासी थे गणधर।
ऋषिगण चौरासी हजार से, शोभित थे श्री जिनवर॥
नीरादिक से अर्घ बनाकर, मुनिगण चरण चढ़ाऊँ।
मोहध्वांत को शीघ्र भगाकर, चिन्मय ज्योति जगाऊँ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवृषभदेवस्य चतुरशीतिगणधरचतुरशीतिसहस्रमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

'अजितनाथ' के नब्बे गणधर, एक लाख ऋषिगण थे।
द्वादशगण से शोभित जिनवर, त्रिभुवन के गुणमणि थे॥
नीरादिक से०॥ २॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअजितनाथस्य नवतिगणधरएकलक्षमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

'संभव' जिनके गणधर इकसौ पाँच कहे गुणधारी।
यतिगण हैं दो लाख कहाये रत्नत्रय निधिधारी॥
नीरादिक से०॥ ३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसंभवनाथस्य पंचोत्तरशतगणधरद्वयलक्षमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

'अभिनंदन' के गणधर इक सौ, तीन सभी के नायक।
तीन लाख मुनिगण शोभित थे, अक्षय सौख्य प्रदायक॥
नीरादिक से०॥ ४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअभिनन्दननाथस्य त्र्युत्तरशतगणधरत्रयलक्षमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं ।

'सुमतिनाथ' के इकसौ सोलह, गणधर ऋद्धिप्रदायक।
तीन लाख अरु बीस सहस मुनि, चारित गुण के नायक॥
नीरादिक से०॥ ५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुमतिनाथस्यषोडशोत्तरशतगणधरत्रयलक्षविंशातिसहस्रमुनिगण-चरणेभ्यः अर्घ्यं....।

'पद्मप्रभ' के इकसौ ग्यारह, गणधर गुणमणि भूषित।
तीन लाख अरु तीस सहस मुनि, ऋद्धि सिद्धि गुण पूरित॥

नीरादिक से अर्घ बनाकर, मुनिगण चरण चढ़ाऊँ।
मोहध्वांत को शीघ्र भगाकर, चिन्मय ज्योति जगाऊँ॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपद्मप्रभनाथस्य एकादशोत्तरैकशतगणधरत्रयलक्षत्रिंशत्सहस्रमुनिगण-चरणेभ्यः अर्घ्यं....।

'श्री सुपार्श्व' के पंचानवे थे, गणधर पाप विघातक।
तीन लाख मुनिगण गुण मंडित, भवभय दुःख विदारक॥
नीरादिक से०॥ ७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुपार्श्वनाथस्य पंचनवतिगणधरत्रिलक्षमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं...।

'चन्द्रप्रभ' के थे तिरानवे, गणधर धर्म प्रचारक।
ढ़ाई लाख महामुनिगण थे, धर्म्य शुक्ल के धारक॥
नीरादिक से०॥ ८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचन्द्रप्रभनाथस्य त्रिनवतिगणधरसार्धद्वयलक्षमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं.।

'पुष्पदंत' के अठ्यासी श्री, गणधर अंतर्यामी।
मुनिगण थे दो लाख कहाये, सब त्रिभुवन के स्वामी॥
नीरादिक से०॥ ९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपुष्पदंतनाथस्य अष्टाशीतिगणधरद्वयलक्षमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं...।

'शीतल' जिन के सत्यासी थे, गणधर शीतलकारी।
एक लाख मुनिगण भविजन के, पाप ताप दुःखहारी॥
नीरादिक से०॥ १०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशीतलनाथस्य सप्ताशीतिगणधरैकलक्षमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं...।

जिनवर 'श्री श्रेयांसनाथ' के, सत्तर थे गणधर।
मुनिगण चौरासी हजार थे, रोग शोक संकटहर॥
नीरादिक से०॥ ११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीश्रेयांसनाथस्य सप्तसप्ततिगणधरचतुरशीतिसहस्रमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

'वासुपूज्य' के गणधर छयासठ, मुक्ति रमा के भर्ता।
मुनिगण सब थे सहस बहत्तर, भविजन के दुःख हर्ता॥
नीरादिक से०॥ १२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवासुपूज्यनाथस्य षट्षष्टिगणधरद्वासप्ततिसहस्रमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

'विमल' जिनेश्वर गणधर पचपन, द्विविध कर्म मल धोया।
अड़सठ सहस यतीगण सबने, भवभय संकट खोया॥
नीरादिक से० ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविमलनाथस्य पंचपंचाशत्गणधरअष्टषष्टिसहस्रमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

'श्री अनंत' के पचास गणधर, परमानंद विधाता।
छयासठ सहस मुनिगण जग को, धर्मामृत के दाता॥
नीरादिक से० ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअनन्तनाथस्य पंचाशत्गणधरषट्षष्टिसहस्रमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं ।

'धर्मनाथ' के तेंतालिस थे, गणधर धर्म प्रवर्तक।
चौंसठ सहस मुनीगण शोभे, धर्म तीर्थ संवर्धक॥
नीरादिक से० ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधर्मनाथस्य त्रिचत्वारिंशत्गणधरचतुःषष्टिसहस्रमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

'शांतिनाथ' के छत्तिस गणधर, अक्षय शांति विधाता।
बासठ सहस मुनीगण गुणमणि, अतिशय सौख्य प्रदाता॥
नीरादिक से० ॥१६ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशांतिनाथस्य षटत्रिंशत्गणधरद्विषष्टिसहस्रमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं ।

'कुंथुनाथ' के पैंतिस गणपति, शिव लक्ष्मी अधिनायक।
साठ सहस मुनिगण व्रत संयम, शील गुणों के धारक॥
नीरादिक से० ॥१७ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकुंथुनाथस्य पंचत्रिंशत्गणधरषष्टिसहस्रमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं...।

'अरजिनवर' के तीस गणाधिप, त्रिभुवन सिद्धि वधूवर।
मुनिगण सहस पचास कहाये, ऋद्धि-सिद्धि संपतिकर॥
नीरादिक से० ॥१८ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअरनाथस्य त्रिंशत्गणधरपंचाशत्सहस्रमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

'मल्लिनाथ' के अट्ठाइस थे, गणधर त्रिभुवन नेता।
चालिस सहस मुनीगण गणधर, मोहमल्ल के नेता॥
नीरादिक से० ॥१९ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमल्लिनाथस्य अष्टाविंशतिगणधरचत्वारिंशत्सहस्रमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

'मुनिसुव्रत' के कहे अठारह, गणपति व्रत के नायक।
तीस सहस मुनिगण शोभित थे, रत्नत्रय प्रतिपालक॥
नीरादिक से अर्घ बनाकर, मुनिगण चरण चढ़ाऊँ।
मोहध्वांत को शीघ्र भगाकर, चिन्मय ज्योति जगाऊँ॥ २०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमुनिसुव्रतनाथस्य अष्टादशगणधरत्रिंशत्सहस्रमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

'नमिजिनवर' के सत्रह गणधर भवभयसंकट चूरण।
बीस सहस मुनिगण जगनायक त्रिभुवन गुणगण पूरण॥
नीरादिक से०॥ २१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनमिनाथस्य सप्तदशगणधरविंशतिसहस्रमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं..।

'नेमिनाथ' के ग्यारह गणधर, स्वात्म सुधारस पीते।
सहस अठारह मुनिगण सबने, क्रोध मोह रिपु जीते॥
नीरादिक से०॥ २२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनेमिनाथस्य एकादशगणधरअष्टादशसहस्रमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं..।

'पार्श्वनाथ' के दशगणधर थे, अक्षय गुण भंडारी।
सोलह हजार मुनिगण जग में, भवभव के अघटारी॥
नीरादिक से०॥ २३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपार्श्वनाथस्य दशगणधरषोडशसहस्रमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

'महावीर' के ग्यारह गणधर, भविजन संकट चूरे।
चौदह हजार मुनिगण मेरी, रत्नत्रय निधि पूरें॥
नीरादिक से०॥ २४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहावीरस्वामिनः एकादशगणधरचतुर्दशसहस्रमुनिगणचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

शंभुछंद

भूतकाल तीर्थंकर जिनके, गणधर हुए अनन्ते हैं।
भाविकाल में भी होवेंगे, पाप अनंतो खंडे हैं॥
वर्तमान चौबिस जिनगणधर, चौदह सौ बावन माने।
वृषभसेन आदिक गौतम गुरु, अर्घ चढ़ाकर दुख हाने॥ १॥

ॐ ह्रीं भरतक्षेत्रसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधर रणेभ्यः अर्घ्यं....।

जो द्वादशांग श्रुत के पाठी, निर्ग्रंथ दिगम्बर श्रुतज्ञानी।
वे श्रुतकेवलि परोक्ष से भी, त्रिभुवन को जाने शुभध्यानी॥

वे श्रुत पारंगत महासाधु हो चुके हो रहे होवेंगे।
उन सबकी पूजा करने से मन वांछित पूरे होवेंगे॥ २॥
ॐ ह्रीं भरतक्षेत्रसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।
जो पंचाचार धर्म दशविध द्वादश विधतप को नित करते।
षट् आवश्यक त्रय गुप्ति सहित छत्तिसगुण को निज में धरते॥
ऐसे आचार्य स्वपर हित रत, हो चुके हो रहे होवेंगे।
उनकी पूजा भक्ति करते, भक्तों के संकट खोवेंगे॥ ३॥
ॐ ह्रीं भरतक्षेत्रसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्येभ्यः अर्घ्यं....।
जो ग्यारह अंग पूर्व चौदह को, पढें पढ़ावे शिष्यों को।
या द्वादशांग को भी जानें या सब तत्कालिक शास्त्रों को॥
वे उपाध्याय गुरु पथदर्शक, हो चुके हो रहे होवेंगे।
उनकी पूजा जो करते हैं वे परमानंद सुख भोगेंगे॥ ४॥
ॐ ह्रीं भरतक्षेत्रसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वउपाध्यायेभ्यः अर्घ्यं....।
व्रत समिती इन्द्रियवश आवश्यक ये पांच-पांच पण षट् मानों।
कचलोच अचेलक अस्नानं भूशयन अदंतधवन जानों॥
स्थिति भोजन एक भक्त ये सब अट्ठाइस गुण जो मूल कहें।
इन संयुत सर्व साधुगण को हम पूजें भवदधि कूल लहें॥

दोहा

ये अट्ठाइस मूलगुण, उत्तरगुण चौंतीस।
पूर्ण चौरासी लाख हैं, मध्यम भेद अनेक॥
इन गुण युत दिग्वस्त्र मुनि, हुये हो रहें आज!
होवेंगे जो भी उन्हें, नमूँ नमाकर माथ॥ ५॥
ॐ ह्रीं भरतक्षेत्रसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

शंभुछंद

श्री गुणधर गुरु धरसेन सूरि श्री कुंद कुंद गुरु उमास्वामि।
श्री समंतभद्र श्री पूज्यपाद अकलंक व वीरसेन नामी॥
श्री अमृतचन्द्र जयसेन सूरि आदिक मुनिगण सब अगणित हैं।
आचार्य शान्तिसागर गुरुवर श्री वीरसिंधु को प्रणमन हैं॥

दोहा

सूरी पाठक साधु अरु, परंपराचार्यादि।
सबको पूजूँ भाव से मिटे सर्व भव व्याधि॥ ६॥

ॐ ह्रीं भरतक्षेत्रसंबंधिआर्यखंडे ग्रन्थकारगुणधरआदिआचार्यप्रभृति-अद्यावधि-विहरमाणरत्नत्रयसमेतसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर के गर्भजन्म तप, ज्ञान मोक्ष कल्याणक वंद्य।
इनसे पावन पृथ्वी वनगिरि, तिथियाँ भी हैं जग अभिनंद्य॥
अन्य केवली मुनियों के तप-ज्ञान मोक्ष से पावन जो।
उन सब कल्याणक को पूजूँ, नित्य नमूँ उन तीर्थों को॥ ७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधिभूतकालीनतीर्थंकरपंचकल्याणकतन्निमित्ततीर्थअन्यसर्वतीर्थेभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर के गर्भजन्म तप ज्ञान मोक्ष कल्याणक वंद्य।
इनसे पावन पृथ्वी वन गिरि तिथियाँ होंगी जग अभिनंद्य॥
अन्य केवली मुनियों के तप ज्ञान मोक्ष से पावन जो।
उन सब कल्याणक को पूजूँ, नमूँ सर्व उन तीर्थों को॥ ८॥

ॐ ह्रीं अर्हं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधिभाविकालीन-तीर्थंकरपंचकल्याणक-तन्निमित्ततीर्थअन्यसर्वतीर्थेभ्यः अर्घ्यं....।

दोहा

वर्तमान के तीर्थ जो यहाँ प्रसिद्धि प्राप्त।
उन सबको वंदन करूँ मिटे सकल संताप॥

शंभुछंद

इस आर्यखंड के मध्य अयोध्यापुरी रची थी सुरपति ने।
श्री आदिनाथ ने जन्म लिया सुरगिरि पर न्हवन किया सुर ने॥
श्री अजितनाथ अभिनंदन सुमतीनाथ अनंतनाथ स्वामी।
इस नगरी में ही जन्म लिये यह पूज्य हुई जग में नामी॥ ९॥

ॐ ह्रीं वृषभअजितअभिनंदनसुमतिअनंतनाथतीर्थंकरगर्भजन्मकल्याणकपवित्रअयोध्यानगर्यै अर्घ्यं....।

श्री संभव जिन श्रावस्ती में, श्री पद्मप्रभु कौशांबी में।
श्री सुपार्श्व पार्श्व वाराणसी में चंद्रप्रभु चंद्रपुरी जन्में॥

श्री पुष्पदंत काकंदी में श्रीशीतल भद्रिका पुरी में।
श्रेयांस सिंहपुरी में जन्में इन जन्म स्थल को पूजूँ मैं॥ १०॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरगर्भजन्मकल्याणक-पवित्र-श्रावस्तीकौशांबीवाराणसीचंद्रपुरीकाकंदी-भद्रिकापुरीसिंहपुरी-नगरीभ्यः अर्घ्यं ....।

श्री वासुपूज्य चंपापुर में श्री विमल कंपिला में जन्में।
श्रीधर्म रत्नपुरि में श्री मल्लि नमिनाथ मिथिलापुरी में॥
मुनिसुव्रतनाथ राजगृह में श्रीनेमिनाथ शौरीपुर में।
श्रीमहावीर जिन कुंडनगर में इन नगरी को पूजूँ मैं॥ ११॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरगर्भजन्मपवित्रचंपापुरकंपिलपुरीरत्नपुरीमिथिलापुरीराजगृहीशौरीपुर-कुंडपुरीभ्यः अर्घ्यं ....।

श्री शांतिनाथ तीर्थंकर और चक्रीश्वर कामदेव स्वामी।
श्रीकुंथनाथ श्री अरहनाथ ये भी तीनों पद के स्वामी॥
इन गर्भजन्म तप ज्ञान कल्याणक हस्तिनागपुर में मानें।
इस पावन नगरी को पूजूँ मेरे भव भव के दुःख हानें॥ १२॥

ॐ ह्रीं शांति-कुंथ-अर-तीर्थंकर-गर्भजन्मतपज्ञानपवित्रहस्तिनापुरीनगर्यै अर्घ्यं ....।

दोहा

सिद्धार्थ सहेतुक आदि वन दीक्षा के स्थान।
इन सबको मैं नित जजूँ, मिले स्वात्म विज्ञान॥ १३॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकर-तपः कल्याणकपवित्रसिद्धार्थसहेतुकआदिवनेभ्यः अर्घ्यं ....।

पुरिमतालपुर आदि जो, ज्ञान कल्याण पवित्र।
उन सब स्थल को जजूँ हो मम ज्ञान पवित्र ॥१४॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकर-ज्ञानकल्याणकपवित्रपुरिमतालनगरआदिस्थलेभ्यः अर्घ्यं ....।

चाल—हे दीनबंधु ....

वृषभेश गिरि कैलाश से निर्वाण पधारे।
मुनिराज दश हजार साथ मुक्ति सिधारे॥
तीर्थेश की मुनिराज की मैं वन्दना करूँ।
उस तीर्थक्षेत्र अद्रि की भी अर्चना करूँ॥१५॥

ॐ ह्रीं दशसहस्रमुनिभिः सह मुक्तिपदप्राप्तश्रीवृषभदेवजिनतत्क्षेत्रकैलाशपर्वत-निर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं ....।

चंपापुरी से वासुपूज्य मुक्ति सिधारे।
उन साथ छह सौ एक साधु मुक्ति पधारे॥

उन तीर्थनाथ साधुओं की वन्दना करूँ।
उस तीर्थक्षेत्र अद्रि की भी अर्चना करूँ॥१६॥

ॐ ह्रीं एकोत्तरषट्शतमुनिभिः सह मुक्तिपदप्राप्तश्रीवासुपूज्यजिनतन्निमित्तचंपापुर-निर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

नेमीश ऊर्जयंत से निर्वाण गये हैं।
सह पांच सौ छत्तीस साधु मुक्ति गये हैं॥
तीर्थेश औ मुनिराज की मैं वन्दना करूँ।
उस तीर्थक्षेत्र अद्रि की भी अर्चना करूँ॥१७॥

ॐ ह्रीं षट्त्रिंशदधिकपंचशतमुनिभिः सह मुक्तिपदप्राप्तश्रीनेमिनाथजिनतन्निमित्त-ऊर्जयंतपर्वतनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

कार्तिक अमावसी दिवस प्रत्यूष काल में।
पावापुरी सरोवर के मध्य स्थान में॥
कर योग का निरोध वर्धमान शिव गये।
निजरज से उस स्थान को हि तीर्थ कर गये॥१८॥

ॐ ह्रीं महावीरजिनमुक्तिपदप्राप्तपावापुरीनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

इंद्रादि वंद्य बीस जिनेश्वर करम हने।
सम्मेद गिरि शिखर से शिव गये नमूँ उन्हें॥
मुनिराज भी असंख्य इसी गिरि से शिव गये।
उन सबकी करूँ अर्चना वे सौख्यकर हुये॥१९॥

ॐ ह्रीं अजितादिविंशतितीर्थंकरअसंख्यसाधुगणमुक्तिपदप्राप्तसम्मेदशिखरनिर्वाण-क्षेत्राय अर्घ्यं....।

बलभद्र सात और आठ कोटि बताये।
यादव नरेन्द्र आर्ष में हैं साधु कहाये॥
गजपंथ गिरि शिखर से ये निर्वाण गये हैं।
इनको जजूँ ये मुक्ति में निमित्त कहे हैं॥२०॥

ॐ ह्रीं बलभद्रयादवनरेंद्रादिमुनि-मुक्तिपदप्राप्तगजपंथगिरिनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं...।

वरदत्त औ वरांग सागरदत्त मुनिवरा।
ऋषि और साढ़े तीन कोटि भव्य सुखकरा॥

ये तारवर नगर से मुक्ति धाम पधारे।
मैं नित्य जजूँ मुझको भी संसार से तारें॥२१॥

ॐ ह्रीं वरदत्तवरांग-सागरदत्तादिमुनिमुक्तिपदप्राप्ततारवरनगरनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

श्री नेमिनाथ औ प्रद्युम्न शंभु कुमारी।
अनिरुद्धकुमर पा लिया भवदधि का किनारा॥
मुनिराज बाहत्तर करोड़ सात सौ कहे।
गिरनार क्षेत्र से ये सभी मुक्ति पद लिये॥२२॥

ॐ ह्रीं प्रद्युम्न शंभुअनिरुद्धादिमुनिमुक्तिपदप्राप्तऊर्जयंतपर्वतनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

दो पुत्र रामचन्द्र के औ लाडनृपादी।
ये पांच कोटि साधु वृंद निज रसास्वादी॥
ये पावा गिरवर शिखर से मोक्ष गये हैं।
इनको जजूँ ये मुक्ति में निमित्त कहे हैं॥२३॥

ॐ ह्रीं रामचंद्रपुत्रलाडनृपादिमुनिगणमुक्तिपदप्राप्तपावागिरिवरनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

जो पांडु पुत्र तीन और द्रविडनृपादी।
ये आठ कोट साधु परम समरसास्वादी॥
शत्रुंजयाद्रि शिखर से ये सिद्ध हुये हैं।
इनको जजूँ ये सिद्धि में निमित्त कहे हैं॥२४॥

ॐ ह्रीं पांडुपुत्रद्रविडराजादिमुनिगणमुक्तिपदप्राप्तशत्रुंजयपर्वतनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

श्रीराम हनुमान औ सुग्रीव मुनिवरा।
जो गव गवाख्य नील महानील सुखकरा॥
निन्यानवे करोड़ तुंगीगिरि से शिव गये।
उन सबकी अर्चना से सर्वपाप धुल गये॥२५॥

ॐ ह्रीं रामहनुमानसुग्रीवादिमुनिगणमुक्तिपदप्राप्ततुंगीगिरिनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

जो नंग औ अनंग दो कुमार हैं कहे।
वे साढ़े पाँच कोटि मुनि सहित शिव गये॥
सोनागिरि शिखर है सिद्ध क्षेत्र इन्हीं का।
इनको जजूँ इन भक्ति भवसमुद्र में नौका॥२६॥

ॐ ह्रीं नंगानंगकुमारआदिमुनिगणमुक्तिपदप्राप्तसुवर्णगिरिनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

दशमुखनृपति के पुत्र आत्म तत्त्व के ध्याता।
जो साढ़े पाँच कोटि मुनि सहित विख्याता॥
रेवा नदी के तीर से निर्वाण पधारे।
मैं उनको जजूँ मुझको भवोदधि से उबारे॥२७॥

ॐ ह्रीं दशमुखनृपपुत्र आदिमुनिगणमुक्तिपदप्राप्तरेवानदीतटनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं...।

चक्रीश दो दश कामदेव साधुपद धरा।
मुनि साढ़े तीन कोटि मुक्ति राज्य को वरा॥
रेवा नदी के तीर अपर भाग में सही।
मैं सिद्धवर सुकूट को पूजूँ जो शिवमही॥२८॥

ॐ ह्रीं द्वयचक्रिदशकामदेवादिमुनिगणमुक्तिपदप्राप्तसिद्धवरकूटनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

बड़वानिवर नगर में दक्षिणी सुभाग में।
है चूलगिरि शिखर जो सिद्ध क्षेत्र नाम में॥
श्री इन्द्रजीत कुंभकरण मोक्ष पधारे।
मैं नित्य जजूँ उनको सकल कर्म विडारें॥२९॥

ॐ ह्रीं इद्रजीतकुंभकर्णादिमहामुनिमुक्तिपदप्राप्तवडवानीनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

पावा गिरिनगर में चेलना नदी तटे।
मुनिवर सुवर्ण भद्र आदि चार शिव बसे॥
निर्वाण भूमि कर्म का निर्वाण करेगी।
मैं नित्य नमूँ मुझको परम धाम करेगी॥३०॥

ॐ ह्रीं सुवर्णभद्रादिमुनिगणमुक्तिपदप्राप्तपावागिरिनगरनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

फलहोड़ी श्रेष्ठ ग्राम में पश्चिम दिशा कही।
श्री द्रोणगिरि शिखर है परमपूतभू सही॥
गुरुदत्त आदि मुनिवरेन्द्र मुक्ति के जयी।
निर्वाण गये नित्य जजूँ पाऊँ शिवमही॥३१॥

ॐ ह्रीं गुरुदत्तादिमुनिगणमुक्तिपदप्राप्तद्रोणागिरिनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

श्री बालि महाबालि नाग कुमर आदि जो।
अष्टापदाद्रि शिखर से निर्वाण प्राप्त जो॥
उनको नमूँ वे कर्म अद्रि चूर्ण कर चुके।
वे तो अनंत गुण समूह पूर्ण कर चुके॥३२॥

ॐ ह्रीं बालिमहाबालिमुनिगणमुक्तिपदप्राप्तअष्टापदगिरिनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

अचलापुरी ईशान में मेढागिरि कही।
मुनिराज साढ़े तीन कोटि उनकी शिवमही॥
मुक्तागिरि निर्वाण भूमि नित्य जजूँ मैं।
निर्वाण प्राप्ति हेतु अखिल दोष वमूँ मैं॥३३॥

ॐ ह्रीं सार्धत्रयंकोटिमुनिगणमुक्तिपदप्राप्तमुक्तागिरिनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

वंशस्थली नगर के अपर भाग में कहा।
कुंथलगिरी शिखर जगत में पूज्य हो रहा॥
मुनिकुलभूषण व देशभूषण मुक्ति गये हैं।
मैं नित्य जजूँ उनको वे कृतकृत्य हुये हैं॥३४॥

ॐ ह्रीं कुलभूषणदेशभूषणमहामुनिगणमुक्तिपदप्राप्तकुंथलगिरिनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

जसरथ नृपति के पुत्र और पांच सौ मुनी।
निर्वाण गये हैं कलिंग देश से सुनी॥
मुनिराज एक कोटि कोटि शिला से कहे।
निर्वाण गये उनको जजूँ दुःख ना रहे॥३५॥

ॐ ह्रीं जसरथनृपतिपुत्रादिमुनिगणकलिंगदेशक्षेत्रकोटिशिलानिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

श्री पार्श्व के समवसरण में जो प्रधान थे।
वरदत्त आदि पांच ऋषी गुणनिधान थे॥
रेसिंदिगिरि शिखर से वे मुक्ति पधारे।
मैं उनको जजूँ वे सभी संकट को निवारें॥३६॥

ॐ ह्रीं वरदत्तादिमुनिगणमुक्तिपदप्राप्तनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

जंबूमुनींद्र जंबुविपिन गहन में आके।
निर्वाण प्राप्त हुये अखिल कर्म नशा के॥
मन वच सुकाय शुद्धि सहित अर्घ चढ़ाके।
मैं नित्य नमस्कार करूँ हर्ष बढ़ा के॥३७॥

ॐ ह्रीं जंबूस्वामीमुक्तिपदप्राप्तजंबूवननिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं....।

मुनि शेष जो असंख्य आर्यखंड में हुये।
जिस जिस पवित्रथान से निर्वाण को गये॥

उन साधुओं की क्षेत्र की भी वंदना करूँ।
संपूर्ण दुःख क्षय निमित्त अर्चना करूँ॥३८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधिआर्यखण्डे ये ये मुनीश्वराःयत्यत् स्थानात् शिवंगताः तत्तत्सर्वनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

अहिच्छत्र आदि क्षेत्र भी प्रसिद्ध तीर्थ हैं।
चांदनपुरी कचनेर आदि महिम तीर्थ हैं॥
इन सर्व तीर्थक्षेत्र की मैं वंदना करूँ।
त्रिकरण विशुद्धि अर्घ्य चढ़ा अर्चना करूँ॥३९॥

ॐ ह्रीं अहिच्छत्रादितीर्थक्षेत्रचांदनपुरीआदिअतिशयक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकरों की गर्भ जन्म तप व ज्ञान की।
निर्वाण की तिथियाँ पवित्र दिवस पूज्य भी॥
इसविध असंख्य मुनिगणों की तप व ज्ञान की।
निर्वाण की तिथि हैं जजूँ मैं भक्ति से सभी॥४०॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरपंचकल्याणकतिथिअन्यमुनिगणतपोज्ञाननिर्वाणतिथिभ्यः अर्घ्यं....।

नरेंद्र छंद

तीर्थंकर के गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष कल्याणक वंद्य।
इनसे पावन भूवन पर्वत तिथियाँ भी हैं जग अभिनंद्य॥
अन्य केवली के तप ज्ञान मोक्ष इन्हीं से पावन जो।
उन सब कल्याणक को पूजूँ नित्य नमूँ उन तीर्थों को॥४१॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधिवर्तमानकालीनपंचकल्याणकतन्निमित्तकतीर्थ-अन्यसर्वतीर्थेभ्यः अर्घ्यं....।

भरत क्षेत्र के मध्य रजत गिरि, इस पर पहली कटनी पर।
उभय पार्श्व में इक सौ दश, नगरी में रहते विद्याधर॥
वहाँ काल चौथा ही उनमें, केवलि मुनिगण करें विहार।
उनसे तीर्थ बने उन सबको, अर्घ चढ़ा पूजूँ सुखकार॥ ४२॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रमध्ये विजयार्धपर्वतविद्याधरश्रेणीषु भविष्यत्कालीनसर्व-केवलिश्रुतकेवलिसाधुसर्वतीर्थेभ्यः अर्घ्यं....।

दोहा

केवलि जिनवर साधुगण कल्याणक औ तीर्थ।
इन सबको में पूजहूँ नित्य नमाकर शीश॥ ४३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधिसर्वकेवलिश्रुतकेवलिसाधुगणकल्याणकसर्वतीर्थ-क्षेत्रेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

चौबीस जिनवर के संमवसरण की, ब्राह्मी आदी आर्यिकायें हैं।
वे तीन करोड़ अरु साठ लाख, छप्पन सौ पचास कहाए हैं॥
इन सबको है वंदामि सदा हम, इनकी पूजा करते हैं।
इन्द्रों से पूजित वंद्य आर्यिकाओं, की भी अर्चा करते हैं॥ ४४॥

ॐ ह्रीं भरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितब्राह्मीप्रमुखसर्वार्यिकाभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

चौंतीसों कर्मभूमि की जो भी आर्यिकायें त्रयकालिक हैं।
हो चुकीं हो रहीं होवेंगी ये सर्व अनंतानते हैं॥
सुरपति गण रामचंद्र आदिक नरपति से भी ये वंदित हैं।
हम इनको अर्घ चढ़ाते हैं ये धर्ममूर्ति अभिनंदित हैं॥ ४५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिजत्रैकालिकसर्वार्यिकाभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा

परम चिदंबर चित्पुरुष, चिच्चिंतामणिदेव।
गाऊँ तुम गुणमालिका, करूँ सतत तुम सेव॥ १॥

नरेंद्र छंद

नित्य निरंजन ज्ञान ज्योतिमय, चित् चैतन्य सुधाकर।
जय जय चिन्मूरत पारसमणि सर्वसौख्य रत्नाकर॥
आप अलौकिक कल्पवृक्ष प्रभु मुंहमांग फल देते।
आप भक्त चक्री सुरपति तीर्थंकर पद पा लेते॥ २॥

जो तुम चरण सरोरुह पूजें, जग में पूजा पावें।
जो जन तुमको चित में ध्यावें, सब जग उनको ध्यावें॥
जो तुम वचन सुधारस पीते, सब उनके वच पालें।
जो तुम आज्ञा पालें उनकी, कोई न आज्ञा टालें॥ ३॥

जो तुम सन्मुख भक्तिभाव से करें नृत्य खुश होके।
तांडव नृत्य करे उन आगे, सुरपति भी मुद होके॥
जो तुम गुण को नित्य उचरते, भवि उनके गुण गाते।
जो तुम सुयश सदा विस्तारें, वे जग में यश पाते॥ ४॥

मन से भक्ति करें जो भविजन, वे मन निर्मल करते।
वचनों से संस्तव को पढ़के, वचन सिद्धि को वरते॥
काया से अंजलि प्रणमन कर, तन का रोग नशाते।
त्रिकरण शुचि से वंदन करके, कर्मकलंक नशाते॥ ५॥

जय जय सर्व केवली जिनवर, जय जय गणधर देवा।
जय जय सब श्रुतकेवलि मुनिवर, इन्द्र करें तुम सेवा॥
जय जय गुरु आचार्य उपाध्याय, सर्व साधु त्रयकालिक।
जय जय मूल उत्तर गुणधारक, सुरनरपति आराधित॥ ६॥

कुंद कुंद गुरु उमास्वामि गुरु, समंतभद्र गुरु प्रभृति।
श्री गुणधर आचार्य श्रुतनिधी, श्रीधरसेन महायति॥
जय जय वर्तमान के मुनिगण सूरि उपाध्याय साधु।
रत्नत्रयभृत नग्न दिगंबर मूलगुणों से संयुत॥ ७॥

जय जय त्रयकालिक जिनवर के, शुभकर पंच कल्याणक।
जय जय पंच कल्याणक तिथि शुभ, भविजन मन शुचिकारक॥
जय जय सर्व तीर्थक्षेत्रों की, जय निर्वाणस्थल की।
जय जय सब अतिशय क्षेत्रों की, जय पावन स्थल की॥ ८॥

जय जय साड़ी मात्र परिग्रह धारि आर्यिकाओं की।
ब्राह्मी सुंदरि सुलोचना सीता व चंदना आदी॥
जय जय धर्ममूर्तियाँ ये सब संयतिका कहलातीं।
स्त्रीलिंग को छेद तीसरे भव में शिव पा जातीं॥ ९॥

जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र में आर्य खंड है सुन्दर।
छहकालों के परिवर्तन से, सदा न मोक्ष सुलभतर॥
चौथे काल में शिवपद पाते, पंचम में शिवपथ है।
साक्षात् मोक्ष नहिं इस युग से, फिर भी परंपरा से॥ १०॥

यहाँ न अकृत्रिम कुछ रचना, जिनगृह नग नदि सागर।
कृत्रिम ही सब नदी सरोवर, वन पर्वत उप सागर॥
छठे काल के अंत यहाँ पर, होता प्रलय भयंकर।
इस कारण यहाँ शाश्वत नहिं कुछ, ऐसा कहें मुनीश्वर॥ ११॥

इस विधि श्रीयति वृषभ सूरि आदि ने कहा शास्त्रों में।
उसको पढ़ सम्यग्ज्ञानी बन श्रद्धा धारूँ मन में॥
हे जिनदेव! कृपा ऐसी अब, मुझ पर तुरतहिं कीजे।
'सम्यग्ज्ञानमती' लक्ष्मी को देकर, निजसम कीजे॥ १२॥

दोहा

तुम पद आश्रय जो लिया, सो पहुँचे निजधाम।
इसीलिए तुम चरण में, शत शत करूँ प्रणाम॥ १३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपभरतक्षेत्रसंबधिआर्यखंडे सर्वकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसाधुगणतीर्थ-क्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिनचैत्य चैत्यालय तथा जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से वे आत्म निधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर यहाँ पर कभी ना आवते॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० ६]

जम्बूद्वीपस्थ ऐरावत क्षेत्रसंबंधि भूतकालीन तीर्थंकर पूजा

स्थापना—शंभुछंद

वर जंबूद्वीप प्रथम इसमें, यह क्षेत्र सातवाँ मन मोहे।
ऐरावत क्षेत्र उसे जानो, सुरगिरि के उत्तर दिश सोहे॥
छह काल परावर्तन इसमें, चौथे में तीर्थंकर होते।
जिनवर अतीत का आह्वानन करके पूजत हम मल धोते॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

भुजंगप्रयात छंद

पयोराशि का नीर प्रासुक भराऊँ।प्रभो पाद पंकेज में मैं चढ़ाऊँ।
जजूँ नित्य चौबीस तीर्थंकरों को।भजूँ नित्य आनंद शुद्धात्मनी को॥१॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं....।

सुगंधीत चंदन घिसा भर कटोरी।
प्रभो पाद चर्चूं कटे कर्म डोरी॥जजूँ नित्य० ॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः चंदनं....।

भरे थाल में धोय अक्षत अखंडे।
चढ़ाऊँ तुम्हें पुंज पापारि खंडे॥जजूँ नित्य० ॥ ३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अक्षतं....।

चमेली जूही केतकी पुष्प लाऊँ।
जितेंद्रिय प्रभू के चरण में चढ़ाऊँ॥जजूँ नित्य० ॥ ४॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पुष्पं....।
कलाकंद लाडू इमरती मंगाऊँ।
क्षुधारोग हर्ता प्रभू को चढ़ाऊँ॥जजूँ नित्य० ॥ ५॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं....।
जले ज्योति कर्पूर की ध्वांत नाशे।
तुम्हें दीप से पूजते ज्ञान भासे॥जजूँ नित्य० ॥ ६॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः दीपं....।
अगुरु श्वेत चंदन मिली धूप खेऊँ।
उड़ा कर्म की भस्म तुम पाद सेऊँ॥जजूँ नित्य० ॥ ७॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः धूपं....।
अनंनास अंगूर नींबू मंगाऊँ।
प्रभो मुक्ति हेतु तुम्हें मैं चढ़ाऊँ॥जजूँ नित्य० ॥ ८॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः फलं....।
भरे थाल में नीर गंधादि सुंदर।
चढ़ाऊँ तुम्हें ना मिले फिर भवांतर॥जजूँ नित्य० ॥ ९॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ॥ १०॥
शांतये शांतिधारा।
हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर पद पद्म पुष्पांजलि अर्पण करूँ॥ ११॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

सोरठा

परमानंद स्वरूप, परमज्योति परमातमा।
परमदिगंबर रूप, पुष्पांजलि अर्पण करूँ॥ १॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

चौपाई

पंचरूप जिनराज महान, धर्मतीर्थकर सुख की खान।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ १॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपंचरूपजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री जिनधर तीर्थेश अनूप, पाया शुद्ध निरंजन रूप।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ २॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजिनधरजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनवर सांप्रतिकं शुभनाम, मनवचतन से करूँ प्रणाम।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ ३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसांप्रतिकजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनवर ऊर्जयंत गुणखान, करते स्वात्म सुधारस पान।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ ४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीऊर्जयंतजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री आधिक्षायिक जिनराज, भवदधि तारणतरण जिहाज।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ ५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीआधिक्षायिकजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री अभिनंदन जगके ईश, नित शत इंद्र नमावें शीश।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ ६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअभिनंदनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनवर रत्नसेन अभिराम, पुरुष चिदंबर भुवन ललाभ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ ७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीरत्नसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री रामेश्वर गुण आधार, मूर्तिरहित फिर भी साकार।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ ८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीरामेश्वरजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्रीअनंगउज्झित जिननाथ, वंदन करूँ नमाकर माथ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ ९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअनंगोज्झितजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

तीर्थंकर विन्यास जिनेश, भक्तजनों के हरें कलेश।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ १०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविन्यासजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनअरोष को पूजें भव्य, जीत कषाय बनें कृतकृत्य।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ ११॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजिनअरोषजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री सुविधान महासुखतृप्त, पूजत भविजन हों संतृप्त।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ १२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुविधानजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनवर श्री प्रदत्तगुणपूर, किया कर्मगिरि चकनाचूर।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ १३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रदत्तजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री कुमार तीर्थंकर नाथ, मुक्तिबल्लभा किया सनाथ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ १४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकुमारजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

सर्वशैल जिनराज महान, गुणरत्नाकर सर्व प्रधान।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ १५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसर्वशैलजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

नाथ प्रभंजन कर्म विडार, भविजन हेतु सुखभंडार।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ १६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रभंजनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री सौभाग्यनाथ तीर्थेश, ब्रह्मा विष्णु बुद्ध परमेश।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ १७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसौभाग्यनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री व्रतविंदु जिनेश्वर आप, व्रत दे सबजन करो अपाप।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ १८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीव्रतविंदुजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

देव सिद्धिकर सिद्धस्वरूप , आत्मसुधारस तृप्त अनूप।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज , पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ १९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसिद्धकरजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

ज्ञानशरीर जिनेश्वर आप , मुनिगण का हरते भव ताप।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज , पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ २०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीज्ञानशरीरजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री कल्पद्रुम जिनवर देव , इच्छित फल देते स्वयमेव।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज , पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ २१॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकल्पद्रुमजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

जिनवर तीर्थफलेश महेश, मुनिगण सुरगण नमें हमेश।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज , पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ २२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीतीर्थफलेशजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री दिनकर अद्भुत भास्वान, हरते भविजन मम अज्ञान।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज , पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ २३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीदिनकरजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

तीर्थंकर वीरप्रभु देव , सुरनर करें तुम्हारी सेव।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज , पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य॥ २४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवीरप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

पूर्णार्घ्य

ऐरावत के तीर्थंकर , भूतकाल के सिद्ध।
पूरण अर्घ्य चढ़ायके , लहूँ रिद्धि नव निद्ध॥ २५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपंचरूपादिवीरप्रभपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ....।
जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा

पूरब भव में आपने ; सोलह कारणभाय।
तीर्थंकर पदपायके , तीर्थ चलाया आय॥ १॥

रोलाछंद

दर्शविशुद्धि प्रधान नित्यप्रती प्रभु पाके।
अष्ट अंग से शुद्ध दोष पच्चीस हटाके॥
मनवचकाय समेत विनयभावना भायी।
मुक्तिमहल का द्वार भविजन को सुखदायी॥ २॥
व्रतशीलों में आप नहिं अतिचार लगाया।
संतत ज्ञानाभ्यास करके कर्म खपाया॥
भवतन भोग विरक्त मन संवेग बढ़ाया।
शक्ति के अनुसार चउविधदान रचाया॥ ३॥
बारहविध तपधार आतम शक्ति बढ़ाई।
धर्म शुक्ल से सिद्ध साधु समाधि कराई॥
दशविध मुनि की नित्य, वैयावृत्य किया था।
सर्वशक्ति से पूर्ण, बहु उपकार किया था॥ ४॥
श्री अर्हन्त जिनेश, भक्ति हृदय में धरके।
सूरि परमपरमेश गुण स्तवन उचरके॥
उपाध्याय गुरुदेव, शिवपथ के उपदेष्टा।
प्रवचन भक्ति समेत, गुण गण भजा हमेशा॥ ५॥
षट् आवश्यक नित्य करके दोष नशाया।
हानि रहित परिपूर्ण, निजकर्त्तव्य निभाया॥
मार्ग प्रभावन पाय, धर्म महत्त्व बढ़ाया।
प्रवचन में वात्सल्य, कर निज गुण प्रगटाया॥ ६॥
सोलह कारण सिद्ध, पंचकल्याणक पाया।
दिव्यध्वनी से नित्य, धर्म सुतीर्थ चलाया॥
भव्य अनंतानंत जग से पार किया है।
मुक्तिरमा को पाय, शिवपुर धाम लिया है॥ ७॥
मैं पूजूँ नित आप, प्रणमूँ भक्ति बढ़ाऊँ।
जिस विध हो उस रीति, निजगुण संपत्ति पाऊँ॥
चिच्चैतन्य स्वरूप, चिन्मय ज्योति जलाऊँ।
पूर्ण 'ज्ञानमति' रूप, परमज्योति प्रगटाऊँ॥ ८॥

दोहा

तुम प्रसाद से नाथ अब, पूरी हो मम आश।
इसीलिये तुम पद कमल, नमूँ नमूँ धर आश॥ ९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जयमाला अर्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिनचैत्य चैत्यालय तथा जिनधर्मजिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्ण कर यहाँ पर कभी ना आवते॥ १॥

इत्याशीर्वादः॥

[पूजा नं० ७]

जंबूद्वीप ऐरावत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

स्थापना—अडिल्ल छंद

ऐरावत के वर्तमान जिनराज हैं।
भववारिधि से तारण तरण जिहाज हैं॥
भक्तिभाव से करूँ यहाँ उन थापना।
पूजूँ भक्ति बढ़ाय करूँ हित आपना॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं—रोला छंद

सुरगङ्गा का नीर, कंचन कलश भराऊँ।
जिनवर चरण सरोज, पूजत करम नशाऊँ॥
चौबीसों जिनराज, तुम पद पद्म जजूँ मैं।
आतम अनुभव पाय, परमानंद भजूँ मैं॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मजरा-मृत्युविनाशनाय जलं....।

मलयागिरि घनसार, केसर संग घिसाऊँ।
तीर्थंकर पदकंज, पूजत दाह मिटाऊँ॥चौबीसों०॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः चंदनं...।

क्षीरोदधि के फेन सम उज्ज्वल तंदुल हैं।
परम पुरुष को पूज, होता सुख मंजुल है॥चौबीसों०॥ ३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अक्षतं...।

कल्पवृक्ष के पुष्प, सुरभित वर्ण वरण के।
कामजयी परमेश, चरण जजूँ रुचिधर के॥चौबीसों०॥ ४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पुष्पं...।

मधुर सरस पकवान भर कर थाल लिया मैं।
क्षुधा रोग हरनाथ, पूजत सौख्य लिया मैं॥चौबीसों०॥ ५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं...।

घृत दीपक की ज्योति बाहर तिमिर हरे है।
तुम पद पूजत शीघ्र मन का मोह टरे है॥चौबीसों०॥ ६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः दीपं...।

कृष्णागरु वर धूप, अग्नी संग जलाऊँ।
कर्मकलंक विदूर आतम शुद्ध बनाऊँ॥चौबीसों०॥ ७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः धूपं...।

पिस्ता पूग बदाम, फल अखरोट चढ़ाऊँ।
फल से जिनवर पूज, सर्वोत्तम फल पाऊँ॥चौबीसों०॥ ८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः फलं...।

जल गंधादिक द्रव्य लेकर अर्घ्य बनाऊँ।
भव विजयी जिनपाद, पूजत पाप नशाऊँ॥

चौबीसों जिनराज, तुम पद पद्म जजूँ मैं।
आतम अनुभव पाय, परमानंद भजूँ मैं॥ ९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं . . . ।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ॥ १०॥

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर पद पद्मा पुष्पांजलि अर्पण करूँ॥ ११॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

कर्ममलीमस आत्मा, प्रभु तुम भक्ति प्रसाद।
शुद्ध बुद्ध होवे तुरत, अतः नमूँ तुम पाद॥ १॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

पद्धडीछंद

जिन बालचंद्र त्रैलोक्यनाथ, गण ईश भजें नित नमित माथ।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ १॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीबालचंद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं . . . . ।

प्रभु सुव्रत तीर्थंकर महेश, तुमको ध्यावे मुनिगण अशेष।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ २॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुव्रतजिनेंद्राय अर्घ्यं . . . . ।

श्री अग्निसेन जिनदेव आप, भविजन के हरते सकल ताप।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ ३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअग्निसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं . . . . ।

श्री नंदिसेन के पाद कंज, योगी गण वदंत कर्म भंज।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ ४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनंदीसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं . . . . ।

जिनवर श्रीदत्त पदारविंद, जजते ही मिटता सकलद्वंद्व।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ ५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीदत्तजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
जिनवर व्रतधर हो श्रेष्ठ चंद्र, भविमन आह्लादक श्रेष्ठ मंत्र।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ ६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीव्रतधरजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
श्री सोमचंद्र अद्भुत दिनेश, अज्ञान तिमिर को करें शेष।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ ७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसोमचंद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
श्रीमन धृतिदीर्घ अपूर्व तेज, जनमन का तत्क्षण हरे खेद।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ ८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधृतिदीर्घजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
जिन शतायुष्य सब कर्म चूर, भक्तों के संकट करें दूर।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ ९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशतायुष्यजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
जिनवर विवसित अद्भुत महान, सुरकिन्नर गावें कीर्तिगान।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ १०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविवसितजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
श्रेयान जिनेश्वर मुक्तिकांत, वंदन से हरते मोहध्वांत!
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ ११॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीश्रेयोजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
जिन विश्रुतजल भवजलधि नाव, जो ध्यावे पावें शुद्ध भाव।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ १२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविश्रुतजलजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
जिन सिंहसेन तीर्थेश आप, भाक्तिकजन के सब हरो पाप।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ १३।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसिंहसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
उपशांत जिनेश्वर सुनो टेर, हरिये भव भव का सकल फेर।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ १४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीउपशांतजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

हे नाथ ! गुप्तशासन जिनेश, मेरे हरिये सब राग द्वेष।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ १५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीगुप्तशासनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनवर अनंतवीरज महान, गुणमणिरत्नों की अतुल खान।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ १६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअनंतवीर्यजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री पार्श्व जिनेश्वर देवदेव, भवसंकट करिये तुरत छेव।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ १७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपार्श्वजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनवर अभिधान सुबोध पुंज, इन्द्रादि नमें धर रत्नपुंज।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ १८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअभिधानजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

मरुदेव तीर्थकर सूर्य तुल्य, भविजन मन पंकज करें फुल्ल।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ १९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमरुदेवजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनवर श्रीधर त्रैलोक्यदेव, शिवलक्ष्मी संयुत परमदेव।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ २०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीश्रीधरजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिन शामकंठ की दिव्य वाणि, भववल्ली काटन को कृपाणि।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ २१॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशामकंठजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिन अग्निप्रभ भवदाह दूर, भविजन भव अग्नी शमन पूर।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ २२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअग्निप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री अग्निदत्त जिनदेव देव, शिवकांता इच्छुक करें सेव।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ २३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअग्निदत्तजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री वीरसेन भगवान आप, निज स्वात्म सुधा पीकर अपाप।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत॥ २४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवीरसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य—सोरठा

श्री चौबीस जिनेश, सकल अमंगल को हरें।
पूरें सौख्य हमेश, पूजूँ पूरण अर्घ्य ले॥ २५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीबालचंद्रादिवीरसेनांतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

चाल—हे दीनबन्धु

जै तीर्थनाथ! आप धर्मतीर्थ चलाते।
जै जै स्वयं के पास भक्तगण को बुलाते॥
जो भव्य धर्म तीर्थ में स्नान करे हैं।
ये पाप मल को धोके हृदय साफ करे हैं॥ १॥

जिस मात ने तुमको गरभ में मास नव धरा।
त्रिभुवनपती को जन्म दे निजभव सफल करा॥
जननी वही जिनजन्म से पावन करी धरा।
संपूर्ण नारियों में रत्न वह शुभंकरा॥ २॥

वे ही जनक सच्चे हुये जो आपके पिता।
जिनने जनम दे आपको मेटी जगत व्यथा॥
तन भी पवित्र आपका सुद्रव्य कहावे।
शुभ ही सभी परमाणुओं से प्रकृति बनावे॥ ३॥

तुम देह के आकार वरण गंध आदिकी।
पूजा करें वे धन्य मनुज जन्म करें भी॥
नगरी वही पावन हुई जिसमें जनम लिया।
दीक्षा जहाँ ली वह सुथल भी पूज्य कर दिया॥ ४॥

जहँ पे हुआ कैवल्य औ निर्वाण की भूमी।
सब पूज्य हुई पाँच ही कल्याण की भूमी॥

जिस क्षण गर्भ में आ बसे जिस दिन जनम लिया।
जिस काल में दीक्षा व ज्ञान मोक्ष पद लिया॥ ५॥

वे दिन सभी पावन हुये प्रभु के प्रसाद से।
उस काल की पूजा करें तुम नाम जाप से॥
जो भाव आपके वही जग में प्रधान हैं।
उनको जो सतत पूजते ते भाग्यवान हैं॥ ६॥

इस विध सुद्रव्य क्षेत्र काल भाव सभी भी।
होते पवित्र आपके आश्रय से सभी भी॥
सुद्रव्य क्षेत्रकाल भाव प्राप्ति के लिये।
निजात्म तत्त्व साधना की प्राप्ति के लिये॥ ७॥

मैं बार बार आपके द्रव्यादि को गाऊँ।
इनके निमित्त स्वात्म की आराधना पाऊँ॥
फिर बार बार इस जगत में जन्म ना धरूँ।
'सुज्ञानमती' पायके सिद्धयंगना वरूँ॥ ८॥

दोहा

द्रव्य क्षेत्र औ काल शुभ, शुद्ध भाव शिव हेतु।
तुम भक्ती परसाद से, मिलें हमें निज हेतु॥ ९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जयमाला अर्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से वे आत्म निधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर यहाँ पर कभी ना आवते॥ १०॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० ८]

जंबूद्वीप ऐरावतक्षेत्र भविष्यत्कालीन तीर्थंकर पूजा

स्थापना—नरेन्द्र छंद

जम्बूद्वीप सुबीच सुदर्शन, मेरू के उत्तर में।
ऐरावत है क्षेत्र सातवाँ, आर्यखण्ड के मधि में॥
चौथेकाल विषे तीर्थंकर, होंगे भावी युग में।
पूजन हेतु करूँ आह्वानन, फेर भ्रमूँ ना भव में॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं—द्रुतविलंबित छन्द

सलिल शीतल मिष्ट भराइये, जिनपदाम्बुज धार कराइये।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूँ भव क्लेश को॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मजरा-मृत्युविनाशनाय जलं....।

मलयचन्दन केशर मिश्र के, मदनराज जयी पद चर्च के।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूँ भव क्लेश को॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः चंदनं...।

धवल अक्षत धौत अखण्ड हैं, जजत पुंज मिले सुख कंद है।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूँ भव क्लेश को॥३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अक्षतं..।

सुमन कल्पतरु के लाइये, मदनजित पदकंज चढ़ाइये।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूँ भव क्लेश को॥ ४॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पुष्पं....।
मधुर मिष्ट इमरती आदि ले, सतत तृप्त प्रभु पद अर्च लें।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूँ भव क्लेश को॥ ५॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं..।
कनक दीपक ज्योति सुजगमगे, तुम जजत बुधि अन्तर में जगे।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूँ भव क्लेश को॥ ६॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः दीपं....।
अगुरु कृष्णागरु वर धूप है, अगनि में खेवत सुखरूप है।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूँ भव क्लेश को॥ ७॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः धूपं....।
सुरभि एला फल केला लिये, जिन समर्चत फल वांछित लिये।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूँ भव क्लेश को॥ ८॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः फलं....।
जलफलादिक अर्घ्य मिलायके, तुम पदाम्बुज मस्तक नायके।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूँ भव क्लेश को॥ ९॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं..।

सोरठा

तीर्थंकरपरमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ॥ १०॥
शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दशदिशा।
तीर्थंकर पदपद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ॥ ११॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

परमशुद्ध परिणामहित, तुम पद पूजूँ आज।
पुष्पांजलि अर्पण करूँ, भरो आश जिनराज॥ १॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

शंभुछंद

तीर्थंकर श्री सिद्धार्थदेव, भवि जन को सिद्धी देते हैं।
जो हृदय कमल में भक्ती से, उनको विधिवत धर लेते हैं॥
हम पूजें अर्घ्य चढ़ाकर के, श्रद्धा से प्रभु गुण गान करें।
सब इष्ट वियोग अनिष्ट योग, भय रोग शोक की हान करें॥ १॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धार्थजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री विमल जिनेश्वर इन्द्रिय क्रम, विरहित वरज्ञान सहित मानें।
जो सकल विमल केवल बोधामृत, इच्छुक हैं वे सरधानें॥
हम०॥ २॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविमलजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

जयघोष जिनेश्वर तीर्थरूप, अगणित जीवों को पार करें।
सुरनर किन्नर वीणा लेकर, गुण गावें तन का भार हरें॥
हम०॥ ३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजयघोषजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिन नंदिसेन निज भक्तों को, आनन्दामृत से तृप्त करें।
निज आत्मसुधारस के प्यासे, नितप्रति उनका संस्तव उचरें॥
हम०॥ ४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनंदिसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनराज स्वर्गमंगल जग में, सर्वत्र स्वर्ग-सा सुख देते।
जो उनकी श्रद्धाभक्ति करें, उनके सब संकट हर लेते॥
हम०॥ ५॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वर्गमंगलजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री वज्राधारी तीर्थंकर रत्नत्रय वज्र धरे कर में।
निजकर्म महागिरि को तत्क्षण, शतखण्ड करें शिव ले पल में॥

हम पूजें अर्घ्य चढ़ाकर के, श्रद्धा से प्रभु गुण गान करें।
सब इष्ट वियोग अनिष्ट योग, भय रोग शोक की हान करें॥ ६॥

ॐ ह्रीं अर्हं वज्राधारीजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

तीर्थंकर श्री निर्वाणनाथ, इनकी पूजा निर्वाण फलें।
इस हेतु से ही गणधर भी, नित ध्यान धरें सब दोष टलें॥
हम०॥ ७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनिर्वाणजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनराज धर्मध्वज पदचिह्नों के पथिक धर्म की ध्वज धरते।
फिर धर्मचक्र के स्वामी बन, मुक्ती साम्राज्य तुरत लभते॥
हम०॥ ८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधर्मध्वजजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री सिद्धसेन के भाक्तिकगण, सर्वार्थसिद्धि वर लेते हैं।
फिर गर्भवास के दुःखों से, छुटकर निजसुख रस लेते हैं॥
हम०॥ ९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसिद्धसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिन महासेन की यशवल्ली, तीनों लोकों तक फैल रही।
जो उनकी पूजन करते हैं, उनके सब संकट फैल सही॥
हम०॥ १०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहासेनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

रविमित्र जिनेश्वर परमेश्वर, भक्तों के मन का तिमिर हरें।
वर भेदज्ञान की ज्योति से, अन्तर में पूर्ण प्रकाश भरें॥
हम०॥ ११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीरविमित्रजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री सत्यसेन तीर्थंकर की, कल्याणी वाणी अमृत है।
जो कर्ण कटोरे से पीते, वे समरस तृप्त सुखास्पद हैं॥
हम०॥ १२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसत्यसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

तीर्थंकर चन्द्रनाथ जग में, मुनि मन कैरव को विकसाते।
योगीश्वर चित्त कर्णिका पर, स्थापित कर उनको ध्याते॥
हम०॥ १३॥

ॐ ह्री अर्हं श्रीचंद्रनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री महीचन्द्र जिनदेव देव के, गुण सुर नर खग गाते हैं।
अतिशयकारी पुण्यार्जन कर, चिरसंचित कर्म नशाते हैं॥
हम० ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहीचन्द्रजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनराज श्रुतांजन भविजन के, नेत्रों को ज्ञान शलाका से।
अति शीघ्र खोल देते तब वे, जग देखें ज्ञानमयी दृग से॥
हम० ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतांजनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिन देवसेन के चरण कमल, सौ इन्द्रों से नित वंदित हैं।
जो वंदन पूजन करते हैं, वे नर नित प्रति आनंदित हैं॥
हम० ॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीदेवसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिन सुव्रतनाथ महाव्रतगुण, उत्तर गुण से भी पूर्ण रहें।
जो श्रद्धा से पूजें ध्यावें, वे भी व्रत चारित पूर्ण लहें॥
हम० ॥ १७ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुव्रतनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

तीर्थंकर श्री जिनेंद्र जग में, अतिशय महिमा को विस्तारें।
सुर ललनायें वीणा लेकर उनकी गुण गाथा उच्चारें॥
हम० ॥ १८ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजिनेंद्रनाथाय अर्घ्यं....।

जिनवर सुपार्श्व भव पाश छेद, मुक्ती कांता के वल्लभ हैं।
सब राग द्वेष मद मोह शून्य, उनका यश गाना दुर्लभ है॥
हम० ॥ १९ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुपार्श्वजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिननाथ सुकौशल मुक्ति रमा, वश करने में अति कुशल कहे।
जो उनकी भक्ति करें वे भी, शिव पाने में गुण कुशल गहें॥
हम० ॥ २० ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुकौशलजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनवर अनंत के गुण अनंत, गणधर भी पार नहीं पाते।
जो लेशमात्र भी गुण उचरें, वे भी भव वारिधि तर जाते॥

हम पूजें अर्घ्य चढ़ाकर के, श्रद्धा से प्रभु गुण गान करें।
सब इष्ट वियोग अनिष्ट योग, भय रोग शोक की हान करें॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअनंतनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
जिन विमल अमल गुण के धारी, जग का अघमल हर लेते हैं।
खगपति नरपति फणिपति चक्री, प्रभु के चरणाम्बुज सेते हैं॥
हम०॥ २२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविमलजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
जिन अमृतसेन वचन अमृत, बरसा भवि चातक तृप्त करें।
जिनवचन रसायन से सचमुच, सब जनम मरण रुज नष्ट करें॥
हम०॥ २३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअमृतसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।
जिन अग्निदत्त भवअग्नी से, झुलसे प्राणी को इस जग में।
निज वचन नीर से शीतलकर, आत्यंतिक शांति भरे चित में॥
हम०॥ २४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअग्निदत्तजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य—दोहा

ऐरावत के भावि जिन, चिन्तामणी अनूप।
चिंतित फल देवें सदा, भक्त बनें शिवरूप॥ २५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसिद्धार्थादिअग्निदत्तपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा

अतिअद्भुत लक्ष्मी धरें, समवसरण प्रभु आप।
तुम धुनि सुन भविवृंद नित, हरें सकल संताप॥ १॥

शंभुछंद

जय जय त्रिभुवन पति का वैभव, अंतर का अनुपम गुणमय है।
जो दर्श ज्ञान सुखवीर्य रूप, आनन्त्य चतुष्टय निधिमय है॥

बाहर का वैभव समवसरण, जिसमें असंख्य रचना मानी।
जब गणधर भी वर्णन करते, थक जाते मनपर्यय ज्ञानी॥ २॥

यह समवसरण की दिव्य भूमि, इक हाथ उपरि पृथिवी तल से।
द्वादश योजन उत्कृष्ट कहा, इक योजन हो घटते क्रम से॥
यह भूमि कमल आकार कही, जो इन्द्रनील मणि निर्मित है।
है गंधकुटी इस मध्य सही, जो कमल कर्णिका सदृश है॥ ३॥

पंकज के दल सम बाह्य भूमि, जो अनुपम शोभा धारे है।
इस समवसरण का बाह्य भाग, दर्पण तल सम रुचि धारे है॥
सब बीस हजार हाथ ऊँचा, यह समवसरण अतिशय शोभें।
एकेक हाथ ऊँची सीढ़ी, सब बीस हजार प्रमित शोभें॥ ४॥

पंगु अन्धे रोगी बालक, औ वृद्ध सभी जन चढ़ जाते।
अन्तर्मुहूर्त के भीतर ही, यह अतिशय जिन आगम गाते॥
इसमें शुभ चार दिशाओं में, अति विस्तृत महावीथियाँ हैं।
वीथी में मानस्तंभ कहें, जिनकी कलधौत पीठिका हैं॥ ५॥

इक योजन से कुछ अधिक तुंग, बारह योजन से दिखते हैं।
इसमें हैं दो हजार पहलू, स्फटिक मणी के चमके हैं॥
उनमें चारों दिश में ऊपर, सिद्धों की प्रतिमायें राजें।
मानस्तम्भों की सीढ़ी पर, लक्ष्मी की मूर्ति अतुल राजें॥ ६॥

ये अस्सी कोशों तक सचमुच, अपना प्रकाश फैलाते हैं।
जो इनका दर्शन करते हैं, वे निज अभिमान गलाते हैं॥
मानस्तम्भों के चारों दिश, जल पूरित स्वच्छ सरोवर हैं।
जिनमें अतिसुन्दर कमल खिले, हंसादि रवों से मनहर हैं॥ ७॥

ये प्रभु का सन्निध पा करके, ही मान गलित कर पाते हैं।
अतएव सभी अतिशय भगवन्! तेरा ही गुरुजन गाते हैं॥
मैं भी प्रभु तुम सन्निध पाकर, संपूर्ण कषायों को नाशूँ।
प्रभु ऐसा वह दिन कब आवे, जब निज में निज को परकाशूँ॥ ८॥

जिननाथ! कामनापूर्ण करो, निज चरणों में आश्रय देवो।
जब तक नहिं मुक्ति मिले मुझको, तब तक ही शरण मुझे लेवो॥

तब तक तुम चरण कमल मेरे , मन में नित स्थिर हो जावें।
जब तक नहिं केवल 'ज्ञानमती', तब तक मम मन तुम पद ध्यावे॥ ९॥

दोहा

तीर्थंकर गुणरत्न को , गिनत न पावें पार।
तीन रत्न के हेतु मैं , नमूँ अनंतों बार॥ १०॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः
जयमाला अर्घ्यं.....।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीता छंद

जो भव्य जम्बूद्वीप के तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से वे आत्म निधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर यहाँ पर कभी न आवते॥
इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० ९]

ऐरावत क्षेत्र के तीर्थंकर केवली साधु पूजा

अथ स्थापना—दोहा

ऐरावत शुभ क्षेत्र में , आर्यखंड के माहिं।
जिनवर केवलि साधु गण , पूजूँ उन्हें यहांहिं॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुसमूह!
अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुसमूह!
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुसमूह!
अत्र मम सन्निहिते भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टक—वसंततिलकाछंद

क्षीरोदधी जल लिया भर स्वर्ण झारी।
पूजूँ पदाब्ज प्रभु के अति सौख्य कारी॥
तीर्थेश केवलि गणीश मुनीश को मैं।
पूजूँ निजात्म सुख संपति हेतु ही मैं॥ १॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः जलं....।

सौगंध्य गंध घनसार विमिश्र कीजे।
पादाब्ज चर्च प्रभु के सुख शांति लीजे॥तीर्थेश०॥ २॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः चंदनं....।

मोती समान सित तंदुल धोय लेऊँ।
पादाब्ज अग्र बहु पुंज चढ़ाय देऊँ॥तीर्थेश०॥ ३॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः अक्षतं....।

मंदार कुंद अरविंद सुपुष्प लाऊँ।
पूजूँ पदाब्ज भव व्याधि व्यथा नशाऊँ॥तीर्थेश०॥ ४॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः पुष्पं....।

पूरी सुहाल बरफी भर थाल लाऊँ।
अत्यंत तृप्ति कर नाथ तुम्हें चढ़ाऊँ॥तीर्थेश०॥ ५॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः नैवेद्यं....।

कर्पूर ज्योति करती द्युति[1] को निशा[2] में।
पूजूँ तुम्हें प्रगट हो निज की दशा[3] मे॥तीर्थेश०॥ ६॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः दीपं....।

खेऊँ सुगंध दशगंध सुअग्नि संगी।
आत्मा पवित्र कर लूँ तुम भक्ति संगी॥तीर्थेश०॥ ७॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः धूपं....।

अंगूर आम पनसादिक सत्फलों से।
पूजें पदाब्ज फल ईप्सित हो उन्हीं के॥तीर्थेश०॥ ८॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः फलं....।

अर्पूं अनर्घ्य पद हेतुक अर्घ्य को मैं।
पाऊँ निजात्मधन सौख्य महान को मैं॥

---

१. प्रकाश २. रात्रि ३. अवस्था।

तीर्थेश केवलि गणीश मुनीश को मैं।
पूजूँ निजात्म सुख संपति हेतु ही मैं॥ ९॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

दोहा

ऐरावत के तीर्थकर, केवलिगण मुनिवृंद।
उन पद त्रयधारा करूँ, मिले शांति सुखकंद॥ १०॥

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, ले श्रीजिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि कर पूजते, मिटे सकल दुःख शोक॥ ११॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

ऐरावत के तीर्थकर, मुनिगण आदि महान।
पुष्पांजलि कर पूजते, मिलता सौख्य निधान॥ १॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

चौबोल छंद

निकट अतीत काल से पहले काल अनादी से लेकर।
ऐरावत में अनंत अवसर्पिणि उत्सर्पिणि के जिनवर॥
उन सब अनंत चौबीसी के तीर्थंकर की भक्ति करूँ।
काल अनादी से संबंधित कर्म शत्रु की शक्ति हरूँ॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रसंबंधिआसन्नअतीतकालात्पूर्वभूतकालीनअनंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

भूतकाल के अनंत अवसर्पिणि उत्सर्पिणि कालों में।
अनन्त मानव घाति कर्म हन केवल ज्ञानी पूज्य बनें॥
उन सब केवलि भगवंतों की नित प्रति अर्चा भक्ति करूँ।
वर्ण स्पर्श गंधरस विरहित निज आत्मा को सिद्ध करूँ॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रसंबंधिभूतकालीनअनंतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

निकट भविष्यकाल के नंतर काल चला आवे हि अनंत।
अनंत अवसर्पिणि उत्सर्पिणि में तीर्थंकर होय अनंत॥

भावी अनंत चौबीसी सब तीर्थंकर की भक्ति करूँ।
काल अनंतों से संबंधित कर्म शत्रु को भस्म करूँ॥ ३॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रसंबंधिआसन्नभाविकालानंतर-अनंतभविष्यत् कालीन-अनंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

भाविकाल के अनंत अवसर्पिणि उत्सर्पिणि कालों में।
अनंत मानव घाति कर्म हन केवल ज्ञानी हों उनमें॥
उन सब केवली भगवंतों की नितप्रति अर्चा भक्ति करूँ।
वर्ण स्पर्श गंधरस विरहित निज आतम को प्राप्त करूँ॥ ४॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रसंबंधिभविष्यत्कालीनअनंतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर प्रत्येक समय के अंतकृत केवलि दश दश।
घोर-घोर उपसर्ग सहन कर प्राप्त किया निज आतम पद॥
ऐरावत के सभी अंतकृत केवलियों को नित्य जजूँ।
मुझमें भी उपसर्ग सहन की शक्ती हो इसलिये भजूँ॥ ५॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रसंबंधिप्रत्येकतीर्थंकरसमयदशदशघोरोपसर्गविजयि-अंतकृत्केवलिभ्यः अर्घ्यं....।

वर्तमान में ऐरावत में, अवसर्पिणी काल वर्ते।
अनंत नर केवलज्ञानी बन, निज के मोक्षधाम पहुँचे॥
उन सब केवलि भगवंतो की नित प्रति अर्चा भक्ति करूँ।
काल अनादि से अशुद्ध ही निज आत्मा को शुद्ध करूँ॥ ६॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रसंबंधिवर्तमानकालीनसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

शंभुछंद

भूतकाल तीर्थंकर जिनके गणधर हुये अनंते हैं।
भाविकाल में भी होवेंगे, पाप अनंतों खंडे हैं॥
वर्तमान जिनवर के गणधर, जो भी वहाँ हुये सबको।
नित प्रति अर्घ चढ़ाकर पूजूँ, भाव भक्ति से गणधर को॥ ७॥
ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

जो द्वादशांग श्रुत के पाठी, निर्ग्रंथ दिगंबर श्रुतज्ञानी।
वे श्रुतकेवलि परोक्ष से भी, त्रिभुवन को जाने शुभध्यानी॥
ये श्रुत पारंगत महासाधु, हो चुके हो रहे होवेंगे।
उन सबकी पूजा करने से, मनवांछित पूरे होवेंगे॥ ८॥
ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं

जो पंचाचार धर्म दशविध, द्वादशविध तपको नित करते।
षट् आवश्यक त्रयगुप्ति सहित, छत्तिस गुण को निज में धरते॥
ऐसे आचार्य स्वपर हित रत, हो चुके हो रहे होवेंगे।
उनकी पूजा भक्ती करते, भक्तों के संकट खोवेंगे॥ ९॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्येभ्यः अर्घ्यं....।

जो ग्यारह अंग पूर्व चौदह को, पढ़े पढ़ावें शिष्यों को।
या द्वादशांग को भी जानें, या तात्कालिक सब शास्त्रों को॥
वे उपाध्याय गुरु पथ दर्शक, हो चुके हो रहे होवेंगे।
उनकी पूजा जो करते हैं, वे परमानंद सुख भोगेंगे॥ १०॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वपाठकेभ्यः अर्घ्यं....।

व्रत समिति इंद्रियवश आवश्यक, पांच पांच पण षट् मानो।
कचलोच अचेलक अस्नानं, भूशयन अदंतधवन जानो॥
स्थिति भोजन एक भक्त ये सब, अट्ठाईस गुण जो मूल कहें।
इन संयुत सर्व साधुगण को, हम पूजें भवदधि कूल लहें॥

दोहा

ये अट्ठाइस मूलगण, उत्तर गुण चौंतीस।
पूर्ण चौरासी लाख हैं, मध्यम भेद अनेक॥
इन गुण युत दिग्वस्त्र मुनि, हुये हो रहे आज।
होवेंगे जो भी उन्हें, नमूँ नमाकर माथ॥ ११॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

चौबोलछंद

तीर्थंकर के गर्भजन्म तप ज्ञान मोक्ष कल्याणक वंद्य।
इनके पावन भूवन पर्वत तिथियाँ भी हैं जग अभिनंद्य॥
अन्य केवली मुनियों के तप ज्ञान मोक्ष से पावन जो।
उन सब कल्याणक को पूजूँ नित्य जजूँ सब तीर्थों को॥ १२॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रसंबंधित्रैकालिकतीर्थंकरपंचकल्याणकतन्निमित्तकतीर्थ-अन्यसर्वतीर्थेभ्यः अर्घ्यं....।

ऐरावत के मध्य रजतगिरि, इससें पहली कटनी पर।
उभय पार्श्व में इक सौ दश, नगरी में रहते विद्याधर॥

वहाँ काल चौथा ही उनमें , केवलि मुनिगण करें विहार।
उनसे तीर्थ बने उन सबको , अर्घ चढ़ा पूजूँ सुखकार॥ १३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रमध्ये विजयार्धपर्वतविद्याधरश्रेणीषु भूतकालीनसर्व-केवलिश्रुतकेवलिसाधुसर्वतीर्थेभ्य: अर्घ्यं ....।

पूर्णार्घ्य—दोहा

केवलि जिनवर साधुगण , कल्याणक औ तीर्थ।
इन सबको मैं पूजहूँ , नित्य नमाकर शीश॥ १४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रसंबंधिसर्वकेवलिश्रुतकेवलिसाधुगणकल्याणकसर्व-तीर्थक्षेत्रभ्य: पूर्णार्घ्यं ....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलि:।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो नम:।

जयमाला

दोहा

कोटि सूर्य शशि से अधिक , प्रभु तुम ज्योतिर्मान।
गाऊँ तुम गुणमालिका , करिये द्योतित ज्ञान॥ १॥

रोला छंद

जै जै श्रीजिनदेव , अद्भुत अतिशय धारी।
जै जै श्रीजिनदेव , सबजन को सुखकारी॥
जै जै श्रीजिनदेव , सुरपति तुम गुण गावें।
जो भव से भयभीत वे तुम शरणे आवें॥ २॥

जंबूद्वीप सुमाहिं ऐरावत है सप्तम।
उसमें छहखंड माहिं आर्यखंड इक उत्तम॥
अवसर्पिणी है काल उत्सर्पिणी प्रसिद्धा।
इन दोनों के भेद छह छह कहें जिनंदा॥ ३॥

सुषमा सुषमा सुषम , सुषम दु:षम त्रय माने।
दुषमा सुषमा दुषम , दुषम दुषम त्रय जानें॥

पहले त्रय में कल्पतरु से वस्तु मिले हैं।
भोगभूमि इन नाम इनमें भोग भले हैं॥ ४॥

आगे त्रय में कर्मभूमि कही नर इनमें।
षट् किरियादिक कर्म करते हैं जीवन में॥
जब हो चौथाकाल तीर्थंकर जिन होते।
चारणऋद्धि समेत, मुनिगण भवमल धोते॥ ५॥

केवलिमुनिगणईश, श्रुतकेवलि मुनि बहुते।
सूरि पाठक साधु संतत वहाँ विहरते॥
दुषम काल में साधु मोक्ष नहीं जा सकते।
फिर भी धर्म धुरीण आत्म साधना करते॥ ६॥

भूत भविष्यत् काल वर्तमान के जितने।
जिनवर गणधर साधु नमूँ नमूँ दुख हरने॥
सर्व अनंत जिनेंद्र उन पद भक्ति करें जो।
पाप अनंतों खंड शिवपथ युक्ति धरें वो॥ ७॥

जिन जन्मादिक भूमि की स्तुति करें जो।
क्षेत्र स्तवन करंत भव भव पाप हरें वो॥
गर्भादिक तिथिकाल का स्तवन उचारें।
काल स्तवन हमेश, करके निज अघ टारें॥ ८॥

भक्ति नाव में बैठ भववारिधि वे तरते।
करें कर्मगिरि चूर मुक्ति रमा को वरते॥
मैं भी तुम स्तोत्र करूँ हर्ष मन धर के।
पूजा अर्चा और वंदन भी कर करके॥ ९॥

पाऊँ शक्ति अपूर्व यम को मार भगाऊँ।
निज आतम रसपूर परमानन्द उपाऊँ॥
करो कृपा अब नाथ! पुनः नहीं कुछ मांगूँ।
'ज्ञानमति' सुखराशि पूर्ण करो पग लागूँ॥ १०॥

दोहा

नाथ! आप शिवपथ विघन, करते चकनाचूर।
नमूँ नमूँ तुम पदकमल, मिले साम्य रसपूर॥ ११॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसाधुगणसर्व-कल्याणकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः जयमाला अर्घ्यं....।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिनचैत्य चैत्यालय तथा जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' सुख पूर्णकर यहाँ पर कभी ना आवते॥ १॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० १०]

सीमंधर आदि चार तीर्थंकर पूजा

स्थापना—नरेन्द्रछंद

मध्य लोक के मध्य प्रथम यह जंबूद्वीप मनोहर।
इसके बीच सुमेरू पर्वत सर्वश्रेष्ठ इस भू पर॥
इसके पूर्व अपर विदेह में, राजें चार जिनेश्वर।
उनका यहाँ करूँ आह्वानन पूजूँ भक्ति भावधर॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुतीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुतीर्थंकरसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुतीर्थंकरसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अष्टक—नरेन्द्रछंद

कमल पराग मिलित जल सुरभित जिनपद कमल चढ़ाऊँ।
भव-भव तृषा बुझावन कारण तुम पद प्रीति लगाऊँ॥
सीमंधर युगमंधर बाहु और सुबाहु जिनेश्वर।
जंबूद्वीप विदेह क्षेत्र के, जजूँ चार तीर्थेश्वर॥१॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुतीर्थंकरेभ्यः जलं....।

मलयज चन्दन दाह निकन्द जिनवर चरण चढ़ाऊँ।
हृदय ताप त्रिनिवारण कारण, तुम पद भक्ति बढ़ाऊँ॥सीमंधर०॥२॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुतीर्थंकरेभ्यः चंदनं....।

हार तुषार बर्फ सम तंदुल श्याम जीर सित लाए।
आतम अनुभव अमृत हेतु तुम पद पुंज रचाये॥सीमंधर०॥३॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुतीर्थंकरेभ्यः अक्षतं....।

सेवंती वासंती चंपक माला गूंथ बनाई।
मार विजयी जिनपद पंकज में निज सुख हेतु चढ़ाई॥सीमंधर०॥४॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुतीर्थंकरेभ्यः पुष्पं....।

दधि शर्कर केसर एला मिश्रित श्रीखंड बनाया।
भव भव क्षुधारोग वारण को तुम ढिग आय चढ़ाया॥सीमंधर०॥५॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुतीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं....।

घृत दीपक की वर्धमान लौ, जगमग जगमग भासे।
तुम चरणों की आरती करते भेद विज्ञान प्रकाशे॥सीमंधर०॥६॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुतीर्थंकरेभ्यः दीपं....।

एला चंदन कर्पूरादिक मिश्रित धूप सुगंधी।
जिन सन्मुख अग्नी में खेऊँ धूम उड़े दिश अंधी॥सीमंधर०॥७॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुतीर्थंकरेभ्यः धूपं....।

मौसम्बी खर्बूजा ककड़ी खर्जूरादि मंगाये।
शिवरमणी परमानंद हेतु भर भर थाल चढ़ाये ॥सीमंधर० ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुतीर्थंकरेभ्यः फलं....।

सलिल गंध तंदुल माला चरु दीप धूप फल लाके।
अर्घ चढ़ाऊँ बलि बलि जाऊँ निज सम्यक् निधि पाके ॥सीमंधर० ॥९ ॥
ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

दोहा

शांतिधार दे मैं जजूँ, चिन्मय जिनवर बिंब।
आत्यांतिक शांती करो, हरो सकल जगदंभ ॥ १० ॥
शांतये शांतिधारा।

धर्मतीर्थ कर्तार हैं, विहरमाण जिनराज।
जिनकी प्रतिमा पूजते, कुसुम चढ़ाऊँ आज ॥ ११ ॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

तीर्थंकर के पदकमल, नमूँ नमूँ सुखकंद।
पुष्पांजलि कर पूजते, नशे सकल भवकंद ॥ १ ॥
इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

शंभुछन्द

श्रीमेरु सुदर्शन के पूरब विदेह सीता के उत्तर तट।
है पुंडरीकिणी पुरी पिता श्रेयांस सती माता विश्रुत ॥
वृषचिह्न सहित सीमंधर भगवान अभी भी राजे हैं।
मैं उनको अर्घ्य चढ़ा करके पूजूँ आतम सुख भासे हैं ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसीमंधरजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्रीमेरु सुदर्शन के पूरब, विदेह सीता नदी दक्षिण में।
दृढ़रथ पितुमात सुतारा से, जन्मे प्रभु पुरी सुसीमा में ॥

गज चिह्न धरें श्री 'युगमंधर' तीर्थंकर समवसरण में हैं।
हम पूजें बहुविध भक्ति लिए, सबके ही लिये शरण वे हैं॥ २॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीयुगमंधरजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री जंबूद्वीप अपर विदेह, सीतोदा नदि के दक्षिण में।
वहाँ वीतशोक पुरि के राजा उन रानी से भगवन जन्मे॥
मृगचिह्न सहित 'श्रीबाहु' आप विहरण कर भविजन हरषाते।
हम पूजें अर्घ्य चढ़ा करके प्रभु धर्मामृत तुम बरसाते॥ ३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीबाहुजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री जंबूद्वीप अपर विदेह, सीतोदा नदि के उत्तर में:
है पुरी अवध्या के नरपति उनकी रानी से प्रभु जन्मे॥
तीर्थेश 'सुबाहु' शत इंद्रों वंदित कपिचिह्न सहित राजें।
हम पूजें अर्घ्य चढ़ा करके, सब रोग शोक दारिद भाजें॥ ४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुबाहुजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जयमाला

दोहा

तीन लोक की संपदा, करें हस्तगत भव्य।
तुम गुण माला गायकें, पूरें सब कर्त्तव्य॥

चाल—हे दीनबंधु...

जैवंत मुक्तिकांत देव देव हमारे।
जैवंत भक्तवृन्द भवोदधि से उबारे॥
हे नाथ! आप जन्म से छह मास हि पहले।
धनराज रत्नवृष्टि करें मातु के महले॥ १॥

माता की सेवा करतीं श्री आदि देवियाँ।
अद्भुत अपूर्व भक्ति करें सर्व देवियाँ॥
जब आप मात गर्भ में अवतार था धरा।
तब इन्द्र सपरिवार आय भक्ति से भरा॥ २॥

प्रभु गर्भ कल्याणक महा उत्सव विधि किया।
माता पिता की भक्ति से पूजन विधि किया॥

हे नाथ! आप जन्मते सुरलोक हिल उठा।
इन्द्रासनों के कम्प से आश्चर्य हो उठा॥ ३॥

इन्द्रों के मुकुट आप से हि आप झुक गये।
सुर कल्पवृक्ष हर्ष से हि फूल फल गये॥
वे सुरतरु स्वयमेव सुमन वृष्टि करे थे।
तब इन्द्र आप जन्म जान हर्ष भरे थे॥ ४॥

तत्काल इन्द्र सिंह पीठ से उतर पड़े।
प्रभु को प्रणाम करके बार-बार पग पड़े॥
भेरी बजा सब देव का आह्वान किया था।
जन्माभिषेक करने का उत्साह हुआ था॥ ५॥

सुरराज आ जिनराज को सुरशैल ले गये।
सुरगण असंख्य मिलके नाथ का न्हवन किये॥
जब आप थे विरक्त देव सर्व आ गये।
दीक्षा विधी उत्सव महामुद से मना गये॥ ६॥

जब घातिया को घात जान सूर्य प्रकाशा।
तब इन्द्र आ अद्भुत समवशरण वहाँ रचा॥
तुम दिव्य वच पियूष को पीते असंख्य जन।
क्रम से करें वे मुक्ति बल्लभा का तो वरण॥ ७॥

इस जंबूद्वीप के विदेह शाश्वते बत्तीस।
यदि हों अधिक तीर्थेश तो वे होवेंगे बत्तीस॥
वे पाँच या दो तीन भी कल्याणकों के ईश।
होते हैं ऐसा शास्त्र में वर्णन किया मुनीश॥ ८॥

हों कम से कम तो चार तीर्थंकर हमेश ही।
मैं नित्य नमन करूँ आप विद्यमान ही॥
हो शीघ्र दर्श आपका ये मेरी प्रार्थना।
तुम दिव्य ध्वनि को सुनूँ बस एक याचना॥ ९॥

हे नाथ! आप कीर्ति कोटि ग्रन्थ गा रहे।
इस हेतु से ही भव्य आप शरण आ रहे॥

मैं आप शरण पाय के सचमुच कृतार्थ हूँ।
बस 'ज्ञानमति' पूर्ण होने तक ही दास हूँ॥ १०॥

दोहा

चार चतुष्टय के धनी, नमूँ चार तीर्थेश।
चारों गति के नाशने, चउ आराधन हेत॥ ११॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुतीर्थंकरेभ्यः
जयमाला पूर्णार्घ्यं....।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिनचैत्य चैत्यालय तथा जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर यहाँ पर कभी ना आवते॥ १॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० ११]

बत्तीस विदेह तीर्थंकर केवली साधु पूजा

स्थापना—गीताछंद

इस पूर्व अपर विदेह में बत्तीस विदेह कहावते।
उनमें निरंतर काल चौथा ही रहे मुनि गावते॥
होते वहाँ पर तीर्थंकर केवलि मुनिगण सर्वदा।
उन सर्व को मैं पूजहूँ आह्वान विधि करके मुदा॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थद्वात्रिंशत्विदेहसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधु-
समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थद्वात्रिंशत्विदेहसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधु-
समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थद्वात्रिंशत्विदेहसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधु-
समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं—भुजंगप्रयातछंद

मुनी चित्त सम स्वच्छ जल को लिया है।
प्रभू पाद में तीन धारा किया है॥
जजूँ तीर्थकर आदि पद पंकजों को।
मिटाऊँ सभी जन्म के संकटों को॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिद्वात्रिंशत्विदेहक्षेत्रस्थतीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्व-साधुभ्यः जलं....।

घिसा गंध कर्पूर मिश्रित किया है।
प्रभू चर्ण में चर्च समसुख लिया है॥जजूँ०॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिद्वात्रिंशत्विदेहक्षेत्रस्थतीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्व-साधुभ्यः चन्दनं....।

पयोराशि के फेन समश्वेत शाली।
धरूँ पुंज सन्मुख बनूँ भाग्यशाली॥जजूँ०॥ ३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिद्वात्रिंशत्विदेहक्षेत्रस्थतीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्व-साधुभ्यः अक्षतं....।

जुही मोगरा कुंद की माल लेके।
चढ़ाऊँ तुम्हें स्वात्म सुख आश लेके॥जजूँ०॥ ४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिद्वात्रिंशत्विदेहक्षेत्रस्थतीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्व-साधुभ्यः पुष्पं....।

जलेबी इमरती भरे थाल लाऊँ।
महातृप्तिकर आप चरणों चढ़ाऊँ॥जजूँ०॥ ५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिद्वात्रिंशत्विदेहक्षेत्रस्थतीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्व-साधुभ्यः नैवेद्यं....।

शिखा दीप की बाह्य का ध्वांत नाशे।
करूँ आरती ज्ञान की ज्योति भासे॥जजूँ०॥ ६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिद्वात्रिंशत्विदेहक्षेत्रस्थतीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्व-साधुभ्यः दीपं....।

जले धूप अग्नी विषे गंध फैले।
जले कर्म वो जो सदा हैं विषैले॥जजूँ०॥ ७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिद्वात्रिंशत्विदेहक्षेत्रस्थतीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्व-साधुभ्यः धूपं....।

पनस आम अंगूर गुच्छे भले हैं।
तुम्हें अर्पते सत्फलों को फले है॥
जजूँ तीर्थंकर आदि पद पंकजों को।
मिटाऊँ सभी जन्म के संकटों को॥ ८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिद्वात्रिंशत्विदेहक्षेत्रस्थतीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्व-साधुभ्यः फलं ....।

जलादी मिला अर्घ्य चरणों चढ़ाऊँ।
निजात्मीक संपत्ति मैं शीघ्र पाऊँ॥जजूँ०॥ ९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिद्वात्रिंशत्विदेहक्षेत्रस्थतीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्व-साधुभ्यः अर्घ्यं ....।

लिया नीर प्रासुक करूँ शांतिधारा।
सदा शांति होवे मिले भव किनारा॥जजूँ०॥ १०॥

शांतये शांतिधारा।

करूँ पुष्प अंजलि, जुही मोगरा ले।
भरूँ सौख्य संपत्ति, जगत में निराले॥जजूँ०॥ ११॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

बत्तिस देश विदेह में बत्तिस आरजखंड।
तीर्थंकर जिन मुनि सभी जजूँ हरूँ भवफंद॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

शंभुछंद

कच्छा विदेह के आर्यखंड, में क्षेमा नगरी रजधानी।
उस शाश्वत कर्मभूमि में नित, तीर्थंकर होते शिवगामी॥
जो काल अनादि से अब तक, आगे भि अनंतों कालों तक।
हो चुके हो रहे होवेंगे, उन तीर्थंकरों को पूजूँ नित॥ १॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थकच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे क्षेमानगर्यां भूतभविष्यत्वर्तमान-त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं ....।

इस नगरी में सामान्य केवली, जितने भी हो चुके वहाँ।
हो रहे तथा जो होवेंगे, शतइन्द्रों से भी वंद्य वहाँ॥
उनके दर्शन वंदन पूजन से, कर्मकालिमा धुलती है।
निजपरमानंद सुधारसमय आध्यात्मिक ज्योति खिलती है॥ २॥
ॐ ह्रीं कच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसामान्यकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर के गणधर अगणित, अब तक भि अनंतों मुक्ति गये।
जो वर्तमान हैं आगे भी, होवेंगे वे जगवंद्य हुये॥
सब गणधर सात ऋद्धिधारी, मनपर्यय ज्ञानी होते हैं।
उनको पूजूँ मैं अर्घ चढ़ा, वे भव भव का मल धोते हैं॥ ३॥
ॐ ह्रीं कच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे क्षेमानगर्यां त्रैकालिकगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

ग्यारह सुअंग चौदह पूरब के, पाठी श्रुतकेवलि माने।
उस आर्यखंड में हुये हो रहे, होवेंगे मुनि परधाने॥
श्रुतज्ञान नेत्र से वे त्रिभुवन, अवलोकन करने वाले हैं।
उनकी पूजा हम नित्य करें, वे भवदुःख हरने वाले हैं॥ ४॥
ॐ ह्रीं कच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

आचार्य उपाध्याय साधु तथा, ऋषिमुनियति औ अगनार कहे।
ये सर्व तपोधन त्रिभुवन में, वंदित दिक्अंबर धार रहे॥
इनमें बहुतेक ऋद्धिधारी, सामान्य मुनि भी जितने हैं।
उन सब त्रैकालिक को पूजूँ, उनको सुरगण भी प्रणमें हैं॥ ५॥
ॐ ह्रीं कच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकआचार्योपाध्यायसर्वसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर के गर्भावतार जन्मोत्सव, तप औ ज्ञानभूमि।
निर्वाणभूमि ये पांच कल्याणक, की सब हैं पावनभूमि॥
सामान्यकेवली ऋषिमुनि की, तप ज्ञान तथा निर्वाणभूमि।
उन सबको पूजूँ अर्घ्य चढ़ा, हों जितनी वहाँ अतिशयभूमि॥ ६॥
ॐ ह्रीं कच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थंकराणां पंचकल्याणस्थलसामान्यकेवलिऋषिमुन्यादिकस्य तपोज्ञाननिर्वाणस्थलअतिशयस्थलादिसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

कच्छाविदेह के मध्य रजतगिरि, उसमें पहली कटनी पर।
दोनों भागों में इक सौ दस, विद्याधर नगर बने सुन्दर॥

उन सबमें सतत केवली मुनि, चारण ऋषिगण भी रहते हैं।
उन सबको पूजूँ अर्घ चढ़ा, वे निज पर शुद्धि करते हैं॥ ७॥
ॐ ह्रीं कच्छादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतप्रथमश्रेण्युभयपार्श्वयोः दशोत्तरशतनगरीषु शाश्वतकर्मभूमिषु निरंतरविहरमाणत्रैकालिकसर्वकेवलिश्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं . . ।

है देश सुकच्छा आर्यखंड, मधि क्षेमपुरी नगरी जानो।
उसमें नित होते तीर्थंकर, वहाँ शाश्वत कर्मभूमि मानो॥
वे सब त्रैकालिक तीर्थंकर, जो कहे अनंतानंत वहाँ।
उन सबकी पूजा करने से, हो सब पापों का अंत यहाँ॥ ८॥
ॐ ह्रीं सुकच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे क्षेमपुरीनगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं . . . . ।

इस नगरी में सामान्य केवली, हुये हो रहे होवेंगे।
उन सबको वंदन करते ही, मेरे सब दुष्कृत धोवेंगे॥
इस भरतक्षेत्र के चारणऋषि, वहाँ पर जाकर दर्शन करते।
हम भक्ति-भाव से यहीं आज, पूजा करके संकट हरते॥ ९॥
ॐ ह्रीं सुकच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वसामान्यकेवलिभ्यः अर्घ्यं . . ।

तीर्थंकर के गणनायक भी, त्रैकालिक कहे अनंते भी।
उन सबको नमस्कार मेरा, मेरे दुःख का हो अंत अभी॥
इन गणधर की सुन दिव्यध्वनि, मुनिगण भी प्रमुदित होते हैं।
हम इनको अर्घ चढ़ाते ही, तन मन से पुलकित होते हैं॥ १०॥
ॐ ह्रीं सुकच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं . . . ।

श्रुतकेवलि अंगपूर्व धारी, ये वहां सदा ही होते हैं।
केवलि समान ये मुनिगण भी, सब त्रिभुवन को अवलोके हैं॥
बस अंतर केवल इतना ही, इनका श्रुतज्ञान परोक्ष रहे।
केवलि प्रभु का प्रत्यक्ष रहे, इन श्रुतकेवलि को प्रणमन हो॥ ११॥
ॐ ह्रीं सुकच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं . . . . ।

आचार्य उपाध्याय सर्व साधु, निज निजगुण से महिमाशाली।
ये वहाँ निरंतर होते हैं, शिवपथगामी गरिमाशाली॥
इनमें बहुऋद्धी युत मुनिगण, निर्ग्रंथ दिगम्बर साधूगण।
इन सर्व साधु को मैं पूजूँ, जितने भी त्रैकालिक यतिगण॥ १२॥
ॐ ह्रीं सुकच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं . . . . ।

जो गर्भजन्म तप ज्ञान और , निर्वाण कल्याणक भूमि कहीं।
सामान्य केवलि औ मुनिगण , इनसे भी पावन भूमि वहीं॥
जो अतिशय क्षेत्र अन्य कुछ भी , तीनों कालों के माने हैं।
उन सबको अर्घ चढ़ा करके , हम सर्व अमंगल हाने हैं॥ १३॥

ॐ ह्रीं सुकच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वपंचकल्याणकक्षेत्रअन्यपावन-क्षेत्रअतिशयक्षेत्रेभ्य: अर्घ्यं ....।

इस देश सुकच्छा के मधि है , विजयार्द्ध उसी की कंटनी पर।
दोनों भागों में विद्याधर की , इक सौ दस नगरी सुन्दर॥
उनमें केवलि श्रुतकेवली औ , आकाशगमन वाले मुनिगण।
सामान्य साधुगण नित विचरें , उनकी पूजा सुख यशमंडन॥ १४॥

ॐ ह्रीं सुकच्छादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्यउभयविद्याधरश्रेणीषु दशोत्तरशतैक-नगरीणां त्रैकालिककेवलिसर्वसाधुभ्य: अर्घ्यं ....।

है देश महाकच्छा विदेह , उस आर्यखंड के ठीक बीच।
विख्यात अरिष्टा नगरी में , तीर्थंकर होते जगत ईश॥
उन त्रयकालिक तीर्थंकर को , प्रणमूँ मैं भक्ति भाव पूर्वक।
निज आत्मानंद स्वभावी मुनि , उनको नित ध्याते रुचिपूर्वक॥ १५॥

ॐ ह्रीं महाकच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे अरिष्टानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं ....।

इसमें सामान्य केवली भी , अगणित नित होते रहते हैं।
वे कर्म अरी को दूर भगा , निज की सुख संपत्ति वरते हैं॥
उनका रुचि से वंदन करते , निज केवल ज्ञान प्रगट होता।
हम पूजें अर्घ चढ़ा करके , जिनभक्ति ही भवदधि नौका॥ १६॥

ॐ ह्रीं महाकच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वसामान्यकेवलिभ्य: अर्घ्यं ....।

सब तीर्थंकर के गणनायक , मनपर्यय ज्ञानी होते हैं।
ये दिव्यध्वनी को सुनकर के , भविजन संबोधित करते हैं॥
ये विघ्न निवारक मंगलकर , सब दुख दारिद को हरते हैं।
इनकी पूजा भक्ति करके , हम सर्व व्याधि को हरते हैं॥ १७॥

ॐ ह्रीं महाकच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्य: अर्घ्यं ....।

द्वादश अंगों के पारंगत, श्रुतकेवलि महामुनी माने।
श्रुतज्ञान चक्षु से ये मुनिगण, सारे त्रिभुवन को पहिचानें॥
ये आत्म सुधारस आस्वादी, इनकी जो पूजा करते हैं।
वे आतम अनुभव रस पीकर, शिव रमणी को वश करते हैं॥ १८॥
ॐ ह्रीं महाकच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

सूरी पाठक साधूगण सब, जिनकल्पी स्थविरकल्पी मुनि हैं।
ये वहाँ निरंतर होते हैं, निज आत्म तत्त्व के ज्ञानी हैं॥
इनके चरणों की भक्ति से, निजज्ञान सूर्य प्रकटित होगा।
रत्नत्रय की पूर्ति होगी, शिवपुर विश्राम तभी होगा॥ १९॥
ॐ ह्रीं महाकच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वाचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर के शुभ गर्भ जन्म, तप ज्ञान और निर्वाण पांच।
कल्याणक उत्सव इंद्र करें, उनसे पवित्र भू तीर्थराज॥
उन सब कल्याणक तिथियों की, कल्याणकभू तीर्थस्थल की।
मैं नितप्रति पूजा करता हूँ, मुझको मिल जावे सिद्धगति॥ २०॥
ॐ ह्रीं महाकच्छादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे सर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

इस देश महाकच्छा के मधि, रजताचल की कटनी ऊपर।
इक सौ दश विद्याधर नगरी, उन सबमें विहरें साधु प्रवर॥
केवलि श्रुतकेवलि ऋद्धियुत, मुनिगण वहाँ संतत रहते हैं।
हम उनको अर्घ्य चढ़ा करके, बहु रोग शोक दुख हरते हैं॥ २१॥
ॐ ह्रीं महाकच्छादेशविदेहमध्ये रजताचलस्य विद्याधरश्रेणीषु केवलिश्रुतकेवलि ऋषिमुनियतिअनगारेभ्यः अर्घ्यं....।

कच्छावति देश विदेह मध्य, आरजखंड बीच अरिष्टपुरी।
इस नगरी में हों तीर्थंकर, जो धर्मतीर्थ के हैं चक्री॥
उन भूतभावि औ वर्तमान, तीर्थंकर को वंदन करके।
हम पूजें अर्घ चढ़ा करके, वे भक्तों को निजसम करते॥ २२॥
ॐ ह्रीं कच्छावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे अरिष्टपुरीनगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

इस नगरी में केवलज्ञानी, जितने भी संप्रति होते हैं।
हो चुके हैं तथा आगे होंगे, वे सब भवदधि के सेतु हैं॥

उन सब शिवगामी मुनियों को, उन गंधकुटी को नमस्कार।
हम उनको अर्घ चढ़ाते हैं, वे हमें करें भवसिंधु पार॥ २३॥
ॐ ह्रीं कच्छावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।
तीर्थंकर के गणधर अगणित, जो समवसरण के भूषण हैं।
जिनबिन दिव्यध्वनि नहीं खिर, जो अतिशय गुण से पूरण हैं॥
उन जब त्रैकालिक गणनायक, गणधर परमेष्ठी को वंदूँ।
नित अर्घ चढ़ा करके प्रणमूँ, सब आधि व्याधि दुख को खंडूँ॥ २४॥
ॐ ह्रीं कच्छावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं..।
श्रुतज्ञानी सब श्रुत पारंगत, मुनिवर श्रुतकेवलि कहलाते।
ये निश्चित ही शिवगामी हैं, कतिपय भव से ही तर जाते॥
ऐसे श्रुतगामी को वंदन, मेरा श्रुतज्ञान विकास करो।
मैं भक्ति भाव से नित पूजूँ, मेरे भवदुख का नाश करो॥ २५॥
ॐ ह्रीं कच्छावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।
आचार्य उपाध्याय साधूगण, सब नग्न दिगबंर होते हैं।
ये अर्हन्मुद्रा के धारी, त्रिभुवन से पूजित होते हैं॥
इनके चरणों की पूजा से, निज में चारित्र प्रगट होता।
जो परमामृत से तृप्तीकर, सब द्रव्य भावमल को धोंता॥ २६॥
ॐ ह्रीं कच्छावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वाचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।
तीर्थंकर के कल्याण पाँच, जो इंद्र मनाया करते हैं।
अगणित केवलियों से पावन, स्थान तीर्थ भी बनते हैं॥
ये तीर्थक्षेत्र सब भव्यों को, भवदधि से तारन हारे हैं।
हम सब उनको नित प्रति पूजें, वे पावन करने वाले हैं॥ २७॥
ॐ ह्रीं कच्छावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडेसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।
इस कच्छावति के ठीक बीच, लंबा विजयार्ध गिरी सुन्दर।
उसकी पहली कटनी पर ही, इक सौ दश शाश्वत बने नगर॥
उनमें विद्याधर मनुज रहें, वे मुनिपद धर तप तपते हैं।
केवलि श्रुतकेवलि हो जाते, हम उन सबको नित यजते हैं॥ २८॥
ॐ ह्रीं कच्छावतीदेशविदेहमध्य-रजताचलस्य विद्याधरश्रेणीणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलिश्रुतकेवलिऋषिमुनियत्यनगारसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

आवर्ता देश विदेह कहा, उसमें आंरजखंड शाश्वत है।
उनके मधि है खड्गा नगरी में तीर्थंकर धर्मतीर्थ पति हैं॥
उन त्रयकालिक तीर्थंकर की, पूजा भक्ती अर्चा करते।
निज परमाह्लाद प्रगट होता, जिसके बल पूर्ण सुखी बनते॥ २९॥
ॐ ह्रीं आवर्तदिशविदेहसंबंधिआर्यखंडे खड्गानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

जो केवलज्ञान प्रगट करते, भव्यों को मार्ग दिखाते हैं।
उनकी भक्ति से मुनिगण भी, निज में ही निज को ध्याते हैं॥
उन सब केवलीज्ञानी प्रभु की, हम अर्चा पूजा करते हैं।
निज आत्म तत्त्व को प्राप्त करें, बस यही प्रार्थना करते हैं॥ ३०॥
ॐ ह्रीं आवर्तदिशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

द्वादशगण के नायक गणधर, सब समवसरण में रहते हैं।
तीर्थंकर प्रभु के प्रमुख शिष्य, ये ऋद्धि समन्वित रहते हैं॥
इनकी पूजा सब विघ्नों का, संहार करे दुख नाश करे।
सब ऋद्धि सिद्धि नव निधि देकर, भक्तों की पूरी आश करे॥ ३१॥
ॐ ह्रीं आवर्तदिशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

श्रुतसिंधु पारंगत श्रुतज्ञानी, द्वादश अंगों के हैं ज्ञाता।
इनकी पूजा से भव्यजीव, निजपर के हों सम्यक ज्ञाता॥
चारणऋद्धि से युत मुनिगण, वे भी इन मुनि को भजते हैं।
हम इनको अर्घ चढ़ा करके, निज आतम सुख को चखते हैं॥ ३२॥
ॐ ह्रीं आवर्तदिशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

चउविधसंघ के नेता सूरी, औ पढ़ें पढ़ावें उपाध्याय।
जो आत्म साधना में रत हैं, वे साधु कहाते स्वात्मध्याय॥
ये रत्न त्रयनिधि के स्वामी, हम इनकी अर्चा करते हैं।
मेरा रत्नत्रय पूर्ण करो, यह ही अभिलाषा रखते हैं॥ ३३॥
ॐ ह्रीं आवर्तदिशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकआचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

जो पंच कल्याणक भूमि वहाँ पर आर्यखंड में मानी है।
जो अन्य मुनिश्वर की तप ज्ञान मोक्ष भूमि भी मानी है॥

उन सबकी पूजा करने से, मेरा मन निर्मल होवेगा।
निज में निज को पा जाने से, परमात्मा प्रगटित होवेगा॥ ३४॥
ॐ ह्रीं आवर्तदिशविदेहसंबंधिआर्यखंडे तीर्थंकरअन्यमुनिआदिकस्य त्रैकालिकतीर्थ-क्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

आवर्ता देश मध्य शोभे, विजयार्ध गिरी त्रयकटनीयुत।
पहली कटनी पर विद्याधर के, नगर बने हैं इक सौ दश॥
उनमें नित चौथा काल रहे, अतएव सदा मुनि रहते हैं।
केवलिश्रुतकेवलि मुनिगण को, हम नित प्रति वंदन करते हैं॥ ३५॥
ॐ ह्रीं आवर्तदिशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिककेवलिश्रुत-केवलिऋषिमुनियत्यनगारसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

शुभ देश लांगलावर्ता है, उसमें इक आर्यखंड उत्तम।
तीर्थंकर चक्री नारायण, प्रतिनारायण बलदेवोत्तम॥
ये पुरुष शलाका वहाँ नित्य, मंजूषा नगरी में होते।
जो धर्मतीर्थ के तीर्थंकर, उनको पूजें हम नत होके॥ ३६॥
ॐ ह्रीं लांगलावर्तदिशविदेहसंबंधिआर्यखंडे मंजूषानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

वहाँ आर्यखंड में संतत ही, केवलज्ञानी भगवान बने।
उन सबकी गंधकुटी रचना, सुरगण करते प्रभु को प्रणमें॥
वे परमानंद अमृत पीकर, आत्मा को पूर्ण सुखी करते।
हम उनको अर्घ चढ़ा करके, पूजत ही निजसंपत्ति लभते॥ ३७॥
ॐ ह्रीं लांगलावर्तदिशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

सब गणधर चौंसठ ऋद्धि धरें, चारों ज्ञानों के धारी हैं।
इन बिन नहिं द्वादशांग वाणी, जो भव्यों को कल्याणी है॥
उन गणधर गुरु को हम पूजें, वे भव्यों के रक्षक माने।
उनकी पूजा से सब सुख हो, सब मंगल हो यह सरधाने॥ ३८॥
ॐ ह्रीं लांगलावर्तदिशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं..।

चौदह पूर्वों के ज्ञाता गुरु, श्रुतकेवलि अगणित होते हैं।
वे निजसे निजमें निज को ही, ध्याध्याकर प्रमुदित होते हैं॥
उन आत्मरसास्वादी मुनि की, हम नितप्रति अर्चा करते हैं।
निज आत्मसुधारस मिल जावे, यह ही अभिलाषा करते हैं॥ ३९॥
ॐ ह्रीं लांगलावर्तदिशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं..।

ऋषि मुनि यति औ अनगार भेद, निर्ग्रंथ साधु के माने हैं।
आचार्य उपाध्याय साधू से, इनमें ही भेद बखाने हैं॥
ये निज आत्मा के आराधक-साधक हैं सच्चे साधू हैं।
हम इनको पूजें अर्घ चढ़ा, ये निजसमतारस स्वादी हैं॥ ४०॥
ॐ ह्रीं लांगलावर्तदिशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं ....।

जिनके गर्भावतार आदिक, कल्याणक पाँच कहे जाते।
वे तीर्थंकर निज पदरज से ही, भू पर्वत तीर्थ बना देते॥
अगणित मुनिगण भी तप करके, निर्वाण धाम को पाते हैं।
उनसे पवित्र सब क्षेत्रों को, हम रुचि से अर्घ चढ़ाते हैं॥ ४१॥
ॐ ह्रीं लांगलावर्तदिशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरैः अन्यमुनिगणैश्चपवित्रतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं ....।

इस लांगलावर्ता देश बीच, विजयार्धगिरी त्रयकटनीयुत।
उसकी पहली कटनी पर है, विद्याधर नगरी इक सौ दस॥
वहाँ पर जो मुनिगण होते हैं, वे कर्म काट शिवपद पाते।
हम उनको अर्घ चढ़ा करके, पूजन करते अति हरषाते॥ ४२॥
ॐ ह्रीं लांगलावर्तदिशविदेहमध्ये विजयार्धगिरिविद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिककेवलिश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः अर्घ्यं ....।

पुष्कला देश सप्तम विदेह, उसमें जो आरजखंड रहे।
इस बीच औषधी नगरी है, उसमें तीर्थंकर सतत रहे॥
उनकी दिव्यध्वनि भव्यों को, नित मोक्ष मार्ग दिखलाती है।
हम पूजें अर्घ चढ़ा करके, हमको वह राह दिखाती है॥ ४३॥
ॐ ह्रीं पुष्कलादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे औषधीनगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं ....।

इस आर्यखण्ड में अगणित मुनि, केवलज्ञानी होते रहते।
वे निज भक्तों के सर्व पाप, निज दर्शन से धोते रहते॥
उन त्रैकालिक केवलियों की, हम नित प्रति अर्चा करते हैं।
हमको भी केवल ज्ञान मिले, नित यही भावना करते हैं॥ ४४॥
ॐ ह्रीं पुष्कलादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं ....।

तीर्थंकर के बारहगण के, गणधर होते चारों ज्ञानी।
ये भविजन खेती को सींचें, सबको करते शिवपथगामी॥
हम सब गणधर गुरु को पूजें, वे हमको निज सम्पत्ति देवें।
सब रोग शोक दुख दारिद को, वे इक क्षण में ही हर लेवें॥ ४५॥

ॐ ह्रीं पुष्कलादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं . . . ।

जो द्वादशांगश्रुत के ज्ञानी, निज ज्ञान प्रदान करें सबको।
वे परमानन्दामृत पीते, वाणी से तृप्त करें सबको॥
उन श्रुत केवलियों की पूजा, भक्तों का ज्ञान बढ़ाती है।
जो पूजें उनके अशुभ कर्म, की होनहार टल जाती है॥ ४६॥

ॐ ह्रीं पुष्कलादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे सर्वत्रैकालिकश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं . . . . ।

आचार्य उपाध्याय सर्व साधु, रत्नत्रय निधि के स्वामी हैं।
भव्यों को शिक्षा दीक्षा दें, ये शिवपुर के अनुगामी हैं॥
इनके दर्शन वंदन करने, सुर असुर मनुजगण आते हैं।
हम पूजें अर्घ चढ़ा करके, मेरा मन कमल खिलाते हैं॥ ४७॥

ॐ ह्रीं पुष्कलादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं . . . . ।

कुछ तीर्थंकर के पंचकल्याणक, कुछ के होते दो तीन सार।
सामान्य केवली मुनियों के, होते रहते नित प्रति विहार॥
इन सबकी रज से पावन भू, बस तीर्थ क्षेत्र बन जाती है।
हम पूजें अर्घ चढ़ा करके, भविजन मन शुद्ध बनाती है॥ ४८॥

ॐ ह्रीं पुष्कलादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे तीर्थंकरसामान्यकेवलिअन्यमुनिआदिकस्य-तीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं . . . . ।

पुष्कलादेश के ठीक मध्य, लम्बा रजताचल शोभ रहा।
इस पर विद्याधर नगर बनें, उनमें जिनधर्म प्रवर्त्त रहा॥
केवलिश्रुत केवलि महामुनि, नित प्रति वहां होते रहते हैं।
हम पूजें अर्घ चढ़ा करके, मेरे भव दुःख को दहते हैं॥ ४९॥

ॐ ह्रीं पुष्कलादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिककेवलि-श्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः अर्घ्यं . . . . ।

पुष्कलावती अष्टमविदेह, इसमें छः खण्ड कहे जाते।
है आर्य खण्ड में पुंडरीकणी, नगरी उसमें सुर आते॥

इसमें अतीत औ भाविकाल, के तीर्थंकर अनन्त माने।
श्री सीमन्धर प्रभु वर्तमान, इन सबकी हम पूजा ठाने॥ ५०॥
ॐ ह्रीं पुष्कलावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे पुण्डरीकिणीनगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थ-करेभ्यः अर्घ्यं....।

सामान्य केवली सदा यहाँ, अगणित होते ही रहते हैं।
भविजन को उपदेशामृत से, नितप्रति सन्तर्पित करते हैं॥
निजआतम अनुभव पाने को, हम उनकी पूजा करते हैं।
जो भविजन पूजा भक्ति करें, वे भवसागर से तरते हैं॥ ५१॥
ॐ ह्रीं पुष्कलावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे सर्वत्रैकालिककेवलिभ्यः अर्घ्यं...।

तीर्थंकर के अगणित गणधर, सब ऋद्धी के स्वामी होते।
भक्तों के विघ्न विनाशक ये, जग के अंतर्यामी होते॥
इन गणधर गुरु के चरणों की, जो पूजा अर्चा करते हैं।
वे सर्वामङ्गल दूर भगा, निज सुख सम्पत्ति को भरते हैं॥ ५२॥
ॐ ह्रीं पुष्कलावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

जो श्रुत सागर के पारङ्गत, वे श्रुत केवली कहाते हैं।
वे निज वाणीमय किरणों से, नित भव्य कमल विकसाते हैं॥
उनकी पूजा करने से ही, सब ईतिभीति आपत्ति टले।
हम पूजें अर्घ चढ़ाकरके, तब निज की सुख सम्पत्ति मिले॥ ५३॥
ॐ ह्रीं पुष्कलावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

आचार्य उपाध्याय सर्व साधु, उन शाश्वत कर्मभूमियों में।
निज आत्म साधना करते हैं, परको नितप्रति संबोधें वे॥
नित समतारस के आस्वादी, उपसर्ग परीषह सहन करें।
हम उनको प्रणमें बार-बार, वे मेरा भी दुःखहरण करें॥ ५४॥
ॐ ह्रीं पुष्कलावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्याय-साधुभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर के चरणों की रज, पृथ्वी पर्वत को तीर्थ करे।
सामान्यकेवली और साधु, वे भी पृथ्वी को तीर्थ करे॥

उन पंचकल्याणक तीर्थ क्षेत्र, औ अन्य तीर्थ क्षेत्रों को भी।
हम पूजें अर्घ चढ़ाकरके, मेरे संकट हों दूर सभी॥ ५५॥
ॐ ह्रीं पुष्कलावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं..।
इस देश पुष्कलावती मध्य, रजताचल चाँदी का सुन्दर।
इसकी कटनी पर विद्याधर, सर्वत्र विचरते हैं सुखकर॥
उन कर्मभूमि में सतत केवली, साधूगण होते रहते।
हम उनकी पूजा करते हैं, वे सुरनर से वन्दित रहते॥ ५६॥
ॐ ह्रीं पुष्कलावतीदेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्व-केवलिश्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

रोलाछंद

वत्सादेशविदेह, आर्य खण्ड है उसमें।
पुरी सुसीमा एक, रजधानी है उसमें॥
भूत भविष्यतकाल, के अनन्त तीर्थंकर।
युगमंधर भगवान, विचरें अभी वहाँ पर॥ ५७॥
ॐ ह्रीं वत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे सुसीमानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

केवल ज्ञानी ईश, वहाँ अनन्ते होते।
कर्मअरी को नाश, सौख्य अनंते भोगें॥
उनकी पूजा भक्ति, भव समुद्र से तारे।
हम पूजें इत आज, मेरे कर्म विदारे॥ ५८॥
ॐ ह्रीं वत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

श्री गणधर गुरुदेव, रहते समवशरण में।
निज भक्तों के ख्यात, विघ्न विनाशक जग में॥
अर्घ चढ़ाकर आज, हम उन गुरु को पूजें।
मिटे सर्व संताप, कर्मअरी भी धूजें॥ ५९॥
ॐ ह्रीं वत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

द्वादशाङ्ग श्रुत ज्ञान, पूर्ण भरा है घट में।
श्रुत केवलि भगवान, उनको हम नित प्रणमें॥
उनकी पूजा भक्ति, स्वपर ज्ञान विस्तारें।
शरणागत को शीघ्र, भवसमुद्र से तारें॥ ६०॥
ॐ ह्रीं वत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

सूरीपाठक साधु, वहाँ विहार करें नित।
जो जन भव से भीत, वे होते उन आश्रित॥
मन वचतन से शुद्ध, हम उन सबको प्रणमें।
करो कृपा गुरुदेव, सदा रहूँ तुम शरणें॥ ६१॥

ॐ ह्रीं वत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

पंच कल्याणक क्षेत्र, तीरथ क्षेत्र वहाँ पर।
अतिशय गुण से ख्यात, बहुते क्षेत्र वहाँ पर॥
उन सबको मैं नित्य, अर्घ चढ़ाऊँ रुचि से।
करो भवोदधि पार, तीर्थ मुझे निजरज से॥ ६२॥

ॐ ह्रीं वत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

वत्सादेशविदेह, उसके मधि विजयारध।
विद्याधर के देश, उसमें हैं इकसौदस॥
वहाँ केवली वृन्द, साधूगण नित रहते।
उनको पूजूँ नित्य, वे सब दुख को हरते॥ ६३॥

ॐ ह्रीं वत्सादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलिश्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

देश सुवत्सारम्य, आर्यखण्ड उसमें हैं।
पुरी कुण्डला एक, तीर्थंकर उसमें हैं॥
त्रैकालिक तीर्थेश, उन सबको मैं पूजूँ।
आत्म सुधारस पाय, भव-भव दुःख से छूटूँ॥ ६४॥

ॐ ह्रीं सुवत्सादेशविदेहसंबंधिकुण्डलानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं..।

अगणित मुनिवरवृंद, केवल ज्ञान प्रकाशे।
गंधकुटी के मध्य, अन्तरिक्ष से राजे॥
इन्द्रादिकं से वंद्य, भवसमुद्र तरते हैं।
हम भी पूजें नित्य, वे मुझ दुख हरते हैं॥ ६५॥

ॐ ह्रीं सुवत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर के पास, गणधर देव विराजें।
करें देशना नित्य, भविवन कमल विकासें॥

उनकी पूजा भक्ति ,जो जन रुचि से करते।
समता रस को पाय शीघ्र भवोदधि तरते॥ ६६ ॥

ॐ ह्रीं सुवत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं . . ।

श्रुत केवलि भगवान , निजानंद रसस्वादि।
होते भक्त महान , जो उनके चरणाश्रित॥
मैं भी भक्ति बढ़ाय , अर्घ चढ़ाकर पूजूँ।
करो विघ्न सब नाश , पुनर्जन्म से छूटूँ॥ ६७ ॥

ॐ ह्रीं सुवत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं . . . ।

सूरि उपाध्याय साधु , नग्न दिगम्बर मुनि हैं।
रागादिक से दूर , इन्द्रों से वंदित हैं॥
इनका वंदन नित्य , सर्व दुखों को चूरे।
भव्य जनों के नित्य , सर्व मनोरथ पूरे॥ ६८ ॥

ॐ ह्रीं सुवत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं . . . . ।

पंचकल्याणक क्षेत्र , तीरथ क्षेत्र अनेकों।
पुण्य पुरुष के पाद , रज से पावन हैं वो॥
उन सबको मैं नित्य , अर्घ चढ़ाकर पूजूँ।
करो हमें भवतीर , जन्म-मरण से छूटूँ॥ ६९ ॥

ॐ ह्रीं सुवत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं . . . . ।

देश सुवत्सा मध्य , रजत गिरी चाँदी का।
विद्याधर के देश , कर्मभूमि वहाँ नीका॥
केवल ज्ञानी और , अगणित साधु वहाँ पर।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय , तिरूँ शीघ्र भवसागर॥ ७० ॥

ॐ ह्रीं सुवत्सादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलिश्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं . . . . ।

महावत्सा शुभदेश , उसके आरजखंड में।
अपराजिता प्रसिद्ध , नगरी है उस मधि में॥
तीर्थंकर भगवान , जन्म वहीं पर लेते।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय , वे सुख सम्पत्ति देते॥ ७१ ॥

ॐ ह्रीं महावत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे अपराजितानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं . . . . ।

इस आरजखंड माहिं, बहुत केवली रहते।
आत्म सुधारस मग्न, भव भव दुख को दहते॥
पूजूँ अर्घ चढ़ाय, मुझे आत्मनिधि दीजे।
भवभव क्लेश मिटाय, प्रभु निज सम कर लीजे॥७२॥

ॐ ह्रीं महावत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

श्री गणधर गुरुदेव, रहते समवसरण में।
वंदे श्रीजिनदेव, रहते उन चरणन में॥
उन गणधर को नित्य, सुर नर गण मिल पूजें।
मैं भी पूजूँ नित्य, जन्म मरण दुख छूटें॥ ७३॥

ॐ ह्रीं महावत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

कर्मभूमि वहाँ नित्य, श्रुतकेवलि मुनि रहते।
ईति भीति पर चक्र, दोष नहीं वहाँ रहते॥
शास्त्र ज्ञान फल पांय, कर्मकलंक मिटाते।
उन को अर्घ्य चढ़ाय, नमूँ नमूँ गुण गाके॥ ७४॥

ॐ ह्रीं महावत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं..।

सूरी पाठक साधु उत्तम चारित पालें।
आत्मतत्त्व को ध्याय, राग द्वेष को टालें॥
उनको पूजें नित्य, चक्रवर्ति सुरपति भी।
हम भी पूजें नित्य, मिले आत्मनिधि निज की॥ ७५॥

ॐ ह्रीं महावत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

पंचकल्याणक क्षेत्र, दोय तीन कल्याणक।
अन्य मुनि के क्षेत्र, तपो ज्ञान शिवसाधक॥
ये सब तीर्थ महान्, उनको पूजूँ रुचि से।
तीन रत्न गुणवान, बनूँ इसी ही विधि से॥ ७६॥

ॐ ह्रीं महावत्सादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

महावत्सा के मध्य, रजताचल चाँदीमय।
विद्याधर के देश, इक सौ दश संपत्तिमय॥

इनमें जो मुनिनाथ, केवलि श्रुतकेवलि हैं।
उनको जजूँ त्रिकाल, आतमनिधि मुझ ही है॥ ७७॥

ॐ ह्रीं महावत्सादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्व-केवलिश्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

वत्सावतीविदेह उसके आरजखंड में।
तीर्थंकर नित होय नगरी प्रभंकरा में॥
परमानंद निकेत प्राप्त करें निजबल से।
पूजूँ भक्ति समेत छूटूँ भवभव दुःख से॥ ७८॥

ॐ ह्रीं वत्सावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे प्रभंकरानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

अगणित मुनिगण नित्य, रत्नत्रय के बल से।
केवल ज्ञान को पाय, बसे मोक्षपुर जाके॥
उनको अर्घ्य चढ़ाय, रत्नत्रय निधि पाऊँ।
कर्म कलंक मिटाय, केवल ज्ञान उपाऊँ॥ ७९॥

ॐ ह्रीं वत्सावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

बारहगण के नाथ, गणधर देव कहाते।
तीर्थंकर के पास, समवशरण में राजे॥
मनवचकाय लगाय, उनको अर्घ्य चढ़ाऊँ।
जन्म मरण दुख नाश, फेर न भव में आऊँ॥ ८०॥

ॐ ह्रीं वत्सावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं..।

द्वादशांग वारिधि, में अवगाहन करते।
श्रुतकेवलि भगवान्, भक्तों के दुख हरते॥
उनकी पूजा भक्ति, सम्यग्ज्ञान प्रकाशे।
वे मुनिगण के नित्य, चित्तकमल विकसाते॥ ८१॥

ॐ ह्रीं वत्सावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं...।

सूरी पाठक साधु, जिनकल्पी मुनि होते।
करते संघ में वास, स्थविरकल्पि मुनि होते॥
मन वच तन से शुद्ध, उनको नित्य जजूँ मैं।
करूँ निजातम शुद्ध, समरस सौख्य चखूँ मैं॥ ८२॥

ॐ ह्रीं वत्सावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

पंचकल्याणक क्षेत्र, अतिशयक्षेत्र वहाँ पर।
जो पूजें जन नित्य, वसुविध अर्घ्य चढ़ाकर॥
पावन क्षेत्र महान, इन रज शीश चढ़ावें।
मिटे जगत् का क्लेश, फेर न भव में आवें॥ ८३॥

ॐ ह्रीं वत्सावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

वत्सावती विदेह, मध्य रजतगिरि सोहै।
विद्याधर के देश से सुरनर मन मोहै॥
केवलि जिन भगवान् अगणित साधु वहाँ पर।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय मिले न फेर भवान्तर॥ ८४॥

ॐ ह्रीं वत्सावतीदेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलिश्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

रम्यादेश विदेह, आर्यखण्ड है उसमें।
अंका नगरी नित्य, तीर्थंकर हो उसमें॥
भूत भविष्यत् और वर्तमान तीर्थंकर।
उनको अर्घ्य चढ़ाय, पाऊँ सौख्य हितंकर॥ ८५॥

ॐ ह्रीं रम्यादेशविदेहसंबंधिअंकानगर्याम् त्रैकालिकसर्वतीर्थकरेभ्यः अर्घ्यं....।

यहाँ असंख्ये साधु केवलज्ञानी होते।
भावकर्म अरु द्रव्य कर्ममलों को धोते॥
उनकी पूजा भक्ति, निज पर ज्ञान प्रकाशे।
जिसके बल से भव्य, केवलज्ञान विकासे॥ ८६॥

ॐ ह्रीं रम्यादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर के शिष्य, गणधर देव प्रमुख हैं।
दिव्यध्वनी को नित्य, दो नय से वर्णत हैं॥
निश्चय औ व्यवहार, द्वय रत्नत्रयधारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, वे जग मंगलकारी॥ ८७॥

ॐ ह्रीं रम्यादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

श्रुत पारंगत साधु, स्याद्वाद किरणों से।
मिथ्यामत को नाश, सम्यग्ज्ञान प्रबोधें॥
इनका ज्ञान परोक्ष, भी त्रिभुवन को जाने।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय, सर्व अमंगल हाने॥ ८८॥

ॐ ह्रीं रम्यादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

साधु सरागी और, वीतरागी कहलाते।
सूरी पाठक नित्य, शिष्यों को समझाते॥
राग प्रशस्त समेत, मोक्ष मार्ग विकसात।
बोधि पूरण हेतु, गुरु को अर्घ चढ़ाते॥ ८९॥

ॐ ह्रीं रम्यादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योंपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

रम्या आरजखंड, पंचकल्याणक भूमी।
अगणित हों मुनिवृंद, उनसे पावन भूमी॥
भवसागर से भव्य जन को पार उतारें।
इनको पूजूँ नित्य, तीर्थनाम यह धारें॥ ९०॥

ॐ ह्रीं रम्यादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

रम्या देश के मध्य, गिरि विजयार्ध कहाता।
विद्याधर के देश, उनमें बहुविध साता॥
मुनिगण होते नित्य, केवलज्ञानी ध्यानी।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय, बनूँ स्वपर विज्ञानी॥ ९१॥

ॐ ह्रीं रम्यादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलि-श्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

देश सुरम्या रम्य, आर्यखंड उसमें है।
तीर्थंकर से युक्त, पद्मावति नगरी है॥
जगवंदित तीर्थेश, तीन काल वहाँ होते।
पूजूँ जगपरमेश, मेरे मन को शोधें॥ ९२॥

ॐ ह्रीं सुरम्यादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे पद्मावतीनगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

इस आरजखंड माहिं मुनि केवली अनंते।
निज पुरुषार्थ बलेन, कर्म अरी को खंडे॥
उनकी वंदन भक्ति, हमें सौख्य संपत्तिकर।
जो पूजें धर प्रीति, उनके सब संकटहर॥ ९३॥

ॐ ह्रीं सुरम्यादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थनाथ के शिष्य, गणधर देव अनंते।
हों उस आरजखंड में त्रिकाल गुणवंते॥

उन गुणधर गणईश की पूजा गुणकारी।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय, वे होवें सुखकारी॥ ९४॥

ॐ ह्रीं सुरम्यादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं ....।

श्रुतकेवलि भगवान्, ज्ञान चक्षु के धारी।
रत्नत्रय से मान्य, रोग शोक दुखहारी॥
मम रत्नत्रय पूर्ण, करो यही इक इच्छा।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय, करूँ ज्ञान प्रत्यक्षा॥ ९५॥

ॐ ह्रीं सुरम्यादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं ....।

यथाजात जिनरूप, धरें सदा सब मुनिवर।
ध्याते शुद्धस्वरूप, गुणगण मंडित गुरुवर॥
सूरी पाटक साधु, त्रिविध गुणों से त्रयविध।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय, मिले चरित तेरह विध॥ ९६॥

ॐ ह्रीं सुरम्यादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं ....।

देश सुरम्या माहिं, आरजखंड कहाता।
शाश्वत चौथा काल, स्वर्ग मोक्ष पथ दाता॥
तीर्थंकर से ख्यात, पाँच कल्याणक भूमि।
अन्य तीर्थ भी पूज, मिले आठवीं भूमि॥ ९७॥

ॐ ह्रीं सुरम्यादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं ....।

देश सुरम्या मध्य, रजताचल कटनीयुत।
विद्याधर के देश, इक सौ दश सुख संयुत॥
वहाँ रहें मुनिनाथ, केवलि श्रुतकेवलि भी।
पूजूँ शीश नवाय, मिले निजातम निधि भी॥ ९८॥

ॐ ह्रीं सुरम्यादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलि-श्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं ....।

रमणीया शुभदेश, नगरी शुभा वहाँ पर।
तीर्थंकर परमेश, होते रहते सुखकर॥
असि मषि आदिक षट् कर्मों की वह भूमी।
तीर्थंकर को पूज, मिले हमें शिवभूमी॥ ९९॥

ॐ ह्रीं रमणीयादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे शुभानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं ....।

वहाँ असंख्ये साधु केवल ज्ञान प्रकाशें।
निजवाणी से नित्य मिथ्यातम को नाशें॥
ज्ञानपूर्ति के हेतु उनको अर्घ चढ़ाऊँ।
स्वपर भेद विज्ञान पाकर निजपद पाऊँ॥ १००॥

ॐ ह्रीं रमणीयादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं ....।

गुणधर गणधर देव, सर्वगुणों के दाता।
ऋद्धि सिद्धि से पूर्ण, सुखसंपत्ति विधाता॥
तीर्थंकर के शिष्य, दिव्यध्वनी विस्तारें।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, हमें शीघ्र ही तारें॥ १०१॥

ॐ ह्रीं रमणीयादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं ...।

चौदह पूर्व महान, ज्ञान धरें श्रुतज्ञानी।
अगणित गुण की खान, शुद्धातम के ध्यानी॥
धर्मध्यान के हेतु, इनकी पूजा वरणी।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय, मिले भवोदधि तरणी॥ १०२॥

ॐ ह्रीं रमणीयादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं ....।

अर्हत् मुद्राधार, सर्वगुणों को पालें।
सूरी पाठक साधु, निज के कर्म प्रजालें॥
दीक्षा शिक्षा दान, करते द्विविध मुनि हैं।
साधु साधना लीन, जजूँ उन्हें सुख प्रद वें॥ १०३॥

ॐ ह्रीं रमणीयादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक तीर्थ, तीर्थंकर के होते।
अन्य तीर्थ भी नित्य, मुनिगण से बन जाते॥
निज मन पावन हेतु, पावन तीर्थ जजूँ मैं।
वे भवि के भवसेतु, उन रज शीश धरूँ मैं॥ १०४॥

ॐ ह्रीं रमणीयादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं ....।

रमणीया के मध्य, विजयारध गिरि सुंदर।
विद्याधर आवास, इस पर बनें निरंतर॥

उनमें मुनिगण नित्य, आत्म साधना करते।
सबको पूजूँ नित्य, ये सब भवदुख हरते॥ १०५॥

ॐ ह्रीं रमणीयादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलिश्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

देश मंगलावति में, आर्यखंड मधि नगरी।
रत्न संचया नाम, तीर्थंकर गुण लहरी॥
त्रयकालिक तीर्थेश, इस नगरी में माने।
पूज हरूँ भवक्लेश, सुख पाऊँ मनमाने॥ १०६॥

ॐ ह्रीं मंगलावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे रत्नसंचयानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थकरेभ्यः अर्घ्यं....।

इस आरजखंड माहिं, अगणित केवलज्ञानी।
होते हैं त्रयकाल, जग के अंतर्यामी॥
इनकी पूजा भक्ति, सब अज्ञान विनाशे।
जो पूजें धर प्रीति, ज्ञान ज्योति परकाशे॥ १०७॥

ॐ ह्रीं मंगलावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

गणनायक गुरुदेव, विघ्न विनाशक ख्याता।
सब ऋद्धि समवेत, नवनिधि सिद्धि विधाता॥
हम पूजें नत शीश, सर्व अमंगल चूरें।
अशुभ कर्म को नाश, सर्व मनोरथ पूरें॥ १०८॥

ॐ ह्रीं मंगलावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं..।

श्रुत पारंगत साधु केवल ज्ञानी सम हैं।
श्रुतकेवली प्रसिद्ध सब जग अवलोकत हैं॥
इनका ज्ञान परोक्ष, फिर भी मुक्ति प्रदाता।
वंदूँ शीश नवाय धर्म शुक्ल के ध्याता॥ १०९॥

ॐ ह्रीं मंगलावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं...।

मुनिगणत्रिविध महान्, भविजन शिवपथदर्शक।
रत्नत्रय निधिमान, भव्यकमल के हर्षक॥
निज आतम को शुद्ध, करें करावें संतत।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय, करो हमें स्वातमरत॥ ११०॥

ॐ ह्रीं मंगलावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर के पाँच, कल्याणक से पावन।
अन्य साधुगण नित्य, जहाँ करते निज साधन॥
वे सब तीर्थ प्रसिद्ध, आत्म शुद्धि में साधक।
उनको पूजूँ नित्य, वे हैं पाप विनाशक॥ १११॥

ॐ ह्रीं मंगलावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

मंगलावति के मध्य, रजताचल मनहारी।
विद्याधर के देश, शोभ रहें सुखकारी॥
केवलज्ञानी साधु, श्रुतज्ञानी सब विचरें।
पूजूँ भक्ति समेत, सर्वकाल जो विहरें॥ ११२॥

ॐ ह्रीं मंगलावतीदेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्व-केवलिश्रुंतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

दोहा

पद्मा देश विदेह में, आर्यखण्ड के मध्य।
अश्वपुरी में तीर्थंकर, उन्हें नमूँ जग वंद्य॥ ११३॥

ॐ ह्रीं पद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे अश्वपुरीनगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

आर्यखण्ड में नित्य ही, केवलज्ञानी होय।
उनकी पूजा भक्ति से, भव भव में सुख होय॥ ११४॥

ॐ ह्रीं पद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

गणधर सब तीर्थेश के, करें देशना नित्य।
उनको पूजूँ अर्घ्य ले, मिले आत्मसुख नित्य॥ ११५॥

ॐ ह्रीं पद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

द्वादशांग श्रुत के धनी, श्रुतकेवली विख्यात।
उनकी पूजा नितकरूँ, मिले स्वात्म साम्राज्य॥ ११६॥

ॐ ह्रीं पद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

सूरी पाठक साधुगण, नितप्रति करें विहार।
उनको पूजें भक्ति से, हो मम आत्म सुधार॥ ११७॥

ॐ ह्रीं पद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

पंचकल्याणक क्षेत्र बहु, अन्य और भी तीर्थ।
उन सबकी पूजा करूँ, मम आत्मा हो तीर्थ॥ ११८॥

ॐ ह्रीं पद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

पद्मा देश विदेह के, मध्य रजतगिरि रम्य।
विद्याधर के केवली, मुनिगण जजूँ प्रसन्न॥ ११९॥

ॐ ह्रीं पद्मादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलि-श्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

देश सुपद्मा खंड षट्, आरजखंड के मध्य।
सिंहपुरी में तीर्थकर, सतत रहे जग वंद्य॥ १२०॥

ॐ ह्रीं सुपद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे सिंहपुरीनगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थकरेभ्यः अर्घ्यं....।

इसही आरजखंड में, केवलज्ञानी नंत।
उन सबकी पूजा करूँ, मिटे जगत का फंद॥ १२१॥

ॐ ह्रीं सुपद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर के निकट में, गणधर गुरु राजंत।
उन सब की पूजा करूँ, हो सब दुख का अंत॥ १२२॥

ॐ ह्रीं सुपद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

चौदह विद्या में कुशल, सर्वज्ञान के ईश।
श्रुतकेवलि को नित जजूँ, कर अंजलि नत शीश॥ १२३॥

ॐ ह्रीं सुपद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

पंच महाव्रत पालते, पंचमगति की आश।
त्रिविध साधु को पूजते, मिले आत्म गुणराशि॥ १२४॥

ॐ ह्रीं सुपद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

पंच कल्याणक से तथा, निर्वाणादिक क्षेत्र।
उन सबको पूजूँ सदा, खुले ज्ञान के नेत्र॥ १२५॥

ॐ ह्रीं सुपद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

देश सुपद्मा बीच में, रजताचल पर नित्य।
विद्याधर पुर में नमूँ, केवलि साधु प्रसिद्ध॥ १२६॥

ॐ ह्रीं सुपद्मादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलि-श्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

देश महासुपद्मा वहाँ, आर्यखंड के बीच।
महापुरी में तीर्थकर, जजत धुले भवकीच॥ १२७॥
ॐ ह्रीं महापद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे महापुरीनगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

इसके आरजखंड में, केवलज्ञानी ईश।
नित्य विहरते मैं उन्हें, जजूँ नमाकर शीश॥ १२८॥
ॐ ह्रीं महापद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

द्वादश गण के गणपती, विघ्न विनायक नाम।
उन सबको मैं नित जजूँ, झुक झुक करूँ प्रणाम॥१२९॥
ॐ ह्रीं महापद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

श्रुत केवलि प्रसाद से, सब जग में हो क्षेम।
आत्मशुद्धि हित नित जजूँ, हो स्वधर्म से प्रेम॥ १३०॥
ॐ ह्रीं महापद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

उपाध्याय शिक्षित करें, दीक्षा दें आचार्य।
साधु स्वात्मसाधन निरत, पूजूँ अर्घ चढ़ाय॥ १३१॥
ॐ ह्रीं महापद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

कल्याणक पावन धरा, निर्वाणादिक पवित्र।
उन सब तीर्थों को जजूँ, मन हो शीघ्र पवित्र॥ १३२॥
ॐ ह्रीं महापद्मादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

देश महापद्मा मधी, रजताचल पर नित्य।
विद्याधर पुर में मुनी, केवलि जग स्तुत्य॥ १३३॥
ॐ ह्रीं महापद्मादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलिश्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

देश पद्मकावति वहां, आर्यखंड के मध्य।
विजयपुरी में तीर्थकर, उन्हें जजूँ शिरनम्य॥ १३४॥
ॐ ह्रीं पद्मकावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे विजयपुरीनगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

इसही आरजखंड में, केवलज्ञानी नाथ।
नित विहरें उनको नमूँ, सदा नमाकर माथ॥ १३५॥
ॐ ह्रीं पद्मकावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

परमानंद पियूष से, तृप्त सदैव प्रसन्न।
गणधर गुरु को नित जजूँ, मुझ मन करें प्रसन्न॥ १३६॥
ॐ ह्रीं पद्मकावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

सर्व विघ्नघन चूरते, भव्य सस्य हित मेघ।
श्रुतकेवलि मुनि को जजूँ, वे भवदधि के सेतु॥ १३७॥
ॐ ह्रीं पद्मकावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

जिन कल्पी मुनि जिन सदृश, स्थविरकल्पि मुनि संघ।
सूरी पाठक साधु को, जजूँ मिटे भव द्वन्द्व॥ १३८॥
ॐ ह्रीं पद्मकावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

महा पुरुष पद धूलि से, पावन तीर्थ प्रसिद्ध।
उन सबको नित पूजते, मम आत्मा हो सिद्ध॥ १३९॥
ॐ ह्रीं पद्मकावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

देश पद्मकावति विषें, विजयारध विख्यात।
विद्याधर पुर में जजूँ, केवलि मुनि गण ख्यात॥१४०॥
ॐ ह्रीं पद्मकावतीदेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलिश्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

शंखा देश विदेह में, आर्यखंड के बीच।
अरजानगरी में जजूँ, तीर्थंकर नतशीश॥ १४१॥
ॐ ह्रीं शंखादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे अरजानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

ज्ञानावरण विनाश कर, केवलज्ञानी सिद्ध।
उन सबकी पूजा करूँ, मिले सिद्धि नवनिद्ध॥ १४२॥
ॐ ह्रीं शंखादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

गुणधर गणधर चरण की, शरण लिया में अद्य।
जजूँ अर्घ ले तुम चरण, पूर्ण करूँ श्रुत सर्व॥ १४३॥
ॐ ह्रीं शंखादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

जो अष्टांग निमित्त में, कुशल सर्वश्रुत पूर्ण।
उन श्रुतकेवलि को जजूँ, करूँ कर्म अरि चूर्ण॥ १४४॥
ॐ ह्रीं शंखादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

चउविध संघ के अधिपती, सूरि सर्व जग वंद्य।
पाठक साधु भी जजूँ, करूँ जन्म निज धन्य॥ १४५॥

ॐ ह्रीं शंखादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योंपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर पदपद्म से, भू पर्वत भी तीर्थ।
अन्य साधु से भी बनें, उन्हें जजूँ नतशीश॥ १४६॥

ॐ ह्रीं शंखादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

शंखा देश विदेह मधि, रजतगिरी अति श्वेत।
विद्याधरपुर में जजूँ, केवलि साधु समेत॥ १४७॥

ॐ ह्रीं शंखादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलि-श्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

नलिनी देश विदेह में, आर्यखंड के बीच।
विरजा नगरी में जजूँ, तीर्थंकर जग ईश॥ १४८॥

ॐ ह्रीं नलिनीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे विरजानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

आर्यखंड में केवली, विचरण करें सदैव।
उन सब की पूजा करूँ, बनूँ सिद्ध स्वयमेव॥ १४९॥

ॐ ह्रीं नलिनीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

गणधर देव महान हैं, कहें तत्त्व विस्तार।
उनके चरणों को जजूँ, मिले तत्त्व का सार॥ १५०॥

ॐ ह्रीं नलिनीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

अंग पूर्व श्रुत के धनी, पढ़े पढ़ावें नित्य।
उन श्रुतकेवलि को जजूँ, धरूँ धर्म में प्रीति॥ १५१॥

ॐ ह्रीं नलिनीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

अट्ठाइस गुण मूलधर, नग्न दिगंबर देव।
सूरि पाठक साधु त्रय, इन्हें जजूँ धर नेह॥ १५२॥

ॐ ह्रीं नलिनीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योंपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

पुण्य पुरुष के गर्भ जनि, तपो ज्ञान निर्वाण।
इन निमित्त से तीर्थ जो, उन्हें जजूँ बहुमान॥ १५३॥

ॐ ह्रीं नलिनीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

नलिनी देश विदेह मधि, रजताचल पर खार।
विद्याधरपुर के जजूँ, केवलि साधु समाज॥ १५४॥

ॐ ह्रीं नलिनीदेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलि-श्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

कुमुदा देश विदेह के, आर्यखंड में नित्य।
पुरी अशोका में जजूँ, तीर्थंकर सब सिद्ध॥ १५५॥

ॐ ह्रीं कुमुदादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

आर्यखंड में केवली, होते सतत अनंत।
उन सबकी पूजा करूँ, रोग शोक दुख अंत॥ १५६॥

ॐ ह्रीं कुमुदादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

गणधर मुनिगण अमित हैं, निजआतम रसलीन।
उनको अर्घ चढ़ाय के, करूँ कर्म रस छीन॥ १५७॥

ॐ ह्रीं कुमुदादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं...।

निज आतम रस अनुभवें, श्रुतकेवली मुनीश।
उनके पद पंकज जजूँ, कर अंजलि नतशीश॥ १५८॥

ॐ ह्रीं कुमुदादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

दीक्षा शिक्षा में कुशल, सूरि पाठक देव।
ध्यान साधना साधु की, करूँ त्रिविध गुरु सेव॥ १५९॥

ॐ ह्रीं कुमुदादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योंपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

पंच कल्याणक तीर्थ औ, अन्य तीर्थ जो होय।
उन सबकी पूजा करूँ, स्वात्म शुद्धि मम होय॥ १६०॥

ॐ ह्रीं कुमुदादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

कुमुदा देश विदेह में, रजताचल शुचिवर्ण।
वहाँ केवली साधुगण, जजूँ नित्य उन चर्ण॥ १६१॥

ॐ ह्रीं कुमुदादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलि-श्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

सरिता देश विदेह में, आर्यखंड विख्यात।
वीतशोक नगरी वहां, बाहुजिन हैं आज॥

भूत भविष्यत्काल के तीर्थंकर हैं नंत।
सब के चरण सरोज को, पूजत हो भव अंत॥ १६२॥
ॐ ह्रीं सरितादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे वीतशोकानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं ....।

इस ही आरजखंड में, केवलिनाथ अनंत।
उन सबके चरणों नमूँ, हो मम सौख्य अनंत॥ १६३॥
ॐ ह्रीं सरितादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं ....।

यंत्र मंत्र औषधि निमित्त, सर्वशास्त्र में दक्ष।
गणधरगुरु को नित नमूँ, मम आत्मा हो स्वच्छ॥ १६४॥
ॐ ह्रीं सरितादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं ....।

अंग पूर्व सब शास्त्र को, पढ़े पढ़ावें नित्य।
उन श्रुत केवलि को जजूँ, उनके पद आश्रित्य॥ १६५॥
ॐ ह्रीं सरितादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं ....।

सूरी पाठक साधुगण, नित विहरें उस माहिं।
उन सबके पदकंज को, नमूँ नमूँ शिर नाय॥ १६६॥
ॐ ह्रीं सरितादेशविदेहसम्बन्धिआर्यखण्डे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं ....।

तीर्थंकर पद धूलि से, तीर्थ बनें जग पूज्य।
अन्य और भी तीर्थ को, जजूँ सुरासुरपूज्य॥ १६७॥
ॐ ह्रीं सरितादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं ....।

सरिता देश विदेह में, विजयारध रजताभ।
विद्याधर के नगर में, जजूँ सर्व मुनिराज॥ १६८॥
ॐ ह्रीं सरितादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलि-श्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं ....।

चौपाई

वप्रादेश विदेह महान्, उसमें आर्यखंड सुखदान।
विजयानगरी में तीर्थेश, पूजन करत हरूँ भव क्लेश॥ १६९॥
ॐ ह्रीं वप्रादेशविदेहसंबंधि आर्यखंडे विजयानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं ....।

सतत केवली विहरें वहाँ, गंधकुटी में राजें तहाँ।
आत्म सुधारस चखने हेतु, पूजूँ उन्हें भवोदधि सेतु॥ १७०॥
ॐ ह्रीं वप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर के शिष्य प्रधान, गणधर देव सर्वगुण खान।
ऋद्धि सिद्धि चउज्ञान समेत, जजूँ उन्हें निजशुद्धी हेत॥ १७१॥
ॐ ह्रीं वप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

स्वर व्यंजन भौमादिनिमित्त, सर्वशास्त्र में कुशल प्रसिद्ध।
उन श्रुतकेवलि को नित जजूँ, पुनर्जन्म के दुख से बचूँ॥१७२॥
ॐ ह्रीं वप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

चउसंघ के नायक आचार्य, शिष्य पढ़ावें गुरु उपध्याय।
आत्मसाधना में रत साधु, उनको जजूँ हरूँ सब व्याधि॥१७३॥
ॐ ह्रीं वप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर के पंच कल्याण, अन्य मुनी के तप निर्वाण।
इनसे पावन तीर्थ प्रसिद्ध, नित्य जजूँ पाऊँ निज सिद्धि॥१७४॥
ॐ ह्रीं वप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

वप्रादेश विदेहनि मध्य, रजताचल विद्याधर संग।
उनमें केवलि और मुनींद्र, उन्हें जजत होऊँ भवतीर्ण॥ १७५॥
ॐ ह्रीं वप्रादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलि-श्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

देश सुवप्रा कहा विदेह, उसके आर्यखंड में येह।
नगरी वैजयंति सुखदान, तीर्थंकर पद जजूँ महान॥ १७६॥
ॐ ह्रीं सुवप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे वैजयंतीनगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

यथाख्यात चारित्र समेत, केवलज्ञानी जग हित हेत।
पंचम चारित प्राप्ती हेतु, पूजूँ उन्हें भवोदधि सेतु॥१७७॥
ॐ ह्रीं सुवप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

बारहगण नायक यति ईश, धर्मध्यान में अतिशय प्रीत।
गणधर गुरुको जजूँ त्रिकाल, मनवचतन त्रययोग संभाल॥१७८॥
ॐ ह्रीं सुवप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

यथाजात मुद्राधर यती , पिछी कमंडलु श्रुत में रती।
श्रुतकेवलि मुनिगण त्रयकाल, नमूँ नमूँ नाऊँ निज भाल ॥१७९ ॥
ॐ ह्रीं सुवप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं .... ।

गुण छत्तिस पचीस अठवीस , धारण करते महामुनीश।
सूरि उपाध्याय साधु महान्, सबको जजूँ सौख्य प्रदजान ॥१८० ॥
ॐ ह्रीं सुवप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योंपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं .... ।

पंचकल्याणक भूमि पवित्र, अन्य तीर्थ भी जगत् पवित्र।
वे सब तीर्थ जजूँ मन लाय, मन विशुद्धिका यही उपाय ॥१८१ ॥
ॐ ह्रीं सुवप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं .... ।

देश सुवप्रा मधि विजयार्ध , विद्याधर नगरी विख्यात।
वहाँ केवली श्रुतधर साधु , नित्य विचरते पूजूँ आज ॥ १८२ ॥
ॐ ह्रीं सुवप्रादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्व-केवलिश्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं .... ।

देश महावप्रा के मध्य , आर्यखंड में नगरी भव्य।
नाम जयंती में तीर्थेश , त्रयकालिक को नमूँ हमेश ॥ १८३ ॥
ॐ ह्रीं महावप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे जयंतीनगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं .... ।

आर्यखंड में नित विहरंत , केवलज्ञानी श्रीभगवंत।
ज्ञान ज्योति प्रगटावन हेतु, नित प्रति जजूँ हरूँ भवखेद ॥१८४ ॥
ॐ ह्रीं महावप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं ....।

समवसरण में रहें गणींद्र , नमें उन्हें शत इन्द्र मुनीन्द्र।
ऋद्धि सिद्धि संपति दातार , जजूँ उन्हें गुणवृंद अपार ॥ १८५ ॥
ॐ ह्रीं महावप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं ...।

श्रुत समुद्र पारंगत नाथ , श्रुतकेवलि निजज्ञान सनाथ।
श्रुतफल अच्युतपद के हेतु , जजूँ उन्हें वे सब सुख देत ॥१८६ ॥
ॐ ह्रीं महावप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं ....।

सामायिक चारित्र धरंत , सूरि पाठक साधु महंत।
इन सबको पूजूँ धर प्रीत , ये सबके हि अकारण मीत ॥१८७ ॥
ॐ ह्रीं महावप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योंपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं ....।

पुण्य पुरुष पदरज से पूत, पावन तीर्थ धर्म अनुस्यूत।
उन्हें जजूँ निजशुद्धी हेत, वे सबको समकित निधि देत ॥१८८॥

ॐ ह्रीं महावप्रादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

देश महावप्रा के बीच, रजताचल विद्याधर मीत।
वहाँ केवली साधु मुनीन्द्र, उन्हें नमूँ वे परम पवित्र ॥१८९॥

ॐ ह्रीं महावप्रादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्व-केवलिश्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

देश वप्रकावती विदेह, आर्यखंड के बीच वसेय।
अपराजिता नगरि में नित्य, तीर्थंकर हो पूजूँ नित्य॥ १९०॥

ॐ ह्रीं वप्रकावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे अपराजितानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थ-करेभ्यः अर्घ्यं....।

इंद्रियज्ञान शून्य भगवान, त्रिभुवनव्यापी ज्ञाननिधान।
सर्व केवली गुणगण ईश, अर्घ चढ़ाय जजूँ जगदीश॥ १९१॥

ॐ ह्रीं वप्रकावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

दीप्ततप्त बल दीप्ति महान्, बिन आहार भि शक्ति महान्।
गणधर देव चरण अमलान, पूजत देवें ऋद्धि निधान॥ १९२॥

ॐ ह्रीं वप्रकावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

ग्यारह अंग चतुर्दश पूर्व, ज्ञाननेत्र से लखें अपूर्व।
श्रुतकेवलि गुरु भव्य सनाथ, पूजत होवे जन्म कृतार्थ ॥१९३॥

ॐ ह्रीं वप्रकावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं...।

भव्यजनों के प्रिय आधार, सूरि पालते पंचाचार।
उपाध्याय गुरु साधु मुनीश, त्रयविधि गुरू जजूँ नतशीश ॥१९४॥

ॐ ह्रीं वप्रकावर्तादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

भूपर्वत नगरादि अजीव, पुण्य पुरुष से तीर्थ अतीव।
भवि जीवों को फल दातार, पूजूँ तीर्थ सदा सुखकार ॥१९५॥

ॐ ह्रीं वप्रकावतीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

देश वप्रकावति के मध्य, रजताचल विद्याधर रम्य।
वहाँ केवलि मुनिगण नित्य, सबको पूजूँ रुचि से इत्य॥१९६॥

ॐ ह्रीं वप्रकावतीदेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्व-केवलिश्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

गंधा देश विदेह अनूप, आर्यखंड में नगरी भूप।
चक्रपुरी में पूजूँ आज, त्रयकालिक तीर्थंकर नाथ॥ १९७॥

ॐ ह्रीं गंधादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे चक्रपुरीनगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

सूक्ष्म अंतरित सब दूरार्थ, अवलोके नित सर्व पदार्थ।
केवलज्ञानी श्री जिनदेव, अर्घ चढ़ाय करूँ उन सेव॥ १९८॥

ॐ ह्रीं गंधादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

अक्षीणालय ऋद्धि धरंत, अगणित जीव वहाँ निवसंत।
गणधर गुरु को पूजूँ यहाँ, पापपुंज सब खंडें यहाँ॥ १९९॥

ॐ ह्रीं गंधादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

आयुर्वेद निमित्त अष्टांग, सब श्रुत ज्ञान धरें सर्वांग।
उनको नित्य नमूँ पंचांग, अर्घ चढ़ाय लहूं श्रुत सांग॥ २००॥

ॐ ह्रीं गंधादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

स्वपर भेद विज्ञानी संत, चारण ऋद्धि पाय भ्रमंत।
अकृत्रिम जिनगृह वंदंत, त्रयविध मुनिगण जजूँ तुरंत॥ २०१॥

ॐ ह्रीं गंधादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

कल्याणक स्थल हों तीर्थ, अन्य और भी बनें पुनीत।
उन तीर्थों को नमूँ त्रिकाल, वे मन शुद्ध करें तत्काल॥२०२॥

ॐ ह्रीं गंधादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

गंधादेश मध्य विजयार्ध, चक्री अर्ध विजय से सार्थ।
विद्याधर के मुनिगण वहाँ, केवलिगण सब पूजूँ यहाँ॥२०३॥

ॐ ह्रीं गंधादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलि-श्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

देश सुगंधा नाम विदेह, उसका आर्यखंड शुभ येह।
खड्गपुरी में होते सदा, तीर्थंकर उन पूजूँ मुदा॥ २०४॥
ॐ ह्रीं सुगंधादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे खड्गपुरीनगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

लोक अलोक विलोकें सर्व, केवलज्ञानी में गुण सर्व।
उनको पूजूँ हर संदेह, हो जाऊँ मैं शीघ्र विदेह॥ २०५॥
ॐ ह्रीं सुगंधादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर के शिष्य प्रधान, चौसठ ऋद्धि से सुखदान।
गणधर चरणों वंदन करूँ, निजके सब दुख खंडन करूँ॥२०६॥
ॐ ह्रीं सुगंधादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं....।

आत्म प्रवाद पूर्व का सार, करते आतम गुण विस्तार।
सर्व शास्त्र का जानें मर्म, उनको जजते हो शिवशर्म॥२०७॥
ॐ ह्रीं सुगंधादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

दर्शन से प्रगटें सम्यक्त्व, महर्षियों का यही महत्त्व।
सूरी पाठक साधू भेद, इनको जजूँ हरूँ भवखेद॥ २०८॥
ॐ ह्रीं सुगंधादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योंपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

पंचकल्याणक तीर्थ महान्, अन्य तीर्थ भी पुण्य निधान।
अतिशय क्षेत्र अन्य भी होंय, उनको जजत सर्वसुख होय॥२०९॥
ॐ ह्रीं सुगंधादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

देश सुगंधा मधि विजयार्ध, विद्याधरी नगरों से ख्यात।
केवलि जिन औ साधु महान्, होते वहाँ जजूँ गुणखान॥२१०॥
ॐ ह्रीं सुगंधादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलि-श्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

देश गंधिला में षट्खंड, उसमें इक शुभ आरजखंड।
पुरी अयोध्या में तीर्थेश, अर्घ चढ़ाकर जजूँ हमेश॥ २११॥
ॐ ह्रीं गंधिलादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे अयोध्यानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं....।

तेरह विध चारित को धार, केवल ज्ञान लिया सुखसार।
दर्पणवत् झलके सब लोक, पूर्ण ज्ञान को जजूँ प्रमोद॥२१२॥
ॐ ह्रीं गंधिलादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

अस्ति नास्ति आदिक सत भंग , स्याद्वादमय धरें अभंग।
उन गणधर गुरु को अर्चंत, मिले आत्मगुण सौख्य अनंत ॥२१३ ॥

ॐ ह्रीं गंधिलादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं ....।

अनेकांतमय धर्म महान् , सब एकांतवाद की हान।
जैनधर्म सब धर्म प्रधान , जजूँ उन्हें इन युत श्रुतखान॥ २१४॥

ॐ ह्रीं गंधिलादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं .. .।

परकर दत्त लेंय आहार , जिनका युक्ताहार विहार।
उन गुरु के पद पंकज जजूँ , चतुर्गति के दुःख से बचूँ ॥२१५ ॥

ॐ ह्रीं गंधिलादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं ....।

तीर्थंकर से पावन तीर्थ , अन्य अनेक कहाते तीर्थ।
उन सबको पूजूँ मन लाय, रोग शोक दुःख दारिद जाय ॥२१६ ॥

ॐ ह्रीं गंधिलादेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं ....'

देश गंधिला मधि विजयार्ध , विद्याधर से बना कृतार्थ।
उस पर केवलि और मुनीश, सबको जजूँ नमाकर शीश ॥२१७ ॥

ॐ ह्रीं गंधिलादेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलिश्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं ....।

गंधमालिनी देश विदेह , आर्यखंड में नगरी येह।
पुरी अवध्या में तीर्थेश , जजूँ सुबाहु और सब ईश ॥२१८ ॥

ॐ ह्रीं गंधमालिनीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे अवध्यानगर्यां त्रैकालिकसर्वतीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं ....।

निश्चय औ व्यवहार त्रिरत्न, इनको लेकर किया प्रयत्न।
निज में ज्ञानसूर्य प्रकटाय , उन सबको पूजूँ मन लाय॥ २१९ ॥

ॐ ह्रीं गंधमालिनीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वकेवलिभ्यः अर्घ्यं ....।

लोकविंदुसार तक शास्त्र , उनके ज्ञानी गण आचार्य।
गणधर देवों के चरणाब्ज, जजते खिले भव्य मन अब्ज ॥२२० ॥

ॐ ह्रीं गंधमालिनीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वगणधरचरणेभ्यः अर्घ्यं ....।

शास्त्रज्ञान है नेत्र तृतीय , उन युत श्रुतज्ञानी अद्वितीय।
उनके पद की पूजा करूँ, निज आतम सुख अनुभव करूँ ॥२२१ ॥

ॐ ह्रीं गंधमालिनीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वश्रुतकेवलिभ्यः अर्घ्यं .. ।

सूरी पाठक साधू अनंत, तीनों काल वहाँ विहरंत।
उनका नाम मंत्र जो लेय, सो सब दुःख जलांजलि देय॥२२२॥

ॐ ह्रीं गंधमालिनीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वआचार्योपाध्यायसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थ नाथ से बनते तीर्थ, जहाँ प्रवर्तें धर्म सुतीर्थ।
सब तीर्थों को पूजूँ यहाँ, आत्म विशुद्धी करते यहाँ॥२२३॥

ॐ ह्रीं गंधमालिनीदेशविदेहसंबंधिआर्यखंडे त्रैकालिकसर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं....।

गंधमालिनी देश सुबीच, कहा रजतगिरि शुभ्र गिरीश।
उस पर विद्याधर के वहाँ, केवलि मुनिगण अर्चूं यहाँ॥२२४॥

ॐ ह्रीं गंधमालिनीदेशविदेहमध्ये विजयार्धपर्वतस्य विद्याधरश्रेणीषु त्रैकालिकसर्वकेवलिश्रुतकेवलिसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

दोहा—बत्तिस देश विदेह में, जिनवर मुनिगण आदि।
पूरण अर्घ चढ़ायके, जजूँ हरूँ भव्य व्याधि॥ २२५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थद्वात्रिंशद्विदेहक्षेत्रसंबंधिसर्वतीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधुभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

सोरठा

गणपति मुनिपति वंद्य, सुरपति नरपति से नमित।
पूजूँ भक्ति अमंद, आनन्द कंद जिनंद को॥ १॥

गीताछंद

जय-जय जिनेश्वर तीर्थकर, जयकेवली जिनसाधुवर।
जय-जय गणीश्वर ऋद्धिधर, श्रुतकेवली श्रुतज्ञानधर॥
जय-जय चतुर्विध संघनायक, सूरिवर पाठक सकल।
जय-जय मुनीश्वर साधुगण, जय-जय कल्याणक तीर्थथल॥ २॥

कच्छा सुकच्छा महाकच्छा, कच्छकावति देश हैं।
आवर्त लांगलवर्त पुष्कल, पुष्कलावति देश हैं॥

वत्सा सुवत्सा महावत्सा, वत्सकावति जानिये।
रम्या सुरम्या रम्यणीया, मंगलावति मानिये॥ ३॥

पद्मा सुपद्मा महापद्मा, पद्मकावति क्षेत्र हैं।
शंखा व नलिनी कुमुद सरिता, पश्चिमी दिश देश हैं॥
वप्रा सुवप्रा महावप्रा, वप्रकावति जानिये।
गंधा सुगंधा गंधिला औ, गंधमालिनि मानिये॥ ४॥

बत्तिस विदेह सुख्यात हैं, प्रत्येक में छह खंड हैं।
हैं पांच पांच मिलेछ खंड, इक-इक सु आरज खंड हैं॥
प्रत्येक आरज खंड में, है राजधानी मध्य में।
तीर्थेश चक्री हल धरादिक, जन्मते हैं इन्हीं में॥ ५॥

तीर्थेश पंच कल्याणकों के, ईश धर्म चलावते।
कुछ तीन कल्याणक व दो, कल्याणकों को पावते॥
इनके समवसरणादि में, गणधर रहें मुनिगण रहें।
बारह सभा के भव्यगण, सुन दिव्यध्वनि शिवपद लहें॥ ६॥

यहँ शाश्वती है कर्म भू, शिव के किवाड़ खुले रहें।
दुर्भिक्ष ईती भीति औ, पर चक्र आपद ना रहें॥
यहाँ न्यूनतम से चार तीर्थंकर, अधिक बत्तीस हों।
उन सर्व के पादाब्ज में, संतत नमाऊँ शीश को॥ ७॥

एकेन्द्रियादिक योनियों में नाथ! मैं रुलता रहा।
चारों गती में ही अनादी, से प्रभो भ्रमता रहा॥
मैं द्रव्य क्षेत्र रु काल भव औ भाव परिवर्तन किये।
इनमें भ्रमण से ही, अनंतानंत काल बिता दिये॥ ८॥
बहु जन्म संचित पुण्य से, दुर्लभ मनुष योनी मिली।
हा! बालपन में जड़ सदृश, सज्ज्ञानकलिका ना खिली॥
बहु पुण्य के संयोग से, प्रभु आपकी पूजा करें।
अब शक्ति ऐसी दीजिये, निज के अखिल गुणमणि भरें॥९॥
हे नाथ! बहिरातम दशा को, छोड़ अन्तर आतमा।
होकर सतत ध्याऊं तुम्हें, हो जाऊं मैं परमातमा॥

संसार का संसरण तज , त्रिभुवन शिखर पे जा बसूं।
निज के अनंतानंत गुण को , पाय निज में ही बसूं॥ १०॥

दोहा

तुम प्रसाद से भक्तगण , हो जाते भगवान्।
'ज्ञानमती' निज संपदा , पा करके धनवान्॥ ११॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थद्वात्रिंशद्विदेहसंबंधितीर्थंकरकेवलिगणधरश्रुतकेवलिसर्वसाधु-सर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यः जयमाला अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के , तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा , जिन धर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से , वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर , यहाँ पर कभी ना आवते॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० १२]

जिनधर्म पूजा

अथ स्थापना—गीताछंद

उत्तम क्षमादी धर्म हैं , औ दया धर्म प्रधान है।
वस्तू स्वभाव सु धर्म है , औ रत्नत्रय गुणखान है॥
जो जीव को ले जाके धरता , सर्व उत्तम सौख्य में।
वह धर्म है जिनराज भाषित , पूजहूँ तिहुँकाल मैं॥ १॥

दोहा

भरतैरावत क्षेत्र में , चौथे पांचवे काल।
शाश्वत रहे विदेह में , धर्म जगत् प्रतिपाल॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानजिनधर्म ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानजिनधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानजिनधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अष्टक—चाल—नंदीश्वर पूजा

रेवानदि को जल लाय, कंचन भृंग भरूँ।
त्रयधार करूं सुखदाय, आतम शुद्ध करूँ॥
जिनधर्म विश्व का धर्म, सर्व सुखाकर है।
मैं जजूँ सार्वहित धर्म, गुण रत्नाकर है॥

ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानजिनधर्माय जलं....। १॥

मलयागिरि चंदन गंध, घिस कर्पूर मिला।
जजते ही धर्म अमंद, निज मन कमल खिला॥जिनधर्म०॥

ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानजिनधर्माय चंदनं....। २॥

शशिकर सम तंदुल श्वेत, खंड विवर्जित हैं।
शिवरमणी परिणय हेत, पुंज समर्पित हैं॥जिनधर्म०॥

ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानजिनधर्माय अक्षतं....। ३॥

सित कुमुद नील अरविंद, लाल कमल प्यारे।
मदनारि विजयहित धर्म, पूजूँ सुखकारे॥जिनधर्म०॥

ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानजिनधर्माय पुष्पं....। ४॥

पूरणपोली पयसार[1], पायस[2] मालपुआ।
जिनधर्म सुधासम पूज, आतम सौख्य हुआ॥जिनधर्म०॥

ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानजिनधर्माय नैवेद्यं....। ५॥

मणि दीप कपूर प्रजाल, ज्योति उद्योत करे।
अंतर में भेद विज्ञान, प्रगटे मोह हरे॥जिनधर्म०॥

ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानजिनधर्माय दीपं....। ६॥

दश गंध अग्नि में जार, सुरभित गंध करे।
नित आतम अनुभवसार, कर्म कलंक हरें॥जिनधर्म०॥

ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानजिनधर्माय धूपं....। ७॥

---

१. मलाई २. खीर

एला केला फल आम्र, जंबू निंबु हरे।
शिवकांता संगम हेतु तुम ढिग भेंट करे॥
जिनधर्म विश्व का धर्म, सर्व सुखाकर है।
मैं जजूँ सार्वहित धर्म, गुण रत्नाकर है॥

ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानजिनधर्माय फलं....। ८॥

सलिलादिक द्रव्य मिलाय, कंचनपात्र भरें।
जिनवृष को अर्घ चढ़ाय, शिवसाम्राज्य वरें॥जिनधर्म०॥

ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानजिनधर्माय अर्घ्यं....। ९॥

दोहा

शांतिधारा मैं करूँ, जैन धर्म हितकार।
चउसंघ में शांति करो, हरो सर्व दुःख भार॥ १०॥

शांतये शांतिधारा।

पुष्पांजलि से पूजहूं, श्री जिनधर्म महान्।
दुःख दारिद संकट टले, बनूं आत्मनिधिमान॥ ११॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ

सोरठा

मंगल रूप महान्, जग में लोकोत्तम कहा।
श्री केवलि भगवान्, कथित धर्म सबको शरण॥ १॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

नरेन्द्रछंद

वस्तु स्वभाव हि धर्म कहाता, जल स्वभाव से शीतल।
आत्म स्वभाव ज्ञान दर्शन मय, शुद्ध भाव से निर्मल॥
यह स्वभाव है तर्क अगोचर, इसकी पूजा करके।
वस्तु स्वभावी शुद्धात्मा को, प्राप्त करूँ जिन वृष से॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्य चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानवस्तुस्वभावमयजिनधर्माय अर्घ्यं....।

सर्व वस्तु में धर्म अनंते, अस्ति नास्ति आदिक हैं।
सर्व परस्पर कहे विरोधी, फिर भी रहें युगपत् हैं॥

सप्त भंग युत स्याद्वाद ही, इन विरोध परिहारे।
स्यादस्ति वस्तु स्वचतुष्टय से, इसे जजूँ रुचिधारे॥ २॥
ॐ ह्रीं सप्तभंगस्याद्वादस्य स्यादस्तिधर्माय अर्घ्यं....।

नास्ति धर्म यह सब वस्तू में, अन्य चतुष्टय से नहिं।
अन्य द्रव्य औ क्षेत्र काल औ, अन्य भाव से वह नहिं॥
इस नास्तित्व धर्म से वस्तू, निज स्वरूप से रहती।
परस्वरूप से नास्ति रूप है, इसे जजूँ बहु भक्ती॥ ३॥
ॐ ह्रीं सप्तभंगस्याद्वादस्य स्यान्नास्तिधर्माय अर्घ्यं....।

अस्ति नास्ति ये उभय धर्म भी, एक साथ ही रहते।
स्वपर चतुष्टय क्रम से कहते, नहीं विरोधी दिखते॥
स्यादस्तिनास्ति भंग तीसरा, सब वस्तु में तिष्ठे।
अर्घ चढ़ाकर इसको पूजूँ, वस्तु स्वभाव प्रतिष्ठे॥ ४॥
ॐ ह्रीं सप्तभंगस्याद्वादस्य स्यादस्तिनास्तिधर्माय अर्घ्यं....।

एक साथ नहिं कह सकते इन, अस्ति नास्ति दोनों को।
चौथा भंग इसी से बनता, अवक्तव्य से समझो॥
स्वपर चतुष्टय से युगपत् यह, धर्म वस्तु में रहता।
इसको पूजूँ यह स्वभाव भी, अलग नहीं हो सकता॥ ५॥
ॐ ह्रीं सप्तभंगस्याद्वादस्य स्यादवक्तव्यधर्माय अर्घ्यं....।

स्वद्रव्यादि से वस्तु अस्ति है, अवक्तव्य उस ही क्षण।
स्वपर चतुष्टय एक साथ लें नहिं कह सकते तत्क्षण॥
स्यादस्ति सह अवक्तव्य यह, भंग पांचवां माना।
इसे पूजते बनें स्वधर्मी, वस्तु स्वभाव सुहाना॥ ६॥
ॐ ह्रीं सप्तभंगस्याद्वादस्य स्यादस्तिअवक्तव्यधर्माय अर्घ्यं....।

वस्तु नास्ति पर द्रव्यादिक से, अवक्तव्य भी समझो।
स्वपर चतुष्टय से कहने में, नहिं आवें उस क्षण वो॥
भंग छठा स्यान्नास्ति अवक्तव्य इसे पूजूँ रुचि से।
वस्तु स्वभाव धर्म यह माना, कहा गया जिनवर से॥ ७॥
ॐ ह्रीं सप्तभंगस्याद्वादस्य स्यान्नास्तिअवक्तव्यधर्माय अर्घ्यं....।

स्वपर चतुष्टय से क्रम से कहने में अस्ति नास्ती।
एक साथ नहिं कह सकने से, अवक्तव्य होता भी॥

भंग सातवां अस्ति नास्ति सह अवक्तव्य यह आता।
इसे जजूँ मैं भक्ति भाव से, वस्तु स्वभाव कहाता॥ ८॥

ॐ ह्रीं सप्तभंगस्याद्वादस्य स्यादस्तिनास्तिअवक्तव्यधर्माय अर्घ्यं....।

दोहा

वस्तु स्वभावी धर्म के, सात भंग अवदात।
स्याद्वादमय धर्म यह, जजूँ अर्घ ले हाथ॥ ९॥

ॐ ह्रीं सप्तभंगमयस्याद्वादस्वरूपवस्तुस्वभावधर्माय पूर्णार्घ्यं....।

रोलाछंद

दया धर्म का मूल, सर्व प्रधान जगत में।
जीवन दान महान्, सर्व श्रेष्ठ त्रिभुवन में॥
गृहस्थ मुनि के भेद से दो भेद दया के।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय, मम चित बसे दया ये॥ १०॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानजीवदयापरमधर्माय अर्घ्यं....।

रत्नत्रय है धर्म, निश्चित मुक्ति प्रदाता।
सम्यग्दर्शन ज्ञान, चारित से सुखदाता॥
निश्चय औ व्यवहार, द्विविध धर्म रत्नत्रय।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय, निज को करूँ धर्म मय॥ ११॥

ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानरत्नत्रयधर्माय अर्घ्यं....।

सम्यग्दर्शन रत्न, आठ अंग युत माना।
मोक्ष मार्ग का मूल, मुनियों ने है जाना॥
निःशंकित है अंग, जिन वच में नहिं शंका।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय, निज में हो दृढ़ श्रद्धा॥ १२॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनस्य निःशंकितअंगाय अर्घ्यं....।

इह भव में विभवादि, आगे चक्री आदिक।
नाना सुख की चाह, अथवा अन्य मतादिक॥
जो नहिं करते भव्य, निःकांक्षित है उनके।
पूजूँ अंग द्वितीय, मिले आत्म सुख जिससे॥ १३॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनस्य निःकांक्षितअंगाय अर्घ्यं....।

रत्नत्रय से पूत, मुनियों का तन मानो।
मलमूत्रादिक वस्तु, भरित घिनावन जानो॥

ग्लानि न करके भव्य , गुण में प्रीत बढ़ावें।
निर्विचिकित्सा अंग , इसे जजत सुख पावें॥ १४॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनस्य निर्विचिकित्साअंगाय अर्घ्यं ....।

कुत्सित मार्ग कुधर्म , कुपथ लीन जन बहुते।
इनको माने मूढ़ , सम्यग्दृष्टी बचते॥
चौथा अंग अमूढ़ , दृष्टि कहा जाता है।
इसे पूजते भव्य , उनने भव नाशा है॥ १५॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनस्य अमूढ़दृष्टिअंगाय अर्घ्यं ....।

सदा शुद्ध शिव मार्ग , अज्ञानी जन आश्रय।
दोष कदाचित् होंय , उन्हें ढकें शुभ आशय॥
निज आत्मा के धर्म , मार्दव आदि बढ़ावें।
उपगूहन यह अंग , इसे जजत सुख पावें॥ १६॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनस्य उपगूहनअंगाय अर्घ्यं ....।

सम्यक या चारित , से जो च्युत हो जावे।
उसमें सुस्थिर कर दे , युक्ती आदि उपाये॥
निज को भी शिव मार्ग में ही दृढ़ रक्खे जो।
स्थितिकरण यह अंग , इसे जजें सुख लें वो॥१७॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनस्य स्थितीकरणअंगाय अर्घ्यं ....।

सह धर्मी जन संघ , कपट रहित हो प्रीती।
यथा योग्य सत्कार, यह वात्सल की रीती॥
गाय वत्सवत्प्रेम , वात्सल्य गुण माना।
सम्यग्दर्शन अंग , इसे जजत सुख पाना॥ १८॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनस्य वात्सल्यअंगाय अर्घ्यं ....।

निज प्रभावना करे , निज गुण तेज बढ़ावे।
पूजा दान तपादिक से , जिन धर्म दिपावे॥
यह प्रभावना अंग , तम अज्ञान हटावे।
इसको पूजें भव्य , धर्म महात्म्य दिखावें॥ १९॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनस्य प्रभावनाअंगाय अर्घ्यं ....।

दोहा

अष्ट अंगयुत दृष्टि यह , दोष पच्चीस विहीन।
परमानन्द अमृत भरे , करे दोष सब क्षीण॥ २०॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं....।

दोहा

समकित होते ही हुआ , सम्यग्ज्ञान अपूर्व।
फिर भी ज्ञानाराधना , करो अष्टविध पूर्व॥

नरेंद्रछंद

स्वर व्यंजन से शुद्ध पूर्ण जो ,करे प्रगट उच्चारण।
शब्दाचार करे वृद्धिगत , शुद्ध ज्ञान आराधन॥
स्वपर भेद विज्ञान प्रकट हो , परमाह्लाद विधाता।
अर्घ चढ़ाकर मैं नित पूजूँ मिले सर्वसुख साता॥ २१॥

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानस्य शब्दाचाराय अर्घ्यं....।

सूत्र आदि का अर्थ शुद्ध हो , गुरु की परंपरा से।
पूर्वापर संबंध जुड़ा हो , नहिं अनर्थ हो जिससे॥स्वपर०॥ २२॥

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानस्य अर्थाचाराय अर्घ्यं....।

शब्द अर्थ की पूर्ण शुद्धि हो , उभयाचार कहावे।
उभय नयों से भी सापेक्षित , ज्ञान ज्योति प्रगटावे॥स्वपर०॥ २३॥

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानस्य उभयाचाराय अर्घ्यं....।

त्रय संध्या उल्का ग्रहणादिक ,बहुत अकाल बखाने।
इन्हें छोड़ सिद्धांत ग्रन्थ को , पढ़े जिनाज्ञा मानें॥स्वपर०॥ २४॥

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानस्य कालाचाराय अर्घ्यं....।

हाथ-पैर आदि धोकर के , शुभ स्थान में पढ़ते।
हाथ जोड़ श्रुत भक्ति आदिकर, विनय बहुत विध धरते॥स्वपर०॥२५॥

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानस्य विनयाचाराय अर्घ्यं....।

कुछ रस आदि त्याग कर श्रुत को , पढ़े नियम धर रुचि से।
यह उपधान सहित आराधन , ज्ञान बढ़े नित इससे॥स्वपर०॥ २६॥

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानस्य उपधानाचाराय अर्घ्यं....।

ग्रन्थ और गुरुजन का आदर , पूजा भक्ति करें जो।
यह बहुमान भावश्रुत करके , केवल ज्ञान करे वो॥स्वपर०॥ २७॥

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानस्य बहुमानाचाराय अर्घ्यं....।

जिस गुरु से या जिन शास्त्रों से, ज्ञान प्राप्त हो जाता।
उनका नाम छिपावे नहिं वह, कहा अनिह्नव जाता॥स्वपर०॥ २८॥
ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानस्य अनिह्नवाचाराय अर्घ्यं....।

दोहा

ज्ञान अष्टविध धारते, प्रगटे केवल ज्ञान।
अर्घ चढ़ाकर मैं करूँ, स्वात्म सुधारस पान॥ २९॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं....।

दोहा

सकल विकल के भेद से, चारित द्विविध महान्।
विकल चरित श्रावक धरें, बनें शील गुणवान्॥

पद्धड़िछंद

सम्यक्त्व सहित अणुव्रत सुपांच, गुणव्रत शिक्षाव्रत कहे सात।
ये बारहव्रत हैं गृहीधर्म, इनको पूजें वो लहें शर्म॥ ३०॥
ॐ ह्रीं विकलचारित्रस्य सम्यक्त्वसहितअणुव्रतादिद्वादशविधश्रावकधर्माय अर्घ्यं..।
जो दर्शन व्रत सामायिकादि, ग्यारह प्रतिमा व्रत हैं अनादि।
इनसे श्रावक बनते महान्, यह प्रथम धर्म पूजें सुजान॥ ३१॥
ॐ ह्रीं विकलचारित्रस्य दर्शनव्रतादिएकादशप्रतिमारूपश्रावकधर्मेभ्यः अर्घ्यं....।

सोरठा

मुनीधर्म के भेद, तेरह विध श्रुत में कहे।
उन्हें धरें बिन खेद, वे साधु भवदधि तिरें॥

भुजंगप्रयात छंद

महाव्रत अहिंसा, प्रथम है जगत में।
सभी प्राणियों की, दया है प्रगट में॥
दिगंबर मुनी ही, इसे पालते हैं।
जजें जो अहिंसा, वो अघ टालते हैं॥ ३२॥
ॐ ह्रीं सकलचारित्रस्य अहिंसामहाव्रताय अर्घ्यं....।

असत् अप्रशस्ते, वचन जो न बोलें।
हितंकर मधुर मित, सदा सत्य बोलें॥
यही सत्य व्रत, दूसरा व्रत कहाता।
इसे पूजहूँ, ये वचनसिद्धि दाता॥ ३३॥
ॐ ह्रीं सकलचारित्रस्य सत्यमहाव्रताय अर्घ्यं....।

पराया धनं शिष्य आदी न लेना।
महाव्रत अचौर्य निधी वो बखाना॥
इसे पूजते स्वात्म संपत्ति मिलती।
जिसे प्राप्त करते महासाधु गण ही॥ ३४॥

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्रस्य अचौर्यमहाव्रताय अर्घ्यं....।

सुता मात भगिनी, सदृश सर्व महिला।
महाव्रत सुब्रह्मचर, धरे कोई विरला॥
त्रिजग पूज्य इंद्रादिवंदित ये व्रत है।
इसी से परमब्रह्म होता प्रगट है॥ ३५॥

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्रस्य ब्रह्मचर्यमहाव्रताय अर्घ्यं....।

परिग्रह सभी, मुक्ति जाने में बाधे।
दिगंबर मुनी ही, सभी वस्तु त्यागें॥
जगत भार से, छूटते ही विदेही।
जजूँ पाँचवां व्रत, बनूँ मुक्तिगेही॥ ३६॥

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्रस्य अपरिग्रहमहाव्रताय अर्घ्यं....।

चतुर्युग प्रमाणे, धरा देख चलना।
बिना कार्य के, एक भी पग न धरना॥
सुगुरुदेव तीर्थादिवंदन निमित्त से।
गमन हो समिति ईरिया, को जजूँ मैं॥ ३७॥

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्रस्य ईर्यासमित्यै अर्घ्यं....।

स्वपर हित व मित मिष्ट वच नित्य भाषें।
सुभाषासमिति को, मुनिगण प्रकाशें॥
इसे धारते मुक्तिकन्या भि हो वश।
जजूँ भक्ति से प्राप्त, निर्दोष हों वच॥ ३८॥

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्रस्य भाषासमित्यै अर्घ्यं....।

कृतादी रहित अन्न, प्रासुक स्वहितकर।
गृहस्थी के द्वारा, दिया लेवें मुनिवर॥
स्वकर पात्र में लें, खड़े एक बारे।
यही एषणा समिति, क्षुध व्याधि टारे॥ ३९॥

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्रस्य एषणासमित्यै अर्घ्यं....।

कमंडलु व शास्त्रादि जो वस्तु धरना।
उठाना यदी प्राणियों पे हो करुणा॥
प्रथम चक्षु से देख पिच्छी से शोधें।
ये आदान निक्षेप समिति सपूजें॥ ४०॥

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्रस्य आदाननिक्षेपणसमित्यै अर्घ्यं....।

हरितकाय जंतू रहित भूमि पर जो।
स्वमलमूत्र आदी विकृति को तजें वो॥
विउत्सर्ग समिति धरें, जैन साधू।
जजूँ मैं इसे फिर स्वशुद्धात्म साधू॥ ४१॥

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्रस्य व्युत्सर्गसमित्यै अर्घ्यं....।

महादोष रागादि से चित्त दूरा।
मनोगुप्ति ये पालते साधु शूरा॥
पुनः शुभ अशुभ भाव दोनों निरोधे।
निजानंद रसलीन गुप्ती सुपूजे॥ ४२॥

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्रस्य मनोगुप्त्यै अर्घ्यं....।

वचनगुप्ति आगम के अनुकूल बोलें।
पुनः मौन धर, मुक्ति का द्वार खोलें॥
इसी से वचनसिद्धि, दिव्य ध्वनी भी।
मिलेगी अतः पूजहूँ धार भक्ति॥ ४३॥

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्रस्य वचोगुप्त्यै अर्घ्यं....।

स्वतन की क्रिया सर्व शुभ ही करें जो।
पुनः काय से मोह तज सुस्थिरी हों॥
उभय कायगुप्ती शुक्ल ध्यान पूरे।
जजूँ मैं इसे नंतबल मुझ प्रपूरे॥४४॥

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्रस्य कायगुप्त्यै अर्घ्यं....।

चौबोलछंद

पाँच महाव्रत पाँच समिति औ, तीन गुप्ति ये तेरह विध।
सम्यक् चारित मुक्ति प्रदायक अठबिस मूलगुणों से युत॥
द्वादश तप बाईस परीषह, चौंतिस उत्तर गुण जानों।
लाख चौरासी गुण, सर्वाधिक पूजत ही भव दुःख हानो॥ ४५॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसर्वोत्कृष्टचतुरशीतिलक्षगुणयुतसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं....।

दशधर्म अर्घ्य

गीताछंद

क्रोध के बहु निमित्त मिलते, हो न मन में कलुषता।
निज अशुभ कर्मोदय निमित्त लख, पियें समरसमय सुधा॥
उत्तम क्षमा यह धर्म जग में, वैर निज पर का हरे।
यह पूर्ण शांती सौख्यदाता, पूजतें मन खुश करे॥ ४६॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं....।

मृदुभाव मार्दव मान हरता, विनय गुण चित्त में भरे।
हो उच्चगोत्री मनुष चक्री, सुरपति के पद धरे॥
कुल जाति बल रूपादिमद से, मिलत है नीची गती।
अतएव मार्दव गुण बड़ा है, पूजते दे शिवगति॥ ४७॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं....।

मन वचन तन की कुटिलता से, योनि तिर्यक् की मिले।
मन वचन तन की सरलता से, ऋजू शिवगति भी मिले॥
विश्वासघात समान नहिं है, पाप जग में अन्य कुछ।
अतएव आर्जव धर्म उत्तम, पूजहूँ मैं भक्ति युत॥ ४८॥

ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं....।

यह लोभ पाप महान् जग में, सर्व पापों का जनक।
धन स्वास्थ्य इंद्रिय आदि का भी, लोभ है दुखकर प्रगट॥
गंगा-यमुना स्नान से नहिं, आत्म शुद्धी हो कभी।
तज लोभ उत्तम शौच से हो, स्वात्मशुचि पूजूँ अभी॥ ४९॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय अर्घ्यं....।

सच हैं प्रशस्त सुवचन निंदा, पाप कलहादिक रहित।
हो जाय विपदा धर्म पर, ऐसा न सच बोले क्वचित॥
जिनकथित मेरू आदि हैं, अपमृत्यु भी हो लोक में।
यह सत्य वच सर्वोच्च जग में, पूजहूँ दे धोक मैं॥ ५०॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय अर्घ्यं....।

त्रस और स्थावर सभी, षट्काय जीवों पर दया।
पंचेंद्रियों औ चपल मन को, शास्त्रविधि से वश किया॥

संयम सकल या देशसंयम, देवगति ही देयगा।
जो भव्य धारेंगे इसे, उन जन्म दुःख हर लेयगा॥ ५१॥
ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय अर्घ्यं....।

तप बाह्य आभ्यंतर उभय, बारह प्रकार प्रसिद्ध हैं।
जो करें उपवासादि उनको, ऋद्धि सिद्धि प्रगट हैं॥
स्वाध्याय प्रायश्चित विनय, व्युत्सर्ग वैयावृत्य तप।
औ ध्यान आत्म विशुद्धि करते, इन बिना नहिं मुक्तिपद॥५२॥
ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय अर्घ्यं....।

शुचि रत्नत्रय का दान उत्तम, त्याग आगम में कहा।
आहार औषधि अभय ज्ञान, सुदान चउविध भी कहा॥
इन दान में खर्चा गया, धन कूप जलसम बढ़ेगा।
फल भी अनंते गुणा देकर, मोक्ष में ले धरेगा॥ ५३॥
ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय अर्घ्यं....।

कुछ भी न मेरा यह अकिंचन, धर्म सब सुख देयगा।
मुनिवर अकिंचन धर्म पाले, निजगुण अनंते ले सदा॥
जो भी अणुव्रत धारते, क्रम से ममत्व घटाइये।
त्रैलोक्य संपति के धनी बन, स्वात्मरस सुख पाइये॥ ५४॥
ॐ ह्रीं उत्तमआकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं....।

सब नारियों को मातृवत, गिन ब्रह्मचारी जो बनें।
महिलायें भी ब्रह्मचारिणी, बन पूज्य होती जगत में॥
निज ब्रह्म में रति ब्रह्मचर्य, सुरेन्द्रगण भी नमत हैं।
इकदेश व्रत ब्रह्मचर्य से यहां, अनल भी जल बनत हैं॥ ५५॥
ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं....।

चौबोलछंद

वैराग्य त्याग दो काष्ठ खंड से, निर्मित सुघड़ नसैनी है।
दशधर्मों की दश पैड़ी से युत, मोक्षमहल की सीढ़ी हैं॥
मुमुक्ष मुनिगण इससे चढ़कर, मुक्तिरमा ढिग जाते हैं।
दशधर्मों को मैं नित पूजूँ, ये निज राज्य दिलाते हैं॥ ५६॥
ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तदशधर्माय पूर्णार्घ्यं....।

दोहा

सोलह कारण भावना, तीर्थंकर पद देत।
इनकी पूजा भक्ति भी, भव भव दुःख हर लेत॥

शंभुछंद

पहली दर्शनविशुद्धि भावन, अष्टांग अष्टगुण संयुत है।
शंकादि विवर्जित दृढ़श्रद्धा से, प्रभु को पूर्ण समर्पित है॥
चल मलिन अगाढ़ दोष विरहित, निज आत्म तत्त्व से परिचित है।
मैं इसको पूजूँ अर्घ सहित, यह देव शास्त्र गुरु में रत है॥५७॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरपदकारणस्वरूपदर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं....।

जो दर्शन ज्ञान चरित तप में, अति आदर से नित विनय करे।
उपचार विनय भी गुरुओं का, प्रत्यक्ष परोक्ष द्विभेद धरे॥
यह विनय सहितता तीर्थंकर, बनने का कारण मानी है।
यह शिव का द्वार सर्व जन प्रिय, मुनियों ने इसको मानी है॥ ५८॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरपदकारणस्वरूपविनयसंपन्नताभावनायै अर्घ्यं....।

पण व्रत के पालन हेतु सदा, निज शील गुणों में प्रीती जो।
सब क्रोधादिक अतिचार रहित, से तृतीय भावना होती वो॥
व्रत शील पूर्ण हो जाते जब, तब मोक्ष निकट हो जाता है।
तब निज में परमामृत झरता, बस पूजन फल मिल जाता है॥ ५९॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरपदकारणस्वरूपशीलव्रतेषुअनतिचारभावनायै अर्घ्यं....।

दिन और रात्रि ज्ञानाराधन, श्रुत को पढ़ना अतिशय रुचि से।
निज शिष्यों को भी सिखलाना, नित धर्म देशना दो रुचि से॥
संतत श्रुत का अभ्यास रहे, यह ही अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग।
यह कारण साम्य सुधारस का, मैं भक्ती से पूजहुँ त्रियोग॥ ६०॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरपदकारणस्वरूपअभीक्ष्णज्ञानोपयोगभावनायै अर्घ्यं....।

जो दयाबुद्धि से रत्नत्रय का, दान भव्य को देते हैं।
प्रासुक परित्याग भावना यह, मुनिगण ही नित धर लेते हैं॥
अथवा चउविध भी दान देय, भविजन पर अनुग्रह करते हैं।
वे मुनि हो या श्रावक भी हों, यह त्याग भावना धरते हैं॥ ६१॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरपदकारणस्वरूपशक्तितस्त्यागभावनायै अर्घ्यं....।

निज शक्ती के अनुसार सदा , बाह्याभ्यंतर तप को करना।
अनशन अवमोदर आदि बाह्य , तप बहुविध से करते रहना॥
प्रायश्चित विनय सुवैयावृत , स्वाध्याय ध्यान व्युत्सर्ग सभी।
अंतर तप अंतरशुद्धि हेतु , इन बिन नहिं मुक्ति जजूँ अभी॥ ६२॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरपदकारणस्वरूपशक्तितस्तपोभावनायै अर्घ्यं ....।
यदि कहीं कभी भी साधु पर , उपसर्ग कष्ट आपत् आवे।
उनको सब विध से दूर भगा,मुनि को सब विध सुख उपजावे॥
निज धर्म ध्यान या शुक्लध्यान में , रहना यही समाधी है।
यह साधू में नित बनी रहे , यह विधि विरलों ने साधी है॥ ६३॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरपदकारणस्वरूपसाधुसमाधिभावनायै अर्घ्यं ....।
रोगादि कष्ट के आने पर , मुनियों की बहु सेवा करना।
निर्दोष औषधि भी देना , तैलादिक भी मर्दन करना॥
बहु आदर से सब शक्ती से , गुरु जन की वैयावृत करना।
तीर्थंकर पद की कारण यह , इसको जजते भवदधि तरना॥ ६४॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरपदकारणस्वरूपवैयावृत्यकरणभावनायै अर्घ्यं ....।
छयालिस गुण युत अठरा दोषों ,विरहित अर्हंत जिनेश्वर हैं।
शिव पथ नेता हित उपदेष्टा , यह वीतराग परमेश्वर हैं॥
इनकी भक्ती है कामधेनु , चिंतामणि पारसमणि भी हैं।
साक्षात् कल्पतरु भी यह ही , इसकी पूजा भी फलती है॥ ६५॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरपदकारणस्वरूपअर्हदभक्तिभावनायै अर्घ्यं ....।
चउसंघ नेता आचार्य देव , इनकी भक्ती गुण भरती है।
इनमें अनुराग करें उनकी , भव नाव भवोदधि तरती है॥
दीक्षा शिक्षा दें अनुग्रह कर , बहु उपकारी सूरीवर हैं।
आचार्य भक्ति की पूजा भी , रत्नत्रय कल्पतरूवर है॥ ६६॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरपदकारणस्वरूपआचार्यभक्तिभावनायै अर्घ्यं ....।
निज पर आगम के विज्ञानी , बहुश्रुत ज्ञानी मुनिगण जो भी।
उनमें अनुराग वही भक्ती , श्रुतज्ञान पूर्ण करती सो भी॥
इस बहुश्रुत भक्ति भावना को , भाकर तीर्थंकर बनते हैं।
जो पूजें बहुविध अर्घ लिये , वे सर्व हितंकर बनते हैं॥ ६७॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरपदकारणस्वरूपबहुश्रुतभक्तिभावनायै अर्घ्यं ....।

तीर्थंकर वचन प्रकृष्ट कहे, वे ही प्रवचन कहलाते हैं।
अथवा चउसंघ उन वचन सहित, सो भी प्रवचन बन जाते हैं॥
उनमें अनुराग वही भक्ती, नहिं सहज सर्व पा सकते हैं।
जो पा लेते सो ही जग में, तीर्थंकर भी बन सकते हैं॥ ६८॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरपदकारणस्वरूपप्रवचनभक्तिभावनायै अर्घ्यं....।

समता स्तव वंदन प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान कायोत्सर्ग कहे।
मुनियों के ये छह आवश्यक, विधिवत् जो पालें कर्म दहें॥
जिनपूजा दान गुरु पास्ति, स्वाध्याय सुसंयम तप गृहि के।
नित यथा समय हीनाधि रहित, आवश्यक अपरिहाणि यजते॥ ६९॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरपदकारणस्वरूपआवश्यकअपरिहाणिभावनायै अर्घ्यं....।

पूजा तप दान ज्ञान अतिशय, बहुविध जिन धर्म उद्योत करें।
अज्ञान तिमिर से व्याप्त जगत, में ज्ञान ज्योति प्रद्योत भरे॥
यह मार्ग प्रभावन तीर्थंकर, प्रकृती का बंध कराती है।
इसको पूजें हम अर्घ्य लिये, यह मुक्ति मार्ग दिखलाती है॥ ७०॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरपदकारणस्वरूपमार्गप्रभावनाभावनायै अर्घ्यं....।

गौवत्स सदृश चउविध संघ में, जो सहज प्रीति हो जाती है।
यह प्रवचन वत्सलता निश्चित, निज गुण में प्रीति बढ़ाती है॥
जो नित प्रसन्नमन हो करके, प्रवचनवत्सल को भाते हैं।
वे तीर्थंकर पद लहें अतः, हम जजें भावना भाते हैं॥ ७१॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरपदकारणस्वरूपप्रवचनवत्सलत्वभावनायै अर्घ्यं....।

ये सोलह सर्व भावना ही, तीर्थंकर प्रकृति बंधवाती हैं।
दर्शन विशुद्धि से सहित एक, दो भी कारण बन जाती हैं॥
तीर्थंकर या श्रुतकेवलि के, चरणों में ही यह प्रकृति बंधे।
तीर्थंकर भाषित धर्म अहो, जो तीर्थंकर पद भी दे दे॥

दोहा

अहो धर्म महिमा अगम, तीर्थंकर पद देत।
नमूँ नमूँ मैं शिर नमा, जजूँ सर्व सुख हेत॥ ७२॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तषोडशकारणभावनास्वरूपधर्माय पूर्णार्घ्यं....।

इस भरतक्षेत्र आरजखंड में, जब चौथाकाल वरतता है।
तब धर्मतीर्थ प्रकटित होता, पाँचवें अंत तक चलता है॥

इस हुंडावसर्पिणी के कारण, तिसरे के अंत से शुरू हुआ।
यह धर्म अनादिअनिधन भी, त्रयकालिक इसको जजूँ यहाँ॥ ७३॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधिभूतभाविवर्तमानकालिककेवलिप्रज्ञप्तजिनधर्माय पूर्णार्घ्यं....।

ऐरावत के आरजखंड में, चौथे व पांववें कालों में।
जिनधर्म प्रगट होता फिर भी, नहिं इसका आदि अंत जग में॥
पर्याय दृष्टि से सादि सांत, यह धर्मचक्र मंगलकारी।
यह लोकोत्तम औ शरणभूत, इसको पूजूँ सब सुखकारी॥ ७४॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रसंबंधिभूतभाविवर्तमानकालिककेवलिप्रज्ञप्तजिनधर्माय पूर्णार्घ्यं....।

मेरूपर्वत के पूरब दिश, सोलह विदेह के देश कहे।
उनमें पांचों कल्याणक या, दो तीन सहित जिनराज रहें॥
वह शाश्वत जैनधर्म रहता, नहिं अंतर कभी पड़े उनमें।
सीमंधर जिन वह पर विहरें, जिनधर्मसासता उसे जजें॥ ७५॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ पूर्वविदेहक्षेत्रसंबंधिशाश्वतत्रयकालिककेवलिप्रज्ञप्तजिनधर्माय पूर्णार्घ्यं....।

मेरूपर्वत के पश्चिम दिश, सोलह विदेह शाश्वत मानें।
वहां धर्मचक्र चलता संतत, भव्यों के भवभय दुःख हाने॥
यह समवसरण में गंधकुटी, की तिसरी कटनी पर राजे।
इसमें हजार आरे चमकें, चक्री भी पूजें भव नाशें॥ ७६॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ पश्चिमविदेहसंब्रंधिशाश्वतविद्यमानकेवलिप्रज्ञप्तजिनधर्माय पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः....।

इन चौंतीस कर्मभूमियों में, जिनधर्म सदा चलता रहता।
सब जीव दयामय धर्म और, वस्तु स्वभाव से भी रहता॥
रत्नत्रय है धर्म व दशविध, धर्म व सोलह कारणमय।
मैं जजूँ नित्य पूर्णार्घ लिये, यह शाश्वत सौख्य सुधारसमय॥ ७७॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातजीवदयामयवस्तुस्वभावस्वरूपरत्नत्रय-रूपदशलक्षणधर्मषोडशकारणभावनास्वरूपत्रैकालिकजिनधर्मेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

शंभुछंद

तीर्थंकर प्रभु के श्री विहार में, धर्मचक्र आगे आगे।
चलता रहता जिससे भू पर, जीवों के दुःख दारिद भागे॥
सर्वाण्ह यक्ष चारों दिश में, यह धर्मचक्र शिर पर धारें।
जिनधर्म अनादी औ अनंत, इसकी जयमाला भव टारें॥ १॥

पंचचामरछंद

जयो जिनेन्द्र धर्म जीव की दया प्रधानमय।
जयो जिनेन्द्र धर्म वस्तु का स्वभाव शुद्धमय॥
जयो जिनेन्द्र धर्म जो क्षमादि दश प्रकार हैं।
जयो जिनेन्द्र धर्म रत्न तीन रूप सार है॥ १॥

इसे धरें स्वयंवरा अनंत ऋद्धियाँ वरें।
हितंकरा अनंत सिद्धियां स्वयं पगे परें॥
शुभंकरा ध्वनी अनंत भव्य को सुखी करे।
समस्त जीव राशि को प्रियंवदा सुखी करे॥ २॥

गणेश धारते इसे महा प्रमोद भाव से।
मुनीश धारते इसे बचें विभाव भाव से॥
सुरेश नित्य चाहते मनुष्य जन्म में मिले।
नरेश नित्य गावते यही धरम हमें मिले॥ ३॥

महान् धर्म इन्द्रवंद्य केवली प्रणीत है।
महान् धर्म चक्रिवंद्य सर्व मंगलीक है॥
महान् धर्म साधु पूज्य लोक में सुश्रेष्ठ है।
महान् धर्म भव्य को सदैव शर्ण देत है॥ ४॥

अनादि जैन धर्म ये समस्त सौख्य खान ही।
अनादि जैन धर्म को मनीषि धारंते यहीं॥
अनादि जैन धर्म से विनाशते करम सभी।
अनादि जैन धर्म के लिए नमोऽस्तु हो अभी॥ ५॥

अनादि जैन धर्म से बड़ा न कोई मित्र है।
अनादि जैन धर्म का दया हि मूल इष्ट है॥
अनादि जैन धर्म में सदैव चित्त को धरो।
अहो अनादि जैन धर्म! मुझपे नित कृपा करो॥६॥

जिनेन्द्र धर्म से सुचक्रवर्ति संपदा मिले।
जिनेन्द्र धर्म से सुरेन्द्र की भि संपदा मिले॥
जिनेन्द्र धर्म से हि तीर्थनाथ संपदा मिले।
जिनेन्द्र धर्म से हि शीघ्र मुक्ति वल्लभा मिले॥ ७॥

दोहा

जन्म मरण व्याधी महा, उसके नाशन हेत।
धर्म महौषधि विश्व में, नमूँ नमूँ शिव हेत॥ ८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रवर्तमानकेवलिप्रज्ञप्तजिनधर्माय जयमाला अर्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के, तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा, जिन धर्म जिन श्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से, वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' सुख पूर्णकर, यहा पर कभी ना आवते॥

इत्याशीर्वादः

[पूजा नं० १३]

जिनागम पूजा

स्थापना—गीताछंद

जिनदेव के मुख से खिरी दिव्या ध्वनी अनअक्षरी।
गणधर ग्रहण कर द्वादशांगी ग्रंथमय रचनाकरी॥
उन अंग पूरब शास्त्र के ही अंश ये सब शास्त्र हैं।
उस जैनवाणी को जजूँ जो ज्ञान अमृत सार है॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतद्वादशांगअंग-बाह्यसर्वजिनागमसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतद्वादशांगअंग-बाह्यसर्वजिनागमसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतद्वादशांगअंग-बाह्यसर्वजिनागमसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टक—चामर छंद

जैन साधु चित्त सम पवित्र नीर ले लिया।
स्वर्ण भृंग में भरा पवित्र भाव मैं किया॥
द्वादशांग जैनवाणी पूजते उद्योत हो।
मोहध्वांत नष्ट हो उदीत ज्ञान ज्योति हो॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतद्वादशांगअंग-बाह्यसर्वजिनागमेभ्यः जलं....।

केशरादि को घिसाय स्वर्ण पात्र में भरी।
पाप ताप शांति हेतु पूजहूँ इसी घरी॥द्वादशांग०॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतद्वादशांगअंग-बाह्यसर्वजिनागमेभ्यः चन्दनं....।

चन्द्ररश्मि के समान धौत स्वच्छ शालि हैं।
पुंज को चढ़ावते भरा सुवर्ण थाल हैं॥ द्वादशांग० ॥३॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतद्वादशांगअंग-बाह्यसर्वजिनागमेभ्यः अक्षतं....।

मोगरा गुलाब चंप केतकी चुनाय के।
स्वात्म सौख्य प्राप्त होय पुष्प को चढ़ावते॥द्वादशांग० ॥४॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतद्वादशांगअंग-बाह्यसर्वजिनागमेभ्यः पुष्पं....।

लड्डुकादि व्यंजनों से थाल को भराय के।
ज्ञानदेवता समीप भक्ति से चढ़ाय के॥द्वादशांग० ॥ ५॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतद्वादशांगअंग-बाह्यसर्वजिनागमेभ्यः नैवेद्यं....।

दीप में कपूर ज्वाल आरती उतारहूं।
ज्ञानपूर जैन भारती हृदय में धारहूं॥द्वादशांग० ॥ ६॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतद्वादशांगअंग-बाह्यसर्वजिनागमेभ्यः दीपं....।

धूप ले दशांग अग्नि पात्र में हि खेवते।
कर्म भस्म हो उड़े सुगंधि को बिखेरते॥द्वादशांग० ॥ ७॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतद्वादशांगअंग-बाह्यसर्वजिनागमेभ्यः धूपं....।

सेव संतरा अनार द्राक्ष थाल में भरें।
मोक्ष फल के हेतु शास्त्र के समीप ले धरें॥द्वादशांग० ॥ ८॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतद्वादशांगअंग-बाह्यसर्वजिनागमेभ्यः फलं....।

वारि गंध शालि पुष्प चरु सुदीप धूप ले।
सत्फलों समेत अर्घ से जजें सुयश मिले॥द्वादशांग० ॥ ९॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतद्वादशांगअंग-बाह्यसर्वजिनागमेभ्यः अर्घ्यं....।

स्वर्ण भृंग नाल से, सुशांति धार देय के।
विश्व शांति हो तुरन्त, इष्ट सौख्य देय के॥

द्वादशांग जैनवाणी पूजते उद्योत हो।
मोहध्वांत नष्ट हो उदीत ज्ञान ज्योति हो॥ १०॥

शांतये शांतिधारा।

गंध से समस्तदिक्, सुगंध कर रहे सदा।
पुष्प को समर्पिते न दुःख व्याधि हो कदा॥द्वादशांग०॥ ११॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

सोरठा

जिनवाणी है पूज्य, अंग तथा अंग बाह्य जो।
जिनवच जिनसम पूज्य, अतः पूजहूँ भक्ति से॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

चौपाई

मुनियों के आचार प्रधान, उनका पूरण करे बखान।
करो यत्नपूर्वक सब क्रिया, जिससे मिले शीघ्र शिव प्रिया॥

दोहा

पद हैं आचारांग में, अठरह सहस प्रमाण।
जो पूजें नित अर्घ लें, मिले सौख्य निर्वाण॥ १॥

ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतआचारांगाय अर्घ्यं....।

स्व समय पर समयों को कहे, स्त्री के लक्षण वरणये।
सूत्र कृतांग दूसरा अंग, इसको नमत मिले सुख संग॥

दोहा

इसी दूसरे अंग में, पद छत्तीस हजार।
पूजत ही भ्रम नाश के, मिले समय का सार॥ २॥

ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतसूत्रकृतांगाय अर्घ्यं....।

जीव और पुद्गल के भेद, एक दोय त्रय आदि अनेक।
वर्णे स्थानांग सदैव, पूजत मिले ज्ञान स्वयमेव॥

तीजे स्थानांग में, पद ब्यालीस हजार।
जो पूजें वे शीघ्र ही, लहें स्वात्म निधि सार॥ ३॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतस्थानांगाय अर्घ्यं....।
द्रव्य अपेक्षा रहें समान, उसे कहें समवाय सुमान।
क्षेत्र काल अरु भाव समान, इनका भी यह करे बखान॥
एक लाख चौंसठ सहस, पद इसके हैं जान।
पूजत ही जिनके सदृश, मिलता स्वात्म निधान॥ ४॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतसमवायांगाय अर्घ्यं....।
जीव अस्ति या नास्ति आदि, साठ हजार प्रश्न इत्यादि।
इनका उत्तर देवे नित्य, व्याख्या प्रज्ञप्ती वह सिद्ध॥
पद माने दो लाख अरु, अट्ठाईस हजार।
वसुविध अर्घ चढ़ाय हूं, मिले सुगुण भंडार॥ ५॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतव्याख्याप्रज्ञप्तिअंगाय अर्घ्यं....।
तीर्थंकर की धर्म कथादि, दिव्य ध्वनि से वर्णे सादी।
त्रय संध्या में खिरती ध्वनी, संशय आदि दोष को हनी॥
पांच लाख छप्पन सहस, पद हैं इसमें जान।
नाथ[1] धर्म-कथांग-यह, जजूँ इसे गुण खान॥ ६॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतनाथधर्मकथांगाय अर्घ्यं....।
पाक्षिक नैष्ठिक साधक भेद, श्रावक के प्रतिमादि अनेक।
इनका वर्णन करे अमंद, सो उपासकाध्ययन सुअंग॥
ग्यारह लाख सत्तर सहस, पद हैं इसमें सिद्ध।
जो पूजें नित भाव से, वे पद लहें अनिंद्य॥ ७॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतउपासकाध्ययनांगाय अर्घ्यं....।
प्रति तीर्थंकर तीरथकाल, दश दश मुनि निज आत्म संभाल।
घोर घोर उपसर्ग सहंत, केवलि हो निर्वाण लहंत॥
अन्तः कृत दश नाम यह, अंग जजूँ धर नेह।
तेइस लख अठवीस सहस, पद से यह वर्णेय॥ ८॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतअंतःकृतदशांगाय अर्घ्यं....।

---

१. ज्ञातृधर्मकथांग नाम भी है।

चौबिस तीर्थंकर का तीर्थ, उनमें हो दश दश मुनि ईश।
घोरोपसर्ग सहनकर मरे, अनुत्तर में इन्द्र अवतरे॥
अनुत्तरौपपादिक दशं, अंग जजूँ सुखकार।
पद हैं बानवे लाख अरु, चव्वालीस हजार॥ ९॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतअनुत्तरौपपादिकदशांगाय अर्घ्यं....।
आक्षेपिणि विक्षेपिणि तथा, संवेदनि निर्वेदनि कथा।
नष्ट मुष्टि चिंतादिक प्रश्न, वर्णन करता है यह अंग॥
इसमें पद तिरानवे, लाख व सोल हजार।
प्रश्न व्याकरण अंग को, जजूँ मिलें सुखसार॥ १०॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतप्रश्नव्याकरणांगाय अर्घ्यं....।
शुभ वर अशुभ कर्मफल पाक, वर्णन करता अंग विपाक।
द्रव्य क्षेत्र काल अरु भाव, इनके आश्रय कहे स्वभाव॥
इस विपाक सूत्रांग में पद हैं एक करोड़।
लाख चुरासी भी कहें जजूँ सदा कर जोड़॥ ११॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतविपाकसूत्रांगाय अर्घ्यं....।
तीन शतक त्रेसठ मत भिन्न, उनका वर्णन करे अखिन्न।
नाना भेद सहित यह अंग, दृष्टिवाद नाम यह अंत॥
इक सौ आठ करोड़ अरु, पद हैं अड़सठ लाख।
छप्पन हजार पांच भी, जजूँ नमाकर माथ॥ १२॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतदृष्टिवादांगाय अर्घ्यं....।

शंभुछन्द

इस दृष्टिवाद के पांच भेद, परिकर्म सूत्र प्रथमानुयोग।
पूरबगत अरु चूलिका कहीं, इनमें भी कहे प्रभेद योग॥
पहले परिकर्म के पांच भेद, उनमें शशि प्रज्ञप्ती पहला।
उसमें पद छत्तिस लाख पांच, हज्जार जजूँ ले अर्घ भला॥ १३॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतचन्द्रप्रज्ञप्तये अर्घ्यं....।
दूजा सूरज प्रज्ञप्ति कहा, परिकर्म सूर्य से संबंधी।
आयु मंडल परिवार ऋद्धि, अरु गमन अयन दिन-रात विधी॥

इन सबका वर्णन करता यह, इसको भक्ती से पूजूँ मैं।
पद पांच लाख अरु तीन सहस, इन वंदत भव से छूटूँ मैं॥ १४॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतसूर्यप्रज्ञप्तये अर्घ्यं....।
प्रज्ञप्ती जंबूद्वीप नाम, यह मेरु कुलाचल क्षेत्रादिक।
वेदिका सरोवर नदी भोग, भू जिनमंदिर सुरभवनादिक॥
इस जंबूद्वीप के मध्य विविध, रचना का वर्णन करता है।
पद तीन लाख पच्चीस सहस, इनका अर्चन भव हरता है॥ १५॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतजंबूद्वीपप्रज्ञप्तये अर्घ्यं....।
इस मध्य लोक में द्वीप और, सागर हैं संख्यातीत कहे।
किसमें क्या है? यह सब वर्णे, व्यंतर आदिक आवास कहे॥
इसमें पद बावन लाख तथा, छत्तीस हजार बखाने हैं।
हम भक्ती से पूजें इसको, जिससे भव भव दुःख हाने हैं॥ १६॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतद्वीपसागरप्रज्ञप्तये अर्घ्यं....।
व्याख्या प्रज्ञप्ती परीकर्म, जीवाजीवादिक द्रव्यों को।
भव्यों व अभव्यों सिद्धों को, वर्णे बहु वस्तु भेदों को॥
इसमें पद लाख चुरासी अरु, छत्तीस हजार बखाने हैं।
हम इसकी पूजा करके ही, निज आत्मा को पहचाने हैं॥ १७॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतव्याख्याप्रज्ञप्तये अर्घ्यं....।
उस दृष्टि वाद का भेद दूसरा, सूत्र नाम का माना है।
है जीव अबंधक अवलेपक, इत्यादिक करे बखाना है॥
यह क्रिया अक्रिया वादों को, अरु विविध गणित को वर्णे है।
पद हैं अट्ठासी लाख कहे, इसको पूजूँ भवतरणी ये॥ १८॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतदृष्टिवादभेदसूत्राय अर्घ्यं....।
तीर्थंकर चक्री हलधर अरु, नारायण प्रतिनारायण हैं।
त्रेसठ ये शलाकापुरुष कहे, इनके चरित्र को वर्णे ये॥
जिनवर विद्याधर ऋद्धिधर, मुनियों राजादिक पुरुषों को।
वर्णे पद इसमें पांच सहस, प्रथमानुयोग पूजूँ इसको॥ १९॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतदृष्टिवादभेदप्रथमानुयोगाय अर्घ्यं....।
चौथा है भेदपूर्व गत जो, इसके भी चौदह भेद कहें।
उत्पाद पूर्व पहला यह भी, उत्पत्ति नाश स्थिति कहे॥

सब द्रव्यों की पर्यायों को यह वर्णे इसको पूजूँ मैं।
इसमें पद एक करोड़ कहे, वंदत भव दुःख से छूटूँ मैं॥ २०॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतउत्पादपूर्वाय अर्घ्यं....।
अग्रायणीय पूरब दूजा, यह सुनय सात सौ अरु दुर्नय।
छह द्रव्य पदार्थों को वर्णे, इसमें पद छयानवे लाख अभय॥
इस द्वितिय पूर्व को पूजूँ मैं, इसका कुछ अंश आज भी है।
षट् खंडागम जो सूत्रग्रंथ, उन भक्ती भवभय हरती है॥ २१॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतअग्रायणीयपूर्वाय अर्घ्यं....।
वीर्यानुवाद है तृतिय पूर्व, यह आत्म वीर्य परवीर्यों को।
तपवीर्यादिक को कहता है, पद सत्तर लाख इसी में हों॥
इसकी भक्ती से शक्ति बढ़े, फिर युक्ति मिले शिवमारग की।
फिर ज्ञान पूर्ण हो मुक्ति मिले, मैं पूजा करूँ सतत इसकी॥ २२॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतवीर्यानुप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं....।
जो अस्तिनास्ति प्रवाद पूर्व, स्वद्रव्य क्षेत्र कालादिक से।
सब वस्तु का अस्तित्व कहे, नास्तित्व अन्यद्रव्यादिक से॥
यह दुर्नय का खंडन करके, नय द्वारा विधि प्रतिषेध कहे।
इसमें पद साठ लाख मानें, इसको पूजत सम्यक्त्व लहे॥ २३॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतअस्तिनास्तिप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं....।
जो ज्ञानप्रवाद नाम पूरब, प्रत्यक्ष परोक्ष प्रमाणों का।
मतिश्रुत अवधि मनपर्यय अरु, केवल इन पांचों ज्ञानों का॥
बहुभेद प्रभेद सहित वर्णे, इसको पूजत हो ज्ञान पूर्ण।
इसमें पद इक कम एककोटि, इस वंदत हो अज्ञान चूर्ण॥ २४॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतज्ञानप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं....।
यह सत्य प्रवाद पूर्व दशविध, सत्यों का वर्णन करता है।
यह सप्तभंग से सब पदार्थ का, सुन्दर चित्रण करता है॥
इसके पूजन से झूठ कपट, दुर्भाषायें नश जाती हैं।
पद एककोटि छह हैं पूजूँ, दिव्यध्वनि वश हो जाती है॥ २५॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतसत्यप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं....।
आत्मा निश्चय से शुद्ध कहा, फिर भी अशुद्ध संसारी है।
व्यवहार नयाश्रित ही कर्मों का, कर्ता है भवकारी है॥

यह आत्म प्रवाद पूर्व कहता , इसमें पद छब्बिस कोटि कहे।
इसको पूजत ही आत्मनिधी , मिलती है जो भव दुःख दहे॥ २६ ॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतआत्मप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं ....।
यह कर्म प्रवाद पूर्व नाना , विध कर्मों का वर्णन करता।
ईर्यापथ कर्म कृतीकर्मों को , अधः कर्म को भी कहता॥
इसमें पद एक करोड़ लाख , अस्सी हैं इसको पूजूँ मैं।
निज पर का भेद ज्ञान करके , इन आठ करम से छूटूँ मैं॥ २७ ॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतकर्मप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं ....।
जो प्रत्याख्यान प्रवाद पूर्व , वह द्रव्य क्षेत्र कालादिक से।
नियमित व अनियमित कालों तक, बहुत्याग विधि को बतलाके॥
वस्तु सदोष का त्याग करो , निर्दोष वस्तु भी तप रुचि से।
पद हैं चौरासी लाख कहें , पूजूँ इसको मैं बहु रुचि से॥ २८ ॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतप्रत्याख्यानप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं ....।
यह विद्यानुप्रवाद रोहिणी , आदिक महविद्या पांच शतक।
अंगुष्ठ प्रसेनादिक विद्या , मानी हैं लघु ये सात शतक॥
इनके सब साधन विधि आदि को , वर्णे इसको जजूँ यहाँ।
पद एककोटि दश लाख कहे, इस पढ़ च्युत हों कुछ साधु यहाँ॥ २९ ॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतविद्यानुप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं ....।
कल्याणप्रवाद पूर्व वर्णे , शशि सूर्य ग्रहादिक गमन क्षेत्र।
अष्टांगमहान निमित्तादिक , पद इसमें छब्बिस कोटि मात्र॥
तीर्थंकर के कल्याणक को , चक्री आदिक के वैभव को।
यह कहता इसको पूजें हम , इससे कल्याण हमारा हो॥ ३० ॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतकल्याणप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं ....।
यह प्राणावाय प्रवाद पूर्व , इंद्रिय बल आयु उच्छवासों का।
अपघात मरण अरु आयुबंध , आयु अपकर्षण आदी का॥
यह आयुर्वेद के अष्ट अंग , का विस्तृत वर्णन करता।
इसमें पद तेरह कोटि इसे , पूजत ही स्वास्थ्य लाभ मिलता॥ ३१ ॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतप्राणवायप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं ....।
जो नृत्यशास्त्र संगीतशास्त्र , व्याकरण छंद अरु अलंकार।
पुरुषादि के लक्षण कहता , जिसमें नवकोटी पद विचार॥

सो है किरिया विशाल पूरब, इसको जो रुचि से भजते हैं।
वे सब शास्त्रों में हों प्रवीण, फिर स्वपर भेद को लभते हैं॥ ३२॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतक्रियाविशालपूर्वाय अर्घ्यं....।
परिकर्म और व्यवहार रज्जु राशि गुणकार वर्ग घन को।
बहु बीजगणित को भी वर्णे, कहता है मुक्ती स्वरूप को॥
पद बारह कोटि पचास लाख, इसको पूजूँ ले अर्घ भले।
यह लोक विंदुसार पूरब, इसके वंदत लोकाग्र मिले॥ ३३॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतलोकविंदुसारपूर्वाय अर्घ्यं....।
दृष्टिवाद का भेद चूलिका, पांच भेद भी उसके हैं।
जलगता पहला जल में स्थलवत्, चलना इत्यादिक वर्णे हैं॥
जलस्तंभन के मंत्र तंत्र तप, आदि अग्नि भक्षण आदिक।
पद दो करोड़ नव लाख नवासी, सहस द्विशत पूजूँ नितप्रति॥ ३४॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतजलगताचूलिकायै अर्घ्यं....।
जो स्थलगता चूलिका है, मेरू कुलपर्वत क्षेत्रों को।
उन पर गमनादिक मंत्र तंत्र, तप आदिक बहुविधि कहती वो॥
पद दो करोड़ नव लाख नवासी, हजार दो सौ इसमें हैं।
इसको पूजूँ मैं अर्घ लिये, यह साधन भवदधि तरने में॥ ३५॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतस्थलगताचूलिकायै अर्घ्यं....।
जो माया गता चूलिका वह, माया का खेल सिखाती है।
बहु इन्द्रजाल क्रीड़ाओं की, मंत्रादि विधी बतलाती है॥
पद दो करोड़ नव लाख नवासी, हजार दो सौ इसमें हैं।
मैं जजूँ इसे यह कुशल सदा, सब जग की माया हरने में॥ ३६॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतमायागताचूलिकायै अर्घ्यं....।
यह रूपगता चूलिका सिंह, गज घोड़ा मनुजादिक बहुविध।
रूपों को धरने के मंत्रों, तप आदिक को वर्णे नितप्रति॥
पद दो करोड़ नव लाख नवासी, हजार दो सौ माने हैं।
मैं जजूँ मिले मुझ आत्मरूप, मुझको पररूप हटाने हैं॥ ३७॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतरूपगताचूलिकायै अर्घ्यं....।
आकाश गता चूलिका सदा, नभ में गमनादि सिखाती है।
बहु विध के मंत्र तंत्र तप के, साधन की विधी बताती है॥

पद दो करोड़ नव लाख नवासी, हजार दो सौ से वर्णे।
मैं इस आशा से जजूँ मिले, मुझ लोकाकाश अग्रक्षण में॥ ३८॥

ॐ ह्रीं जिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतआकाशगताचूलिकायै अर्घ्यं....।

दोहा

अंगबाह्य के भेद हैं, चौदह शास्त्र प्रसिद्ध।
नाम प्रकीर्णक से यही सामायिक आदीक॥

रोला छंद

नियत काल सामायिक, त्रय संध्या में करना।
अनियत काल सदैव, रागद्वेष परिहरना॥
समता भाव स्वरूप, सामायिक कहता है।
प्रथम प्रकीर्णक रूप, जजें मोक्ष मिलता है॥ ३९॥

ॐ ह्रीं अंगबाह्यस्य सामायिकप्रकीर्णकश्रुताय अर्घ्यं....।

चौबीसों तीर्थेश, इनकी स्तुति वंदन का।
उसका फल वर्णेय, वही प्रकीर्णक दूजा॥
जिन प्रतिमा जिनयज्ञ, बहुविधान यह वर्णे।
मैं पूजूँ बहु भक्ति, जिनवर की ले शरणें॥ ४०॥

ॐ ह्रीं अंगबाह्यस्य चतुर्विंशतिस्तवप्रकीर्णकश्रुताय अर्घ्यं....।

जिनवर या जिनगेह, एक एक का वंदन।
सिद्ध वंदना येह, करता पाप निकंदन॥
वंदन विधि फल आदि, सबका वर्णन करता।
पूजूँ मन वचकाय, महापुण्य यह भरता॥ ४१॥

ॐ ह्रीं अंगबाह्यस्य वंदनाप्रकीर्णकश्रुताय अर्घ्यं....।

दिवस रात्रि अरु पक्ष, चातुर्मास संवत्सर।
ईर्यापथ उत्तमार्थ, इन सबका आश्रय कर॥
प्रतिक्रमण के सात, भेदों का बहु वर्णन।
प्रतिक्रमण यह नाम, पूजूँ शुचिकर तन मन॥ ४२॥

ॐ ह्रीं अंगबाह्यस्य प्रतिक्रमणप्रकीर्णकश्रुताय अर्घ्यं....।

दर्शन ज्ञान चरित्र, तप उपचार विनय हैं।
इनके लक्षण भेद, फल आदिक वर्णत है॥

नाम वैनयिक येह, पंचम भेद कहाता।
पूजूँ भक्ति समेत, मिले सर्व सुख साता॥ ४३॥
ॐ ह्रीं अंगबाह्यस्य वैनयिकप्रकीर्णकश्रुताय अर्घ्यं....।

हो स्वाधीन करेय, प्रदक्षिणा त्रय अवनति।
त्रय उपवेशन और, भक्त्या चार शिरोनति॥
द्वादश हों आवर्त, बहु कृतिकर्म विधी से।
जिन सिद्धादि नमेय, जजूँ इसे बहुरुचि से॥ ४४॥
ॐ ह्रीं अंगबाह्यस्य कृतिकर्मप्रकीर्णकश्रुताय अर्घ्यं....।

दशवैकालिक ग्रंथ, मुनि के आचारों को।
भिक्षाटन विधि आदि, चर्या उसके फल को॥
वर्णे बहुत विशेष, उसे जजूँ मन वच तन।
जिन सूत्रों की भक्ति, करे ज्ञान का वर्धन॥ ४५॥
ॐ ह्रीं अंगबाह्यस्य दशवैकालिकप्रकीर्णकश्रुताय अर्घ्यं....।

चार तरह उपसर्ग, बाइस परिषह आदिक।
इनका सहन विधान, फल शिव या स्वर्गादिक॥
इन सबको वर्णेय उत्तराध्ययन वही है।
पूजूँ धर मन नेह, मिलती सौख्य मही है॥ ४६॥
ॐ ह्रीं अंगबाह्यस्य उत्तराध्ययनप्रकीर्णकश्रुताय अर्घ्यं....।

ऋषियों को यदि दोष, लगे व्रतादिक में जो।
प्रायश्चित्त विधान, बहु विध से वर्णे जो॥
कहा कल्प्यव्यवहार, सूत्र प्रकीर्णक नामा।
पूजूँ रुचि मन धार, मिले शीघ्र शिव रामा॥ ४७॥
ॐ ह्रीं अंगबाह्यस्य कल्प्यव्यवहारप्रकीर्णकश्रुताय अर्घ्यं....।

साधू के यह योग्य, यह अयोग्य इस विध से।
द्रव्य क्षेत्र अरु काल, भाव निमित इन धर के॥
कल्प्याकल्प्य सुनाम, इन सबको कहता है।
पूजूँ करूँ प्रणाम, मन पावन करता है॥ ४८॥
ॐ ह्रीं अंगबाह्यस्य कल्प्याकल्प्यप्रकीर्णकश्रुताय अर्घ्यं....।

दीक्षा शिक्षा संघ, पोषण निजसंस्कारा।
सल्लेखन उतमार्थ, मुनि के छहों प्रकारा॥

द्रव्यादि के निमित्त, इन सबको वर्णे जो।
महाकल्प्य वह सूत्र, जजूँ भक्ति धर उसको॥ ४९॥

ॐ ह्रीं अंगबाह्यस्य महाकल्प्यप्रकीर्णकश्रुताय अर्घ्यं....।

चउविध देव व इंद्र, सामानिक इत्यादि।
इनके सुख विभवादि, इनके कारण आदी॥
पूजा दान तपादि, इन सबको कहता जो।
पुंडरीक है नाम, जजूँ नमाकर शिर को॥ ५०॥

ॐ ह्रीं अंगबाह्यस्य पुंडरीकप्रकीर्णकश्रुताय अर्घ्यं....।

देव देवियों आदि के उपपाद इत्यादि।
तप शीलादि निमित्त, कहें सदा सुख आदी॥
महापुंडरीकास्य, वर्णन करे निरन्तर।
पूजूँ भक्ति संभाल, मिले शीघ्र शिवसुन्दर॥ ५१॥

ॐ ह्रीं अंगबाह्यस्य महापुंडरीकप्रकीर्णकश्रुताय अर्घ्यं....।

ऋषिगण के बहुभेद, युत प्रायश्चित वर्णे।
निषिद्धिका है नाम, मुनि चर्या को वर्णे॥
चौदहवां अंग बाह्य, भेद प्रकीर्णक माना।
पूजूँ भक्ति बढ़ाय, मिले शीघ्र निजधामा॥ ५२॥

ॐ ह्रीं अंगबाह्यस्य निषिद्धिकाप्रकीर्णकश्रुताय अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य—शंभुछंद

यह द्वादश अंग व अंग बाह्य, इन रूप दिव्य ध्वनि जिनवरकी।
हैं जितने जैन शास्त्र अब भी, सब साररूप ध्वनि जिनवर की॥
गंगा का जल घट में भर लें, वैसे हि ग्रन्थ जिनवर वाणी।
मैं पूजूँ पूरण अर्घ लिये, इस युग में यह ही कल्याणी॥ ५३॥

ॐ ह्रीं द्वादशांगअंगबाह्यसर्वश्रुतज्ञानाय पूर्णार्घ्यं....।

दोहा

सर्ववाङ्मय में कहे, चारनुयोग प्रसिद्ध।
प्रथम करण अरु चरण अरु, द्रव्य नाम से सिद्ध॥

शंभुछंद

जो धर्म अर्थ अरु काम मोक्ष, पुरुषार्थ कहे अरु चरित कहे।
त्रेसष्ठ शलाका पुरुषों के, आदर्श महान पुराण कहे॥

वह पुण्य रूप है रत्नत्रय मय बोधि समाधि निधान महा।
मैं पूजूँ उसको उसही का, प्रथमानुयोग यह नाम कहा॥ ५४॥
ॐ ह्रीं प्रथमानुयोगसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं....।
जो लोक अलोक विभाग कहे, षट्काल परावर्तन कहता।
चारों गति के संसरण कहें, भव पंच परावर्तन कहता॥
दर्पण समान वह त्रिभुवन का, सब चित्त सामने झलकाता।
मैं जजूँ उसे करणानुयोग यह, नाम धरे भुवि सुखदाता॥ ५५॥
ॐ ह्रीं करणानुयोगसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं....।
श्रावक मुनि के आचार रूप, चारित्र सही जो बतलाता।
उसकी उत्पत्ती वृद्धि और, रक्षा के साधन सिखलाता॥
चरणानुयोग है शास्त्र वही, जो मोक्ष महल में चढ़ने को।
चरणों को रखने हेतु सहज, सोपान रूप पूजूँ इसको॥ ५६॥
ॐ ह्रीं चरणानुयोगसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं..।.।
जो जीव अजीव सुतत्त्वों को, अरु पुण्य पाप को बतलाता।
आस्रव संवर अरु बंध मोक्ष, तत्त्वों को विधिवत् समझाता॥
वह दीप सदृश द्रव्यानुयोग, द्रव्यों को प्रकट दिखाता है।
श्रुत विद्या का सुन्दर प्रकाश, मैं जजूँ इसे सुखदाता है॥ ५७॥
ॐ ह्रीं द्रव्यानुयोगसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं....।

कतिपय ग्रन्थों को अर्घ्य—चाल (हे दीनबन्धु)

जो है कसायपाहुड, गुणधर गुरू रचित।
क्रोधादि कषायों को, सब विध किया ग्रथित॥
जयधवल नाम टीका, गाथायें दो सौ तेंतिस।
पूजूँ मैं भक्ति धरके, हो पूर्ण ज्ञान विकसित॥ ५८॥
ॐ ह्रीं जयधवलाटीकासमेतकषायप्राभृतग्रन्थाय अर्घ्यं....।
धरसेन सूरिवर से पाया जो ज्ञान मुनि ने।
श्री पुष्पदंत मुनिवर अरु भूतबलि मुनि ने॥
षट्खंड जिनागम की रचना रची उभय ने।
धवला प्रसिद्ध टीका पूजूँ धरूँ विनय मैं॥ ५९॥
ॐ ह्रीं धवलाटीकासमेतषट्खण्डागमग्रन्थाय अर्घ्यं. ..।

महाबंध ग्रन्थ माने, टीका महाधवल युत।
उनको जजूँ रुचि से हो ज्ञानवृद्धि संतत॥
कर्मों का बंध सत्ता उदयादि को बखाने।
इसको जजें भविकजन वे कर्मबंध हाने॥ ६०॥

ॐ ह्रीं महाधवलाटीकासमेतमहाबंधग्रन्थाय अर्घ्यं....।

श्रीयति वृषभ की रचना तीलोय पण्णती है।
इससे त्रिलोक रचना स्पष्ट झलकती है॥
इस ग्रन्थ के पढ़े से होता त्रिलोक दर्शन।
मैं अर्घ ले जजूँ नित होगा निजात्म दर्शन॥ ६१॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकप्रज्ञप्तिग्रन्थाय अर्घ्यं....।

जम्बुद्वीप की पण्णत्ती इस द्वीप को दिखाती।
मेरू कुलाचलादिकं सब वस्तु को बताती॥
इसके पठन से जम्बूद्वीपादि को समझ लो।
भक्ती से अर्घ करके, निजलोक भी समझ लो॥६२॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिग्रन्थाय अर्घ्यं....।

पंचास्तिकाय, प्रवचन सारादि समयसारा।
चौरासि पाहुडादी अरु ग्रन्थ नियम सारा॥
इन सबको अर्घ लेके पूजूँ निजात्म रुचि से।
अज्ञान भाव हटकर निज ज्ञान ज्योति चमके॥ ६३॥

ॐ ह्रीं पंचास्तिकायप्रवचनसारसमयसारनियमसारचतुरशीतिप्राभृतग्रन्थेभ्यः अर्घ्यं...।

आचार सार मूलाचारादि शास्त्र मुनि के।
जो रत्न करंडादी श्रावक क्रियादि कहते॥
आचार शास्त्र पूजा दानादि को बखाने।
उनको जजूँ रुची से वे सर्वदुःख हाने॥ ६४॥

ॐ ह्रीं मूलाचाराचारसाररत्नकरण्डश्रावकाचारादिशास्त्रेभ्यः अर्घ्यं....।

जो हैं पुराणआदी बहु शास्त्र मान्य जग में।
हरिवंश पुराणादि अरु पद्म चरित इनमें॥
तीर्थंकरों व चक्री नारायणादिकों का।
वर्णे चरित्र सुंदर उनको जजूँ सुनीका॥ ६५॥

ॐ ह्रीं महापुराणउत्तरपुराणहरिवंशपुराणपद्मपुराणादिग्रन्थेभ्यः अर्घ्यं....।

तत्त्वार्थ सूत्र तत्त्वों को वर्णता है सुन्दर।
गुरु गृद्धपिच्छ इसमें भर दीना श्रुत समुंदर॥
सर्वार्थसिद्धि आदिक टीका इसी पे बहुती।
हैं आप्तमीमांसादि रचना जजूँ सुभक्ती॥ ६६॥

ॐ ह्रीं तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थतट्टीकासर्वार्थसिद्धितत्त्वार्थराजवार्तिकश्लोकवार्तिकगंधहस्ति-महाभाष्य-आप्तमीमांसाअष्टशतीअष्टसहस्रीआदितत्संबंधितसर्वग्रन्थेभ्यः अर्घ्यं....।

गोमट्टसार जीवकांड कर्मकांड श्रुत।
त्रिलोक सार लब्धि सार क्षपण सार श्रुत॥
ये पंच संग्रहादि ग्रन्थ अर्थ पूर्ण हैं।
इनको जजूँ इन्हीं से अनेकांत पूर्ण हैं॥ ६७॥

ॐ ह्रीं गोमट्टसारजीवकांडकर्मकांडत्रिलोकसारलब्धिसारक्षपणसारपंचसंग्रहनाम-ग्रन्थेभ्यः अर्घ्यं....।

शंभुछंद

जितने जिनश्रुत उपलब्ध आज, जिनमंदिर मठ ग्रन्थालय में।
गुरुपरंपरा से प्राप्त लिखा, भवभीरु महाव्रती मुनिजन ने॥
सर्व अंग पूर्व के अंश-अंश, जिनवर की वाणी मानी है।
मैं पूजूँ अर्घ चढ़ाकर के, ये स्वात्म सुधारस दानी है॥ ६८॥

ॐ ह्रीं गुरुपंरपरागतजिनमंदिरमठग्रन्थालयस्थितसर्वजिनशास्त्रेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा

द्वादशांग हे वाङ्मय! श्रुतज्ञानामृतसिंधु।
गाऊँ तुम जयमालिका, तरूँ शीघ्र भवसिंधु॥ १॥

शंभुछंद

जय जय जिनवर की दिव्यध्वनी, जो अनक्षरी ही खिरती है।
जय जय जिनवाणी श्रोताओं, को सब भाषा में मिलती है॥
जय जय अठरहं महाभाषायें, लघु सातशतक भाषायें हैं।
फिर भी संख्यातों भाषा में, सब समझें जिन महिमा ये है॥ २॥

जिन दिव्यध्वनी को सुनकर के, गणधर गूंथे द्वादश अंग में।
बारहवें अंग के पांच भेद, चौथे में चौदह पूर्व भणें॥
पद इक सौ बारह कोटि तिरासी, लाख अठावन सहस पांच।
मैं इनका वंदन करता हूं, मेरा श्रुत में हो पूरणांक॥ ३॥

इक पद सोलह सौ चौंतीस कोटि और तिरासी लाख तथा।
है सात हजार आठ सौ अट्ठासी अक्षर जिन शास्त्र कथा॥
इतने अक्षर का इक पद तब, सब अक्षर के जितने पद हैं।
उनमें से शेष बचें अक्षर वह, अंगबाह्य श्रुत नाम लहे॥ ४॥

जो आठ कोटि इक लाख आठ, हज्जार एक सौ पचहत्तर।
चौदह प्रकीर्णमय अंगबाह्य, के इतने ही माने अक्षर॥
यह शब्द रूप अरु ग्रन्थ रूप, सब द्रव्यश्रुत कहलाता है।
जो ज्ञानरूप है आत्मा में, वह कहा भावश्रुत जाता है॥ ५॥

जिनको केवलज्ञानी जाने, पर वच से नहिं कह सकते हैं।
ऐसे पदार्थ सु अनंतानंत, जो तीन भुवन में रहते हैं॥
उनसे भि अनन्तवें भाग प्रमित, वचनों से वर्णित हों पदार्थ।
इन प्रज्ञापनीय से भि अनन्तवें, भाग कथित श्रुत में पदार्थ॥ ६॥

फिर भी यह श्रुत सब द्वादशांग, सरसों सम इसका आज अंश।
उनमें से भी लवमात्र ज्ञान, हो जावे तो भी जन्म धन्य॥
यह जिन आगम की भक्ती ही, निज पर का भान कराती है।
यह भक्ती ही श्रुतज्ञान पूर्णकर, श्रुतकेवली बनाती है॥ ७॥

श्रुतज्ञान व केवलज्ञान उभय, ज्ञानापेक्षा हैं सदृश कहे।
श्रुतज्ञान परोक्ष लखे सब कुछ, बस केवलज्ञान प्रत्यक्ष लहे॥
अंतर इतना हि तुम जानो, इसलिए जिनागम आराधो।
स्वाध्याय मनन चिंतन करके, निजआत्म सुधारस को चाखो॥ ८॥

इस जम्बूद्वीप में कर्मभूमि, में चौंतीस जिनवर होते हैं।
उन सबकी ध्वनि जिन आगम है, इससे जन अघमल धोते हैं॥
जिनवचपूजा जिनपूजा सम, यह केवल ज्ञान प्रदाता है।
नित पूजूँ ध्याऊँ गुण गाऊँ, यह भव्यों को सुखदाता है॥ ९॥

है नाम भारती सरस्वती, शारदा हंसवाहिनी तथा।
विदुषी वागीश्वरी और कुमारी, ब्रह्मचारिणी सर्वमता॥
विद्वान जगन्माता कहते, ब्राह्मिणी व ब्रह्माणी वरदा।
वाणी भाषा श्रुतदेवी गौ, ये सोलह नाम सर्व सुखदा॥१०॥

हे सरस्वति ! अमृतझरिणी, मेरा मन निर्मल शांत करो।
स्याद्वाद सुधारस वर्षाकर, सब दाह हरो मन तृप्त करो॥
हे जिनवाणी माता मुझ, अज्ञानी की नित रक्षा करिये।
दे केवल 'ज्ञानमती' मुझको, फिर भले उपेक्षा ही करिये॥११॥

दोहा

भूत भविष्यत् संप्रति, त्रैकालिक जिनशास्त्र।
त्रिकरण शुद्धी मैं नमूँ, मिले सिद्धि सर्वार्थ॥ १२॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषुजिनेंद्रदेवमुखकमलविनिर्गतद्वादशांग-अंगबाह्यसर्वजिनागमेभ्यः जयमाला अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
शांतये शांतिधारा। दिव्य-पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के, तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा, जिन धर्म जिन श्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से, वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर यहां पर कभी ना आवते॥ १॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० १४]

अथ सुदर्शन मेरु पूजा

अथ स्थापना—दोहा

मध्य लोक के मध्य में, मेरु सुदर्शन नाम।
जंबूद्वीप विषै कहा, प्रथम गिरीन्द्र प्रधान॥ १॥

चारों वन के चार दिश, सोलह जिनवर पद्म।
आह्वानन विधि मैं करूँ, पूजूँ जिनपद पद्म॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनमंदिरजिनबिम्बसमूह ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनमंदिरजिनबिम्बसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनमंदिरजिनबिम्बसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चाल—नंदीश्वर पूजा

शुचिशीतल प्रासुक नीर, तीरथ गंग भरा।
चरणों में धारा देय, सब आतंक हरा॥
मेरू के श्री जिनगेह, सोलह विख्यता।
जो पूजें भक्ति समेत, पावें सुख साता॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः जलं....।

अलि गुंजत गंध सुगंध, चन्दन घिस लाया।
जिन बिंब चरण अरविंद, चर्चन को आया॥मेरू०॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः चंदनं....।

शुभ चंद्र किरण समवेत, अक्षत धोय लिया।
मैं अक्षय सुख के हेत, सन्मुख पुंज किया॥मेरू०॥ ३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं....।

पंकेरुह हरसिंगार, बकुल सुगंध भरें।
जिन चरणन देत चढ़ाय, भव संताप हरें॥मेरू०॥ ४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं....।

फेनी घेवर पकवान, ताजे सरस बने।
जिन सन्मुख चरु की भेंट, भूख पिशाचि हने॥मेरू०॥ ५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं....।

दीपक की ज्योति प्रकाश, जगमग ज्योति जले।
दीपक से पूजूँनाथ, हिय अज्ञान टले॥मेरू०॥ ६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः दीपं....।

कृष्णागरु धूप सुगंध, दश दिश वास करें।
जिन सन्मुख अग्निदाह, करते पाप जरें॥

मेरू के श्री जिनगेह, सोलह विख्याता।
जो पूजें भक्ति समेत, पावें सुख साता॥ ७॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः धूपं....।
नारंगी आम अनार, केला फल सारे।
जिन सन्मुख फल की भेंट, करते सुख सारे॥मेरू०॥ ८॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः फलं....।
जल गंधादिक वसु द्रव्य, लेकर थाल भरा।
प्रभु अर्घ्य समर्पण आज, करता हर्ष भरा॥मेरू०॥ ९॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं....।

सोरठा

शाश्वत श्री जिनधाम, जलधारा से पूजते।
शांति करो जिनराज, शांतिधारा मैं करूँ॥ १०॥
शांतये शांतिधारा।
पारिजात के पुष्प, सुरभित करते दश दिशा।
पुष्पांजलि से पूज, भव भव के दुःख को हरूं॥ ११॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

सर्वश्रेष्ठ गिरिराज है, मेरु सुदर्शन नाम।
चारों वन की भूमि के, जिनगृह करूं प्रणाम॥
इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

वीरछंद

भद्रसाल वन पृथ्वी तल पर, मेरु के चौतरफ कहा।
पूर्व दिशा में जिन चैत्यालय, सुरनर खग से पूज्य कहा॥
आत्म सुधारस आस्वादी मुनि, दर्शन वंदन नित करते।
अष्ट द्रव्य से पूजन कर भवि, जन्म मरण दुःख को हरते॥ १॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिभद्रशालवनस्थितपूर्वदिक्जिनमंदिरजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

भद्रसाल के दक्षिण दिश में, कांचन छवि जिन मंदिर है।
रत्नमयी जिनप्रतिमा राजें, अनुपम रूप मनोहर हैं॥
आत्मसुधारस० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिभद्रशालवनस्थितदक्षिणदिक्जिनमंदिरजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

भद्रसाल वन पश्चिम दिश में, अकृत्रिम जिनधाम कहा।
भवविजयी जिनवर बिंबों से, अद्भुत अतिशय शोभ रहा॥
आत्मसुधारस० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिभद्रशालवनस्थितपश्चिमदिक्जिनमंदिरजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

भद्रसाल के उत्तर दिश में, जिनवर भवन अतुल शुभ है।
भव्य मुमुक्ष जन नित पूजें, कोटि बार नित प्रणमत हैं॥
आत्मसुधारस० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिभद्रशालवनस्थितउत्तरदिक्जिनमंदिरजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

रोलाछंद

मेरु सुदर्शन विषे, सुभग नंदन वन जानो
सुर नरगण से पूज्य, पूर्व दिक् जिन गृह मानो॥
जल गंधादि मिलाय, अर्घ्य ले पूजों भाई।
रोग शोक मिट जाय, मिले निज संपति आई॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुनंदनवनपूर्वदिग्जिनमंदिरजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

नंदन वन के माहिं, जिनालय दक्षिण दिश हैं।
नित्य महोत्सव साज, देवगण पूजन रत हैं॥जल० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुनंदनवनदक्षिणदिग्जिनमंदिरजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

पश्चिम दिश जिननिलय, मनोहर नंदन वन में।
सुर विद्याधर रहें, सतत भक्तिरत जिन में॥जल० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुनंदनवनपश्चिमदिग्जिनमंदिरजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

नंदन वन के उत्तर, जिन मंदिर सुखकारी।
उसमें जिनवरबिंब, दुरितहर मंगलकारी॥जल० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुनंदनवनउत्तरदिग्जिनमंदिरजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

दोहा

वन सौमनस महान है, मेरु सुदर्शन माहिं।
पूरब दिश में जिन भवन, पूजूँ अर्घ्य चढ़ाहिं॥ १॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरोः सौमनसवनपूर्वदिक्जिनमंदिरजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

वन सौमनस जिनेश गृह, दक्षिण दिशा मंझार।
वसु विधि अर्घ्य संजोय के, पूजों हों भव पार॥ २॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरोः सौमनसवनदक्षिणदिक्जिनमंदिरजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

पश्चिम दिश सौमनस के, स्वर्णमयी जिनधाम।
भक्तिभाव से अर्घ्य ले, पूजों जिनवर नाम॥ ३॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरोः सौमनसवनपश्चिमदिक्जिनमंदिरजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

उत्तरदिश सौमनस में, श्री जिन भवन महान्।
त्रिभुवन तिलक प्रसिद्ध हैं, जजूँ अर्घ्य ले आन॥ ४॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरोः सौमनसवनउत्तरदिक्जिनमंदिरजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

शंभुछंद

मेरू पर चौथा पांडुकवन, उसके पूरब दिश सुंदर हैं।
रत्नों की मूर्ती से संयुत, मणिकनकमयी जिनमंदिर हैं॥
जल गंधादिक वसु द्रव्य लिये, नित पूजा करके अर्घ्य करूं।
संसार जलधि से तिरने को, जिन भक्ति नौका प्राप्त करूं॥ १॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिपांडुकवनपूर्वदिक्जिनमंदिरजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

पांडुकवन में दक्षिण दिश का, जिन भवन अनुपम कहलाता।
जो दर्शन वंदन करते हैं, उनको यह अनुपम फलदाता॥जल०॥ २॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिपांडुकवनदक्षिणदिक्जिनमंदिरजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

पांडुकवन के पश्चिम दिश में, जिन चैत्यालय महिमाशाली।
सुरनर विद्याधर से पूजित, सब ताप हरे गुणमणिमाली॥जल०॥ ३॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिपांडुकवनपश्चिमदिक्जिनमंदिरजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

पांडुकवन के उत्तर दिश में, शुभ त्रिभुवन तिलक जिनालय है।
नामोच्चारण से पाप दहे, भक्तों के लिए सुखालय है॥जल०॥४॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिपांडुकवनउत्तरदिक्जिनमंदिरजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य—दोहा

मेरु सुदर्शन के सभी , सोलह जिनवर धाम।
वसुविध अर्घ्य संजोय के , मैं पूजूँ इत ठाम॥ ५॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं ....।

पांडुक आदि चार शिलाओं के चार अर्घ्य

पांडुक वन में ईशान विदिश , इक पांडुकशिला कहाती है।
सौ योजन लंबी अरु पचास , योजन विस्तृत मन भाती है॥
ऊँची अठ योजन अर्ध चन्द्र , आकार कनकमय वर्ण धरे।
इस पर ही भरतक्षेत्र के तीर्थंकर का सुर अभिषेक करें॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिभरतक्षेत्रउत्पन्नतीर्थंकरजन्माभिषेकपवित्र-पांडुकशिलायै अर्घ्यं ....।

आग्नेय विदिश में रजतमयी , है पांडुकंबला शिला कही।
पश्चिम विदेह तीर्थंकर का , अभिषेक करें सुरपती यहीं॥
इस शिला मध्य सिंहासन पर , तीर्थंकर शिशु को बिठलायें।
आजू बाजू हों इन्द्र खड़े , अभिषेक करें सब गुण गायें॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहक्षेत्रतीर्थंकरजन्माभिषेकपवित्रपांडु-कंबलाशिलायै अर्घ्यं ....।

नैऋत्य दिशा में रक्तशिला , कनकाभ कही इसके ऊपर।
ऐरावत के तीर्थंकर का , अभिषेक करें सुरपति मिलकर॥
वनवेदी मंगल द्रव्यों से , बहुशोभित शुद्ध शिलाओं का।
वंदन करते मुनिगण जाकर , मैं पूजूँ भववारिधि नौका॥ ३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिऐरावतक्षेत्रतीर्थंकरजन्माभिषेकपवित्ररक्ताशिलायै अर्घ्यं ....।

वायव्य कोण में रक्तकंबला , लालवर्ण की शिला कही।
पूरब विदेह के तीर्थंकर, शिशु का अभिषेक यहीं पर ही॥
चारण ऋद्धिधारी मुनिगण , अभिषेक देखते अधर खड़े।
सौधर्म इन्द्र बहु विभव करें , हम भी पूजें इन चरण पड़े॥ ४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ-सुदर्शनमेरुवायव्यदिशि पूर्वविदेह-तीर्थंकरजन्माभिषेकपवित्ररक्त-कंबलाशिलायै अर्घ्यं ....।

जाप्य—ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा

सर्वोत्तम सर्वोच्च है, प्रथम मेरु गिरिराज।
उसकी यह जयमालिका, हर्षित गाऊँ आज॥ १॥

शंभुछंद

जयमेरु सुदर्शन है अनुपम, सोलह चैत्यालय से सोहे।
अध्यात्म शिरोमणि योगीजन, उनका भी अतिशय मन मोहे॥
उपवन वापी से कूटों से, परकोटों से सुरभवनों से।
मंडित रमणीक महा सुन्दर, कांचन मणिमय शुभरत्नों से॥ २॥

पृथ्वी पर भद्रसाल वन है, चंपक तरु आदी से भाता।
है पांच शतक योजन ऊपर, नंदनवन अतिशय सुखदाता॥
इससे साढ़े बासठ हजार, योजन ऊपर सौमनस बनी।
छत्तीस हजार महायोजन, ऊपर पांडुकवन सौख्य धनी॥ ३॥

चारों वन के चारों दिश में, अकृत्रिम चैत्यालय मानो।
प्रति मंदिर इक सौ आठ कहीं, जिन प्रतिमा अतिशययुत जानो॥
इनके दर्शन से घोर महा, मिथ्यात्व तिमिर भी नश जाता।
सम्यग्दर्शन की ज्योति जगे, आत्मा आत्मा को लख पाता॥ ४॥

भव-भव से संचित पाप राशि, इक क्षण में भस्म हुआ करती।
जिनराज चरण की भक्ती ही, भवि के भव भव दुख को हरती॥
पांडुकवन की विदिशाओं में, पांडुक आदिक हैं चार शिला।
तीर्थंकर के अभिषव जल से, वे पूज्य हुई सुर वंद्य इला॥ ५॥

जय भद्रसाल के जिनमंदिर, जय नंदनवन के जिनगेहा।
जय सौमनसरु पांडुकवन के, जिनभवन जजूँ मैं धर नेहा॥
ये मूर्ति अचेतन होकर भी, चेतन को वांछित फल देतीं।
जो पूजें ध्यावें भक्ति करें, उनके सब संकट हर लेतीं॥ ६॥

दोहा

मेरु सुदर्शन की भविक , पूजा करो पुनीत।
मेरु सदृश उत्तुंग फल , लहो शीघ्र ही मीत॥ ७॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनमंदिरजिनबिंबेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं .....।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीता छन्द

जो भव्य जम्बूद्वीप के , तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा , जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से , वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्ण कर , यहाँ पर कभी ना आवते॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० १५]

षट् कुलाचल जिनालय पूजा

स्थापना—शंभुछंद

छह कुल पर्वत हिमवन आदी , उनमें छह जिनवर मंदिर है।
यमराज व्यथा निरवारणहित , निज पूजा करत पुरन्दर हैं॥
गणधर मुनिगण नित प्रति ध्याते , परमानंदामृत पीते हैं।
वे मोहराज यमराज महा मृत्यु राजा भी जीते हैं॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमासमूह ! अत्र
अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ
तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम
सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टक—अडिल्ल छंद

हिमवन द्रह को नीर लाय प्रासुक किया।
कर्म कालिमा क्षालन हित धारा दिया॥

हिमवन आदी छह कुल पर्वत मणिमया।
तापर जिनगृह प्रतिमा पूजों सुख भया॥ १॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थकुलाचलसंबंधिसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः जलं....।

चंदन में कर्पूर मिलाय सुवासिया।
जिनपद पूजों भव्य, सकल अघ नाशिया॥हिमवन०॥ २॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थकुलाचलसंबंधिसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः चंदनं....।

उज्ज्वल अक्षत धोय लिये मन भावने।
पुंज चढ़ाऊं जिन सन्मुख, सुख पावने॥हिमवन०॥ ३॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थकुलाचलसंबंधिसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अक्षतं....।

कमल केतकी चंप चमेली लाइया।
मन प्रफुल्ल कर फुल्ल चढ़ा हित चाहिया॥हिमवन०॥ ४॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थकुलाचलसंबंधिसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं....।

बालूसाही रसगुल्ला; मोदक लिया।
क्षुधापिशाची नाशो, प्रभु अर्पण किया॥हिमवन०॥ ५॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थकुलाचलसंबंधिसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं....।

दीपक मैं कर्पूर जला आरति करूँ।
मोह ध्वांत निरवार सकल आरत हरूँ॥हिमवन०॥ ६॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थकुलाचलसंबंधिसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः दीपं....।

धूप धूपदह में खेवूँ सुरभित भली।
दश दिश महक उठी, तुरतहिं आये अली॥हिमवन०॥ ७॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थकुलाचलसंबंधिसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः धूपं....।

आम्र अनन्नास आड़ू, लीची संतरा।
सरस मधुर फल लाय, पूजहूं जिनवरा॥हिमवन०॥ ८॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थकुलाचलसंबंधिसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः फलं....।

वसु विध अर्घ्य बनाय, थाल भर के लिया।
जिन गुणगाय बजाय, अर्घ्य अर्पण किया॥हिमवन०॥९॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थकुलाचलसंबंधिसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

पद्म सरोवर नीर, सुवरण झारी में भरूँ।
जिनपद धारा देय, भव वारिधि से उत्तरूँ॥ १०॥

शांतये शांतिधारा।

सुवरण पुष्प मंगाय , प्रभु चरणों अर्पण करूँ।
वर्ण गंधरस फास , विरहित निज पद को वरूँ॥ ११ ॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

सोरठा

जंबूद्वीप सुमेरु , दक्षिण उत्तर कुलगिरी।
इनके छह जिनगेह , नितप्रति वंदूं भाव से॥

इति सुमेरुपर्वतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

सुगीतिका छंद

हिमवान पर्वत कनक द्युतिमय द्वय तरफ बहुवर्ण का।
वर कूट ग्यारह में कहा इक सिद्धकूट जिनेन्द्र का॥
जिनराज बिंब सुरत्नमय पूजा करूं अति चाव से।
संसार खार अपार सागर तिरूं भक्ती नाव से॥ १ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थहिमवन्पर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं .... ।

पर्वत महाहिमवान चांदीवर्ण का सुन्दर दिखे।
द्वय पार्श्व नाना मणि खचित,पे एक जिनमंदिर दिखे॥
जिनराज० ॥२ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थमहाहिमवन्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं .... ।

पर्वत निषध है तप्त स्वर्णिम , वर्ण बहु द्वय पार्श्व हैं।
ह्रद वेदिका वन कूट नव में , एक जिन आवास है॥
जिनराज० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थनिषधपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं .... ।

वर नीलगिरि वैडुर्य वर्णी , द्वय तरफ पचरंगिमा।
नव कूट में इक जिन भवन सुर , इंद्र पूजें चंद्रमा॥
जिनराज० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थनीलकुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं .... ।

रुक्मी अचल रूपामयी , वर कूट आठों से भरा।
इक कूट में जिनराज गृह , बस दर्श से पातक टरा॥

जिनराज बिंब सुरत्नमय पूजा करूं अति चाव से।
संसार खार अपार सागर तिरूं भक्ती नाव से॥ ५॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थरुक्मीपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं .... ।
शिखरी अचल सोने सदृश, शुभकूट ग्यारह नित्य हैं।
वर सिद्ध कूट जिनेन्द्र मंदिर, पूजते सब भव्य हैं॥
जिनराज० ॥ ६॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थशिखरीकुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं ..।

पूर्णार्घ्य

कुल अद्रि छह पे छह सरोवर, कमल भूमय खिल रहे।
क्रम से श्री ह्री धृती कीर्ती, बुद्धि लक्ष्मी महल हैं॥
छह द्रह से गंगा आदि चौदह, आपगा निकली भईं।
इन अद्रि पे जिन भवन पूजों, दुरित कीचड़ बह गईं॥ ७॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं ...।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः ।
जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा

षट् कुल पर्वत के कहे, षट् मंदिर सुविशाल।
सुर नर खगपति नित जजें, मैं गाऊं गुणमाल॥ १॥

पद्धरी छंद

जय जय कुल पर्वत के जिनेश, तुम हरो सभी मेरे कलेश।
जयमेरू के दक्षिण प्रधान, हिमवन पर्वत शोभे महान॥ २॥
जय ताके पूरब दिशा माहिं, जय सिद्ध कूट जिन संग माहिं।
नगबीच पद्म सरवर कहात, तामध्य कमल मणिमय रहात॥ ३॥
तामें श्री देवी को निवास, उन कमलों पर परिवार वास।
इक लाख और चालिस हजार, इक सौ पंद्रह हैं कमल सार॥ ४॥

सब पृथ्वी कायिक सुरभिमान , उन सबमें जिन मंदिर महान।
द्रह से त्रय नदियों का निकास , तल में गंगादिक कुंड खास॥ ५ ॥

गंगा देवी के महल शीश , राजें जिन प्रतिमा महल शीश।
अभिषेक करत इव नदी धार , ऊपर से पड़ती गंग धार॥ ६ ॥

इस विधि ही सब पर्वत मंझार , बहुविध अनुपम रचना अपार।
सबसें जिनबिंब विराजमान , नासाग्र दृष्टि मुख सौम्य जान॥ ७ ॥

जय सिंहासन छवि कांतिमान , सुर ढोरें चौंसठ चमर आन।
जय भामंडल द्युति रवि लजाहिं , जय छत्र तीन शशिद्युति लजाहिं॥८ ॥

जय जय तुम मंगलकरण देव, जय जय सुख संगम करण देव।
मैं वंदूं तुमको बार बार , प्रभु जन्म मरण मेरो निवार॥ ९ ॥

घत्ताछंद

जय मुक्ति निशाना, जिनवर धामा, आनंद मन जयमाल भणे।
सो मंगल पावे नित हरषावे , फेरि न आवे भव वन में॥ १० ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः जयमाला अर्घ्यं ....।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के , तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा , जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से , वे आत्मनिधि को पावते।
'फिर ज्ञानमति' को पूर्ण कर , यहां पर कभी ना आवते॥

इत्याशीर्वादः ।

[पूजा नं० १६]

चार गजदंत जिनालय पूजा

स्थापना—गीताछंद

जगबीच जबूंद्वीप उत्तम, कनक पर्वत मध्य है।
तिस विदिश चारों में कहे, पर्वत सुभग गजदंत हैं॥
उन चार पर हैं चार जिनगृह, यहां उनकी अर्चना।
मैं करूँ निर्मल भाव से जिन, भक्ति पूजा वंदना॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरोः चतुर्विदिशायां चतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिर-जिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरोः चतुर्विदिशायां चतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिर-जिनप्रतिमासमूह !अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरोः चतुर्विदिशायां चतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिर-जिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथअष्टक—गीताछंद

जल पद्मद्रह का लाय उज्ज्वल, कनक झारी में भरा।
दे धार जिनपदपद्म को, आनन्द रस मन में भरा॥
मुझ चारगति के दुःखनाशन, हेतू चारों मंदिरा।
निज ज्ञान दर्शन सौख्य वीरज, दें चतुष्टय इंदिरा[1]॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुविदिक्चतुर्गजदंतपर्वतजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः जलं....।

गोशीर चंदन घिस सुगंधित, भर कटोरी में लिया।
जिन पादपद्म चढ़ाय श्रद्धा, भाव से अर्चन किया॥मुझ०॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुविदिक्चतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः चंदनं....।

अति धवल तंदुल चन्द्र की, कांतिसदृश भरि थाल सें।
जिन चंद्र सम्मुख पुंज धर, नाऊँ खुशी से भाल मैं॥मुझ०॥ ३॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुविदिक्चतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अक्षतं....।

---

१. लक्ष्मी।

कुंद चंपक औ कदंबक, पुष्प निज कर से चुने।
जिनराज पद अरविंद को, जजतें सभी दुःख को धुने ॥मुझ० ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुविदिक्चतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः
पुष्पं....।

गोक्षीर तंदुल शर्करायुत, फेनि शतछिद्रा[1] बनी।
निज क्षुधारोग विनाश हेतू, पूजहूं त्रिभुवन धनी ॥मुझ० ॥५ ॥
ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुविदिक्चतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः
नैवेद्यं....।

कनक दीपक सुरभिघृत, कार्पास बाती जगमगे।
सब दिशा हों उद्योत उससे, जजों जिनपद सुख जगे ॥मुझ० ॥६ ॥
ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुविदिक्चतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः
दीपं....।

वर धूप दह में धूप दहते, धूम उड़ता दश दिशा।
वसु कर्म जरतें देखकर, मोहारि भगता सब दिशा ॥मुझ० ॥७ ॥
ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुविदिक्चतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः
धूपं....।

फल आम्र कमरख सेब केला, और एला थाल भर।
जिन राज सन्मुख भेंट कर, सिद्धि प्रिया तत्काल वर ॥मुझ० ॥८ ॥
ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुविदिक्चतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः
फलं....।

वर नीर गंधाक्षत सुमन, चरु दीप धूप फलौघ ले।
शुभ अर्घ सो जिनचरण पूजत, पाप अरि सेना दले ॥मुझ० ॥९ ॥
ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुविदिक्चतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः
अर्घ्यं....।

सोरठा

शाश्वत श्री जिनधाम, जलधारा से पूजते।
शांति करो जिनराज, शांतिधारा मैं करूं ॥ १० ॥
शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प, सुरभित करते दश दिशा।
पुष्पांजलि से पूज, भव-भव के दुःख को हरूं ॥ ११ ॥
दिव्य पुष्पांजलिः ।

---

१. घेवर।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

सोरठा

मेरु सुदर्शन लग्न; विदिशा में गजदंत हैं।
पृथक-पृथक तिन पूज, जिनगृह अर्घ्य चढ़ायके॥ १॥

इति मेरोः विदिशायां गजदंतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

दोहा

मेरु के आग्नेय दिश, महासौमनस नाम।
रजतमयी गजदंत यह, सातकूट युत जान॥
मेरु निकट जिन राजगृह, सिद्धकूट पर सिद्ध।
मन वच तन से पूज कर, करूँ काल अरिबिद्ध॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरोः आग्नेयदिशि महासौमनसगजदंतपर्वतसिद्धकूटजिन-मंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

मेरु के नैऋत्यदिश, विद्युत्प्रभ गजदंत।
वर्ण तपाये स्वर्णसम, नव कूटहि शोभंत॥मेरुनिकट०॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरोः नैऋत्यदिशि विद्युत्प्रभगजदंतपर्वतसिद्धकूटजिन-मंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

गंध मादनाचल कहा, मेरु के वायव्य।
सात कूट युत स्वर्णसम, पूजें सुरनर भव्य॥मेरु निकट०॥ ३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरोः वायव्यदिशि गंधमादनगजदंतपर्वतसिद्धकूटजिन-मंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

माल्यवान गजदंत है, मेरु के ईशान।
वर्ण रुचिर वैडूर्यमणि, नवकूटों युत मान॥मेरु निकट०॥ ४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरोः ईशानदिशि माल्यवानगजदंतपर्वतसिद्धकूटजिन-मंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य—सोरठा

चार कहे गजदंत, इनके चारों जिन भवन।
इनमें जो जिनबिंब, उन सबकी पूजा करूँ॥ ५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरोः चतुर्विदिशायां चतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिर-जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधि अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा

गजदंतों पर जिन भवन, शाश्वत बने विशाल।
जिन पदपंकज भ्रमर जन, पढ़ते तिन जयमाल॥ १॥

तोटकछंद

जय मेरु सुदर्शन शैल महा, जय ता विदिशा गजदंत कहा।
जय हस्तिन दंत समान कहे, निषधाचल नील सुपर्श रहे॥ १॥

शत पंच सुयोजन तुंग कहे, ढिग मेरुतने परमाण यहे।
निषधाचल नील तने चउसौ, वर योजन मान सुतुंग कहे॥ २॥

विसतार सुयोजन पाँच शते, निषधाचल मेरु तने लभते।
उत नील सुमेरु तके फैलें, नदिसीत सितोद गुफा धर ले॥ ३॥

जिन मंदिर में जिनकी प्रतिमा, जय जय जय सिद्धनि की उपमा।
जय इंद्र सदा चांवर ढुरते, जय तीन सुछत्र सदा फिरते॥ ४॥

जय आसन रत्न जड़ा प्रभु का, द्युतिमंडल शोभ रहा प्रभु का।
जयदेव रमा मिल नृत्य करें, जय वाद्य मृदंग धुनी विकिरें॥ ५॥

मुनि ध्यान धरें, समभाव लिये, वसु कर्मकलंक निर्मूल किये।
सुर खेचर आवत भक्ति भरे, जल गंध फलादिक पूज करें॥ ६॥

जय जन्म सुधन्य गिने निजके, भव अल्प करें जिन भक्ति तके।
बस आज मिली तव भक्ति प्रभो, मुझ केवल 'ज्ञानमती' वर दो॥ ७॥

घत्ताछंद

जय जय गुणधारी सुख संचारी, विपति विदारी यश करणा।
जय मंगलकारी, अधम उधारी, करुणाधारी तुम शरणा॥ ८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुविदिक्चतुर्गजदंतपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिन-प्रतिमाभ्यः जयमाला अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के, तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिनचैत्य चैत्यालय तथा जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से, वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्ण कर, यहाँ पर कभी न आवते॥ १॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० १७]

जंबूवृक्ष और शाल्मलि वृक्ष पूजा

स्थापना—गीताछंद

गिरि मेरु के उत्तर दिशी, उत्तर कुरु शोभे अहा।
उसमें सुदिक् ईशान के, जंबूतरू राजे महा॥
दक्षिण दिशा में देवकुरु नैऋत्य कोण सुहावनी।
तरु शाल्मलि शुभरत्नमय, सुन्दर दिखे शाखा घनी॥ १॥

दोहा

दोनों तरु की शाख पर, दो श्रीजिनवरगेह।
आह्वानन कर मैं जजूँ, सदा हृदय धर नेह॥ २॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरोः ईशाननैऋत्यकोणयोः जंबूशाल्मलिवृक्षसंबंधिजिनमंदिरजिनप्रतिमासमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरोः ईशाननैऋत्यकोणयोः जंबूशाल्मलिवृक्षसंबंधिजिनमंदिरजिनप्रतिमासमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरोः ईशाननैऋत्यकोणयोः जंबूशाल्मलिवृक्षसंबंधिजिनमंदिरजिनप्रतिमासमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अडिल्लछंद

सुरगंगा को नीर, सुरभि प्रासुक लिया।
जिनपद धारा देय, सकल मल क्षय किया॥

जंबू शाल्मलि वृक्ष, तने जिनधाम को।
जो पूजें धर प्रीति, लहे शिव धाम को॥ १॥
ॐ ह्रीं जंबूशाल्मलिवृक्षसंबंधिद्वयजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः जलं....।

मलयागिरि घनसार, सुकुंकुम गंध ले।
सिद्धों के प्रतिबिम्ब, चरण को चर्च ले॥जंबू०॥ २॥
ॐ ह्रीं जंबूशाल्मलिवृक्षसंबंधिद्वयजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः चंदनं....।

जल से धौत सुअक्षत, मुक्ता फल समा।
पुंज धरूँ जिनसन्मुख भक्ती अनुपमा॥जंबू०॥ ३॥
ॐ ह्रीं जंबूशाल्मलिवृक्षसंबंधिद्वयजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अक्षतं....।

जुही चमेली कमल केवड़ा फूल ले।
प्रभु के चरण चढ़ाऊँ भव के दुख टले॥जंबू०॥ ४॥
ॐ ह्रीं जंबूशाल्मलिवृक्षसंबंधिद्वयजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं....।

सद्यजात[1] घेवर बावर मोदक घने।
चरु की पूजा नित्य क्षुधा व्याधी हने॥जंबू०॥ ५॥
ॐ ह्रीं जंबूशाल्मलिवृक्षसंबंधिद्वयजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं....।

रत्नदीप की ज्योति दशों दिश तम हरे।
अन्तर भेद विज्ञान प्रगट हो भ्रम टरे॥जंबू०॥ ६॥
ॐ ह्रीं जंबूशाल्मलिवृक्षसंबंधिद्वयजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः दीपं....।

धूप अगनि में खेय धूम्र दशदिश उड़े।
कर्म पुंज प्रज्वले सतत आनन्द बढ़े॥जंबू०॥ ७॥
ॐ ह्रीं जंबूशाल्मलिवृक्षसंबंधिद्वयजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः धूपं....।

सुरतरु के परिपक्व सरस फल लाय के।
प्रभु की पूजा करूँ हरष गुण गाय के॥जंबू०॥ ८॥
ॐ ह्रीं जंबूशाल्मलिवृक्षसंबंधिद्वयजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः फलं....।

वारि सुचन्दन अक्षत फूल चरु मिले।
दीप धूप शुचि उत्तम फल युत अर्घ्य ले॥जंबू०॥ ९॥
ॐ ह्रीं जंबूशाल्मलिवृक्षसंबंधिद्वयजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

---

१. ताजे।

सोरठा

जिन पद सरसिज माहिं, मैं जल से धारा करूं।
भव जल को जल देय, परम शांति पाऊँ सदा॥ १०॥

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार सुलेय, पुष्पांजलि अर्पण करूं।
आतम गुण की सुरभि, फैले चारों दिश विषै॥ ११॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

प्रत्येक अर्घ्य

सोरठा

जंबू शाल्मलि वृक्ष, तिनके जिन गृह को जजूँ।
पुष्पांजलि कर नित्य, जो पूजें सो शिव लहें॥ १॥

इति जंबूवृक्षशाल्मलिवृक्षस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

गीताछंद

जंबूतरू की उत्तरी, शाखा विषे जिन धाम है।
सब देव-देवी करें अर्चा, मैं जजूँ इह थान है॥
वर नीर चंदन आदि वसुविध द्रव्य थाली में लिया।
संसार रोग निवार स्वामी, अर्घ्य से पूजन किया॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूवृक्षस्य उत्तरशाखायांजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

द्रुम शाल्मली की दक्षिणी, शाखा उपरि जिनगेह है।
योगी सदा ध्याते उन्हें, हम भी जजें धर नेह है॥वर नीर०॥ २॥

ॐ ह्रीं शाल्मलिवृक्षस्य दक्षिणशाखायां जिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य—दोहा

जंबू शाल्मलि वृक्ष पर, दो जिन मन्दिर सिद्ध।
पूर्ण अर्घ्य ले मैं जजूँ, पाऊं सौख्य समृद्ध॥ ३॥

ॐ ह्रीं जंबूशाल्मलिद्वयवृक्षसंबंधिद्वयजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

सोरठा

तरु की शाखा माहिं, रत्नमयी जिनबिम्ब हैं।
तिन की यह जयमाल, भक्ति भाव से मैं पढ़ूँ॥ १॥

नरेन्द्रछंद

जबूं तरु का स्वर्णिम स्थल, पांचशतक योजन है।
इस थल का परकोटा कांचन, मयी मनोमोहन है॥
पीठ आठ योजन का ऊंचा, मध्य माहिं चांदी का।
इस पर जंबूवृक्ष अकृत्रिम, पृथ्वीमय रत्नों का॥ २॥

यह तरु तुंग आठ योजन है, वज्रमयी जड़ जानो।
मणिमय तना हरित मोटाई, एक कोश पर मानो॥
तरु की चार दिशाओं में है, चार महा शाखायें।
छह योजन की लम्बी इतने, अन्तर से लहरायें॥ ३॥

मरकत कर्केतन मूँगा, कांचन के पत्ते उत्तम।
पांच वर्ण रत्नों के अंकुर, फल अरु पुष्प अनुपम॥
इसमें फल जामुन सदृश हैं, कोमल चिकने दिखते।
रत्नमयी हैं फिर भी अद्भुत, पवन लगत ही हिलते॥ ४॥

उत्तर शाखा पर जिनमंदिर, सुरगृह त्रय शाखा पे।
सम्यक्त्वी आदर व अनादर, व्यंतर रहते उनमें॥
तरु को चारों तरफ घेरकर, बारह पद्म वेदियां।
उनके अंतराल में तरु की, परिकर वृक्ष पंक्तियां॥ ५॥

एक लाख चालिस हजार, इक सौ उन्नीस कहायें।
इन जंबू परिवार वृक्ष पर, सुर परिवार रहायें॥
मेरू की ईशान दिशा में, नीलाचल के दाएं।
माल्यवन्त के पश्चिम में, सीता के पूर्व कहाए॥ ६॥

तरु स्थल के चारों तरफे, त्रय वन खंड कहाते।
फल फूलों युत सुरमहलों युत, जल वापी युत भाते॥

इस द्रुम के जिनगृह में इक सौ, आठ जिनेश्वर प्रतिमा।
इसी तरह शाल्मली वृक्ष की, जानो सारी रचना॥ ७॥

शाल्मलि तरु के अधिपति व्यंतर, वेणु वेणुधारी हैं।
ये सुर सम्यक्त्वी जिनमत के प्रेमी गुणधारी हैं॥
जितने जंबू शाल्मलि तरु हैं, उतने जिनमंदिर हैं।
क्योंकि सभी पर सुर रहते हैं, सबमें जिनमंदिर हैं॥ ८॥

दो चैत्यालय मुख्य अकृत्रिम, हैं स्वतन्त्र दो तरु के।
उनकी अरु सब जिन प्रतिमा की, करूँ वंदना रुचि से॥
सुर किन्नरियां नित गुण गातीं, वीणा की लहरों से।
दर्शन करके नर्तन कीर्तन, करती भक्ति स्वरों से॥ ९॥

घत्ता

जय जय जिन प्रतिमा, अद्भुत महिमा, पढ़े सुने जो जयमाला।
जय 'ज्ञानमती' श्री, सिद्धिवधूप्रिय, सो नर पावे खुशहाला॥ १०॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थजंबूवृक्षशाल्मलिवृक्षसंबंधिजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं....।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के, तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा, जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से, वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर, यहाँ पर कभी ना आवते॥ १॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० १८]

सोलह वक्षार गिरि पूजा

स्थापना—शंभुछंद

मेरु सुदर्शन के पूरब दिश , गिरि वक्षार बखाने हैं।
सीता नदि के उत्तर-दक्षिण , चार चार ये माने हैं॥
मेरू के पश्चिम विदेह में , आठ अचल वक्षार कहे।
सीतोदा के दक्षिण-उत्तर , चार चार हैं शोभ रहे॥ १॥

दोहा

सोलह गिरि वक्षार के , सोलह जिनगृह सिद्ध।
यहां थापना विधि करूं , जजत वरूं सुख सिद्ध॥ २॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरोः पूर्वापरविदेहसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितषोडशजिनमंदिरजिन-प्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरोः पूर्वापरविदेहसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितषोडशजिनमंदिरजिन-प्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरोः पूर्वापरविदेहसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितषोडशजिनमंदिरजिन-प्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

त्रिभंगी छंद

सीतानदि का जल , सुरभित उज्ज्वल , अमल भाव से मैं लाया।
भरि कंचन कलशा, जिनपद परसा , मन अति हरषा गुण गाया॥
वक्षारगिरी पर , सोलह जिन घर , जिनवर प्रतिमा चरण जजों।
प्रभु करुणासागर , सुखरत्नाकर , शरणागत तुम शरण भजों॥ १॥

ॐ ह्रीं षोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः जलं....।

घनसार सुनंदन , षट् पद गुंजन , दाह निकंदन ले आया।
जिनवर पदवंदन , समरस स्यंदन , भव आक्रंदन छुटवाया॥
वक्षार० ॥२॥

ॐ ह्रीं षोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः चंदनं....।

जल से प्रक्षालित, तंदुल सुरभित , शशिकर सदृश भरि लाना।
जिनवर पद सन्निध, पुंज समर्पित, धवल सौख्य हित में कीना॥
वक्षारगिरी पर , सोलह जिन घर , जिनवर प्रतिमा चरण जजों।
प्रभु करुणासागर , सुखरत्नाकर , शरणागत तुम शरण भजों॥ ३॥

ॐ ह्रीं षोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अक्षतं....।

चंपादिक सुमना , सुमनस प्रियना , सुरभित करना मैं लाया।
मधुकर गुंजारे , काम विडारे , जिनपद धारे हरषाया॥
वक्षार०॥ ४॥

ॐ ह्रीं षोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं....।

पायसघृत पूआ , फेनी खोवा , ताजे साजे थाल भरे।
जन घ्राण नयन मन , तर्पित व्यंजन, जिनवर सन्निध भेंट करें॥
वक्षार०॥ ५॥

ॐ ह्रीं षोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं....।

ले दीपक आला , गोघृत डाला , बत्ती ज्वाला ज्योति धरे।
जिनवर की आरति , नित अवतारत, आरत वारत ज्योति करे॥
वक्षार०॥ ६॥

ॐ ह्रीं षोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः दीपं....।

ले धूप सुगंधित , पाप विखंडित , धूपायन में खेय दिया।
दश दिश महकाते , धूम उड़ाते , कर्म जलाते देख लिया॥
वक्षार०॥ ७॥

ॐ ह्रीं षोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः धूपं....।

दाडिम नारंगी , फल मौसंबी , अनन्नास भी मैं लाया।
जनमन को प्रियकर, मधुर सरस फल, प्रभु ढिग धरकर सुख पाया॥
वक्षार०॥ ८॥

ॐ ह्रीं षोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः फलं....।

जल चंदन तन्दुल , पुष्प चरू वर , दीपधूप फल ले लीना।
प्रभु अर्घ्य चढ़ाकर , पुण्य बढ़ाकर पाप नाश कर सुख लीना॥
वक्षार०॥ ९॥

ॐ ह्रीं षोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

सोरठा

सीता नदी सुनीर, जिनपद पंकज धार दे।
वेग हरूँ भवपीर, शांतिधारा शांतीकर॥ १०॥

शांतये शांतिधारा।

बेला कमल गुलाब, चंप चमेली ले घने।
जिनवर पद अरविंद, पूजत ही सुख संपदा॥ ११॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

प्रथम मेरु पूरब अपर, सोलहगिरी वक्षार।
पुष्पांजलि कर पूजते, नाशे विघ्न हजार॥ १॥

इति षोडशवक्षारस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

सवैया छंद

सीता नदि के उत्तर तट पर, भद्रशाल वेदी के पास।
चित्रकूट वक्षार स्वर्णमय, चार कूट से मंडित खास॥
नदी तरफ के सिद्धकूट पर, श्री जिनमंदिर बना विशाल।
जल फल आदिक अर्घ्य बनाकर, पूजन करूँ मिटे जगजाल॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहसंबंधिसीतानद्याः उत्तरतटे चित्रकूटवक्षारपर्वतस्थितजिन-मंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

सीतानदि के उत्तर तट पर, क्रम से. पद्मकूट वक्षार।
स्वर्ण वर्णमय चार कूट युत, देव देवियां करें विहार॥नदी०॥ २॥

ॐ ह्रीं पद्मकूटवक्षारस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

नलिनकूट पर जैनभवन में, विद्याधर गण करें विहार।
श्री जिनमूरति निरख-निरख कर, तृप्त हुये मन हरष अपार॥नदी०॥३॥

ॐ ह्रीं नलिनकूटवक्षारस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

एक शैल वक्षार मनोहर, सुर वनितायें करें विनोद।
जिनगृह की मुनि करें वंदना समरसमय मन भरें प्रमोद॥नदी०॥ ४॥

ॐ ह्रीं एकशैलवक्षारस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

सीतानदि के दक्षिण तट पर, देवारण्य वेदिका पास।
अचल त्रिकूट चारकूटों युत, जिनगृह युत वक्षार सनाथ॥

नदी तरफ के सिद्धकूट पर , श्री जिनमंदिर बना विशाल।
जल फल आदिक अर्घ्य बनाकर , पूजन करूँ मिटे जगजाल ॥५ ॥
ॐ ह्रीं पूर्वविदेहसंबंधिसीतानद्या: दक्षिणतटे त्रिकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिन-
मंदिरजिनप्रतिमाभ्य: अर्घ्यं ....।

क्रम से फिर वैश्रवण कूट है , देव देवियों से भरपूर।
वापी वन उद्यान मनोहर , मुनिगण करें पाप को दूर ॥नदी० ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं वैश्रवणनामवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्य: अर्घ्यं ....।

अंजनात्मा नाम धराता , गिरि वक्षार सदा शुभकार।
सुर विद्याधरगगन गमनचर, ऋषिगण को भी है सुखकार ॥नदी० ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं अंजनात्मावक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्य: अर्घ्यं ....।

शुभ अंजन वक्षार आठवां , योगीजन करते नित ध्यान।
निज आतम परमानंदामृत , अनुभव कर हो रहे महान ॥नदी० ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं अंजननामवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्य: अर्घ्यं ....।

शंभुछंद

पश्चिम विदेह सीतोदा के , दक्षिण में भद्रसाल वेदी।
उस सन्निध श्रद्धावान कहा , वक्षार कनकमय पर्वत ही ॥
नदि के सन्निध है सिद्धकूट , उसमें शाश्वत चैत्यालय है।
जल गंधादिक से पूजूँ मैं , मेरे हित सौख्य सुधालय है ॥ ९ ॥
ॐ ह्रीं पश्चिमविदेहसंबंधिसीतोदानद्या: दक्षिणतटे श्रद्धाननामवक्षारपर्वतस्थित-
सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्य: अर्घ्यं ....।

सीतोदा के दक्षिण तट पर , गिरि विजटावान् कहाता है।
वक्षार सदा चउकूटों युत , सुरनर सबके मन भाता है ॥नदि० ॥१० ॥
ॐ ह्रीं विजटावाननामवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्य: अर्घ्यं ....।

आशीविष है वक्षार कहा , इनपे रत्नों की वेदी हैं।
परकोटे उपवन वापी से , जिनगृह से कर्मन भेदी हैं ॥नदि० ॥ ११ ॥
ॐ ह्रीं आशीविषवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्य: अर्घ्यं ....।

वक्षार सुखावह अति सुंदर , सुर ललना की क्रीडा भूमि।
यतिगण के विहरण से पावन , सबको आनंदकरी भूमि ॥नदि० ॥१२ ॥
ॐ ह्रीं सुखावहनामवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्य: अर्घ्यं ....।

सीतोदा के उत्तर तट पर, शुभ देवारण्य बनी वेदी।
तसु सन्निध चंद्रमाल पर्वत, जनमन का मोह तिमिर भेदी॥नदि०॥१३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपश्चिमविदेहसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे चन्द्रमालवक्षारपर्वतसिद्ध-कूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्य: अर्घ्यं....।

वक्षार मनोहर सूर्यमाल, रत्नों के भवन सुहाते हैं।
सुरललनाओं की वीणा के, तारों से जिनगुण गाते हैं॥नदि०॥ १४॥

ॐ ह्रीं सूर्यमालवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्य: अर्घ्यं....।

वर नागमाल वक्षार अचल, अनुपम कांति छिटकाता है।
जिनवर के दर्शन करते ही, सबके अघपुंज नशाता है॥नदि०॥ १५॥

ॐ ह्रीं नागमालवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्य: अर्घ्यं....।

वक्षार सोलवां देवमाल, रत्नों की कांति लजाता है।
जिनदेव देव के गृह में नित, देवों का नृत्य कराता है॥नदि०॥ १६॥

ॐ ह्रीं देवमालवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्य: अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य—मदअवलिप्त कपोलछंद

सोलह गिरिवक्षार, उन्हीं पर सोलह मंदिर।
वर सामग्री लाय, सतत ही जजें पुरन्दर॥
मैं इह पूजूँ भक्ति भाव से अर्घ्य चढ़ाऊँ।
आधि व्याधि भय शोक नाश निज संपत्ति पाऊँ॥ १७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितषोडशसिद्धकूटजिन-मंदिरजिनप्रतिमाभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलि:।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो नम:।

जयमाला

गीताछंद

वक्षार कांचन वर्ण शुभ, प्रत्येक पर चउकूट हैं।
प्रत्येक में जिनभवन अनुपम, शेष त्रय में सुर रहे॥
ये अचल विस्तृत पांच सौ, योजन उदधि तक लम्ब हैं।
कुल अद्रि तक चउशतक योजन, नदि निकट शतपंच हैं॥ १॥

स्रग्विणीछंद

जै महामेरु के सोल वक्षार ते , जै अनादि अनंते सदा राजते।
जै उन्हों पे विराजे जिनेशालया , जै वहां जैनमूर्ति सुसौख्यालया ॥२ ॥

एक सौ आठ मूर्ति सुप्रत्येक में , सर्वदा पूजते देव देवी उन्हें।
कोई तीर्थेश की कीर्ति गाते वहां, कोई धर्मी गुणों को गिनाते वहां ॥३ ॥

रत्नमूर्ती मनो मोहनी सोहनी , सर्वकर्मारिसेना हनी जोघनी।
देव पूजें बड़ी भक्ति से आय के, द्रव्य अर्पें सदा स्वर्ग से लाय के ॥४ ॥

जो तुम्हें नाथ पूजें स्व पूजा लहें,जो तुम्हें माथ नावें नमें सब उन्हें।
जो तुम्हारे गुणों को सदा गावते, कीर्ति उनकी सदा देवगण गावते ॥५ ॥

जो तुम्हारे निकट नृत्यते भाव से , इन्द्र ताकी सभा में नचें चाव से।
जो तुम्हें ढोरतें हैं चंवर चाव से , इन्द्र ढोरे सदा चामरे तास के ॥६ ॥

जो धरे शीश पे छत्र थारे प्रभो , इन्द्र धारें सदा छत्र तापे विभो।
जो बजावे मृदंगी धुनी झल्लरी , इन्द्र बाजे बजावें सदा ता घरी ॥ ७ ॥

मैं बड़े पुण्य से नाथ पायो तुम्हें , धन्य है धन्य है या घड़ी धन्य मैं।
पूजता हूं बड़ी भक्ति श्रद्धा धरे , केवल ज्ञान की नाथ आशा धरे ॥८ ॥

दोहा

कनक वर्ण वक्षार की , पूजा रची रसाल।
शाश्वत श्री जिनबिंब को , नितप्रति नाऊँ भाल ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहक्षेत्रसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितषोडशसिद्धकूटजिन-मंदिरजिनप्रतिमाभ्य: जयमाला पूर्णार्घ्यं . . . .।
शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलि: ।

गीताछंद

जो भव्य जम्बूद्वीप के , तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा , जिनधर्म जिनश्रुत साधु को ॥
नित पूजते हैं भक्ति से , वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्ण कर , यहाँ पर कभी ना आवते ॥

इत्याशीर्वाद: ।

चौंतीस विजयार्ध के जिनालय की पूजा

स्थापना—दोहा

मेरु सुदर्शन पूर्व में, पूर्व विदेह बखान।
उसके ही पश्चिम तरफ, अपर विदेह महान॥ १॥
दो विदेह में देश सब, सोलह-सोलह जान।
तामध विजयारध लसें, शुभ बत्तीस प्रमाण॥ २॥
भरतैरावत क्षेत्र के, दो भूभृत विजयार्ध।
इन सबमें चौंतीस हैं, श्री जिनभवन महार्घ॥ ३॥

सोरठा

जिनगृह के जिनराज, सबका आह्वानन करूं।
सफल होय ममकाज, आधिव्याधि विनसें सभी॥ ४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरोः पूर्वापरविदेहभरतैरावतसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमासमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरोः पूर्वापरविदेहभरतैरावतसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्ध-पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमासमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरोः पूर्वापरविदेहभरतैरावतसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्ध-पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमासमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टक—चालछंद

क्षीरोदधि उज्ज्वल नीर, सुवरण कलश भरा।
जिनवर पद पद्म चढ़ाय, मेटो जन्म जरा॥
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सों।
चौंतिस विजयारध माहिं, जिनवर पदपरसों॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहसंबंधिचतुस्त्रिंशद्विजयार्धपर्वतजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं. . . .।

चंदन केसर घिस लाय, दाह हरे सारी।
पूजों श्री जिनवर पाय, आनंद हो भारी॥

पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सों।
चौंतिस विजयारध माहिं, जिनवर पदपरसों ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहसंबंधिचतुस्त्रिंशद्विजयार्धपर्वतजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः चंदनं....।

शशि किरणों सम अवदात, अक्षत लाता हूं।
प्रभु सन्निध पुंज चढ़ाय, जिन गुण गाता हूं ॥पूर्वा० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहसंबंधिचतुस्त्रिंशद्विजयार्धपर्वतजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अक्षतं....।

वर चंपक कंज कदंब, सुमन सुमन प्यारे।
फैले दशदिश सौगंध, पूजूँ पद थारे ॥पूर्वा० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहसंबंधिचतुस्त्रिंशद्विजयार्धपर्वतजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं....।

पेड़ा बरफी पकवान, हलुआ थाल भरे।
निज क्षुधा नाशने हेतु, चरु से पूज करें ॥पूर्वा० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहसंबंधिचतुस्त्रिंशद्विजयार्धपर्वतजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं....।

मणिमय दीपक उद्योत, जगमग ज्योति जले।
आरति करते निज मोह, मय सब ध्वांत टले ॥पूर्वा० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहसंबंधिचतुस्त्रिंशद्विजयार्धपर्वतजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः दीपं....।

कृष्णागरु धूप सुगंध, अग्नी संग जरे।
कर कर्मपुंज को भस्म, दशदिश धूम भरे ॥पूर्वा० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहसंबंधिचतुस्त्रिंशद्विजयार्धपर्वतजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः धूपं....।

बादाम, चिरोंजी दाख, नींबू, आम लिये।
जिनपद के निकट चढ़ाय, मन आनंद किये ॥पूर्वा० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहसंबंधिचतुस्त्रिंशद्विजयार्धपर्वतजिनमंदिरजिन-प्रतिमाभ्यः फलं....।

जलगंध प्रभृति सब लेय, अर्घ बनाया है।
जिन चरणों देत चढ़ाय, पुण्य बढ़ाया है ॥पूर्वा० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहसंबंधिचतुस्त्रिंशद्विजयार्धपर्वतजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

सोरठा

सिंधु नदी को नीर, जिनपद धारा मैं करूं।
शांति करो जिनराज, मेरे को सबको सदा॥ १०॥

शांतये शांतिधारा।

कमल केतकी फूल, हर्षित मन से लायके।
जिनवर चरण चढ़ाय, सर्व सौख्य संपत्ति बढ़े॥ ११॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

प्रथम मेरु पूरब अपर, दक्षिण उत्तर जान।
चौंतिस रूपाचल उपरि, जिनगृह पूजूँ आन॥ १॥

इति प्रथमविजयार्धस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

नरेन्द्रछंद

सीतानदि के उत्तर तट में, भद्रसालवन पासे।
कच्छा देश विदेह बीच में, विजयारध गिरि भासे॥
नवकूटों में सिद्धकूट पर, जिनवर भवन महाना।
ऋषिगण वंदन करने जाते, मैं पूजूँ इह थाना॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहस्य सीतानदीउत्तरतटे कच्छादेशमध्ये विजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

मेरू के पश्चिम उस तट पर, देश सुकच्छा सोहें।
तामध रजताचल अति सुंदर, सुर किन्नर मन मोहे॥
नवकूटों में सिद्धकूट पर, जिनवर भवन महाना।
ऋषिगण वंदन करने जाते, मैं पूजूँ भवहाना॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहदेशस्थितसुकच्छादेशमध्ये विजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिन-मंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

देश महाकच्छा कहलाता, रूपाचल ता मध्ये।
विद्याधर ललना किन्नरियां, जिनगुण गाती तथ्ये॥नव०॥ ३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहदेशस्थितमहाकच्छादेशमध्ये विजयार्धपर्वतसिद्ध-कूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

देश कच्छकावती सुमध्ये, रूपाचल सुखकारी।
सुरललना के वीणा स्वर से, जन जन का मनहारी॥
नवकूटों में सिद्धकूट पर, जिनवर भवन महाना।
ऋषिगण वंदन करने जाते, मैं पूजूँ भवहाना॥ ४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहदेशस्थितकच्छकावतीदेशमध्ये विजयार्धपर्वतसिद्ध-कूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

देश कहा आवर्ता सुंदर, रूपाचल तसु बीचे।
रक्ता-रक्तोदा नदियों से, छह खंड होते नीके॥नव०॥ ५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहदेशस्थितआवर्तदिशमध्ये विजयार्धपर्वतसिद्ध-कूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

देश कहा लांगल आवर्ता, ता मध रूपाचल है।
तीनों कटनी पे वन वेदी, वापी जल निर्मल है॥नव०॥ ६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहदेशस्थित लांगलावर्तदेशमध्ये विजयार्धपर्वतसिद्ध-कूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

सुंदर देश पुष्कला के मधि, रूपाचल मन भावे।
उभय तरफ पचपन-पचपन खग, नगरी मन ललचावे॥नव०॥ ७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहदेशस्थितपुष्कलादेशमध्ये विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिन-मंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

देश पुष्कलावती सुहाता, उसमें रजतगिरी है।
विद्याधर की कर्म भूमियां, मुक्ती मार्ग पुरी है॥नव०॥ ८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहदेशस्थितपुष्कलावतीदेशमध्ये विजयार्धपर्वतसिद्ध-कूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

पूर्व विदेह विषे सीता के, दक्षिण दिशि में माना।
देवारण्य वेदिका सन्निध, वत्सादेश बखाना॥
मध्यरजतगिरि सिद्धकूट पर, जिनमंदिर अभिरामा।
जिनवर चरण कमल हम पूजें, मिले सर्वसुख धामा॥ ९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहसीतानदीदक्षिणतटे वत्सादेशस्थितरजताचलसिद्धकूट-जिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

सीता नदि के दक्षिण तट पर, देश सुवत्सा सोहे।
तीर्थंकर चक्री प्रति चक्री, हलधर वह नित होवें॥मध्य०॥ १०॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहसीतानदीदक्षिणतटे सुवत्सादेशस्थितरजताचलसिद्धकूट-जिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

क्रम से देश महावत्सा में, रजताचल है जानो।
गंगा सिंधू नदियों से भी, छह खंड होते मानो ॥मध्य० ॥ ११ ॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहदेशसीतानदीदक्षिणतटे महावत्सादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

देश वत्सकावती वहाँ नित, कर्मभूमि मन भावे।
भव्य जीवगण कर्म अरी हन, मुक्ति रमा सुख पावे ॥मध्य० ॥ १२ ॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहदेशसीतानदीदक्षिणतटे वत्सकावतीदेशस्थितविजयार्ध-पर्वतजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

रम्या देशे आर्यखंड में, असि मषि आदि क्रिया हैं।
क्षत्रिय वैश्य शूद्र त्रयवर्णी, होते सदा जहाँ हैं ॥मध्य० ॥ १३ ॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहदेशसीतानदीदक्षिणतटे रम्यादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

देश सुरम्या शुभ विदेह में, देहनाश कर प्राणी।
हो जाते हैं वे विदेह इस, हेतु सार्थक नामी ॥मध्य० ॥ १४ ॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहदेशसीतानदीदक्षिणतटे सुरम्यादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

रमणीया शुभदेश वहाँ पर, तीर्थंकर नित होते।
समवसरण में भव्य जीवगण, जिनधुनि सुन मल धोते ॥मध्य० ॥ १५ ॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहदेशसीतानदीदक्षिणतटे रमणीयादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

देश मंगलावती जहाँ पर, मुनिगण नित्य विचरते।
चिच्चैतन्य चमत्कारी निज, शुद्धातम में रमते ॥मध्य० ॥ १६ ॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वविदेहदेशसीतानदीदक्षिणतटे मंगलावतीदेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

(अपर विदेह संबंधी सीतोदा नदी के दक्षिण तट पर स्थित आठ रजताचल चैत्यालय पूजा)

अडिल्ल छंद

अपर विदेह नदी सीतोदहिं इधर में।
भद्रसाल वन पास, जुपद्मा नगरि में॥

मध्य रजतगिरि तापे, श्री जिनगेह हैं।
जिनगुण संपत्ति हेतु, जजों धर नेह है॥ १७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहदेशसीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मादेशस्थितरजताचलसिद्ध-कूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

अपर विदेह सुमांहि, नदी के अवर में।
देश सुपद्मा मध्ये, आरज खंड में॥मध्य०॥ १८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहदेशसीतोदानदीदक्षिणतटे सुपद्मादेशस्थितरजताचल-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

देश महापद्मा, छह ख्रंडों युत सही।
असि मषि आदिक छह किरिया, वहां नित कहीं॥मध्य०॥१९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहदेशसीतोदानदीदक्षिणतटे महापद्मादेशस्थितरजताचल-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

देश पद्मकावती मनोहर जानिये।
जिन चैत्यालय ठौर ठौर पर मानिये॥मध्य०॥२०॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहदेशसीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मकावतीदेशस्थितरजता-चलसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

शंखा देश विषे, जिनधर्महि एक है।
अन्य धर्म का नाम, जहां नहिं लेश है॥मध्य०॥२१॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहदेशसीतोदानदीदक्षिणतटे शंखादेशस्थितरजताचल-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

नलिनी देश विदेह, कर्म भूमी सदा।
मुनिवर आतमध्याय, कर्म से हों जुदा॥मध्य०॥२२॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहदेशसीतोदानदीदक्षिणतटे नलिनीदेशस्थितरजताचल-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

कुमुद देश के मांहि, जिनेश्वर नित रहे।
समवसरण में भविक, धर्म अमृत लहें॥मध्य०॥ २३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहदेशसीतोदानदीदक्षिणतटे कुमुददेशस्थितरजताचल-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

सरित देश में सदा, मुमुक्षु जन बसें।
मोक्ष प्राप्ति की आश, धरें तन को कसें॥मध्य०॥ २४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहदेशसीतोदानदीदक्षिणतटे सरितादेशस्थितरजताचल-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

(अपर विदेह की सीतोदा उत्तर तट में आठ विजयार्ध जिनालय पूजा)

लोलतरोल छंद

सीतोदा के उत्तर दिक् में, देवारण्य निकट वप्रा में।
बीचोंबीच रूप्य गिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे॥ २५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहसीतोदानदीउत्तरतटे वप्रादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्ध-कूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

देश सुवप्रा आरजखंड में, ईति भीति दुर्भिक्ष न उनमें।बीचों० ॥२६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहसीतोदानदीउत्तरतटे सुवप्रादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

देश महावप्रा सुखदाता, स्वर्ग मोक्ष का सही विधाता।बीचों० ॥ २७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहसीतोदानदीउत्तरतटे महावप्रादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

देश वप्रकावती सुहाता, सुरनर किन्नर के मन भाता।बीचों० ॥ २८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहसीतोदानदीउत्तरतटे वप्रकावतीदेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

गंधा देश विषे जिनगेहा, उन्हें जजें सुरनर धर नेहा।बीचों० ॥ २९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहसीतोदानदीउत्तरतटे गंधादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

देश सुगंधा मुक्ति प्रदानी, मुनि तप करें वरे शिवरानी।बीचों० ॥३०॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहसीतोदानदीउत्तरतटे सुगंधादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

देश गंधिला में जो जन्में, पूर्वकोटि आयुवर उनमें।बीचों० ॥ ३१॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहसीतोदानदीउत्तरतटे गंधिलादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

गंधमालिनी में होते जो, तनु ऊँचे वर धनुष पांच सौ।बीचों० ॥ ३२॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअपरविदेहसीतोदानदीउत्तरतटे गंधमालिनीदेशस्थितविजयार्धपर्वत सिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

चौपाई छंद

भरत क्षेत्र में हैं छह खंड, विजयार्द्रि इस आरज खंड।
सिद्धकूट पर श्री जिनधाम, जिनपद पूजूँ करूं प्रणाम॥ ३३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधिविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

ऐरावत मधि रजत गिरीश, तापर सिद्धकूट जिन ईश।
जल गंधादिक अर्घ्य मिलाय, पूजन करूं मुदित गुण गाय॥३४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रसंबंधिविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

शंभु छंद—पूर्णार्घ्य

कनकाचल के पूर्वापर में, बत्तीस रजत गिरि माने हैं।
इक भरत एक ऐरावत के, दो रूप्याचल परधाने हैं॥
इन चौंतीस के सब सिद्धकूट, मणिमय जिनबिंब विराजे हैं।
जल गंधादिक ले पूजत ही, मेरे सब पातक भाजे हैं॥ ३५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

इस जंबूद्वीप में अकृत्रिम, जिनमंदिर अठहत्तर माने।
प्रति मंदिर में जिनप्रतिमायें, हैं इक सौ आठ कहीं जानें॥
सब मिलकर आठ हजार चार सौ चौबीस अकृत्रिम प्रतिमा।
मैं पूजूँ अर्घ चढ़ा करके, जिन प्रतिमा की अद्भुत महिमा॥ ३६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअष्टसप्ततिअकृत्रिमजिनमंदिरसंबंधिअष्टसहस्रचतुःशतचतुर्विंशतिशाश्वतजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

मंदिर में मान स्तंभ बने, औ चैत्य वृक्ष सिद्धार्थ वृक्ष।
तोरण आदिक में जिन प्रतिमा, उन सबको पूजूँ धार हर्ष॥
ये जिन प्रतिमायें रत्नों की, अतिशय सुंदर छवि धारे हैं।
जो इनको पूजें त्रिकरणयुत, उनके सब संकट टारें हैं॥ ३७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थप्रत्येकअकृत्रिमजिनमंदिरमानस्तंभचैत्यसिद्धार्थवृक्षतोरणद्वारादिस्थितसर्वजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

इस मध्य लोक में द्वीप त्रयोदश, तक जिनगृह अकृत्रिम हैं।
सब चार शतक अट्ठावन हैं, मुनिगण सुरनरगण प्रणमित हैं॥

प्रतिगृह में इक सौ आठ कहीं, जिनप्रतिमा रत्नमयी उनको।
उनचास सहस चउ सौ चौंसठ, सब हैं मैं पूजूँ उन सबको॥ ३८॥

ॐ ह्रीं मध्यलोकस्थत्रयोदशद्वीपसंबंधिअष्टपंचाशदधिकचतु:शतजिनमंदिरस्थितएकोनपंचाशत्सहस्रचतु:शतकचतु:षष्ठिजिनप्रतिमाभ्य: अर्घ्यं....।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलि:।

जाप्य—ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नम:।

जयमाला

चौबोल छंद

जय बत्तिस देश विदेहों के, सब रजतमयी विजयार्ध कहें।
जय भरतैरावत के दो हैं, सब तीन कटनियों सहित रहें॥
इक सौ दश नगरी खेचर की, शाश्वत उन सब पर बनी हुई।
जय नवकूटों युत उन सबमें, इक सिद्धकूट जिनभवन मयी॥ १॥

स्रग्विणी छंद

देव त्रैलोक्य के पूर्ण चंदा तुम्हें।
मैं नमो मैं नमो, हे जिनंदा तुम्हें॥
नाथ मेरी हरो, जन्म व्याधि व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें, संसरण की कथा॥ २॥
मैं निगोदी रहा, काल आनन्त्य ना।
एक इंद्रीय भू, अग्नि वायू बना॥नाथ मेरी०॥ ३॥
कं[१] वनस्पत्य हूआ सहा दु:ख हा।
सूक्ष्म तनधार जन्मा मरा नाथ हा॥नाथ मेरी०॥ ४॥
केंचुआ, शंख, चींटी ततैंया हुआ।
जन्म धर धर मुआ, जन्म धर धर मुआ॥नाथ मेरी०॥ ५॥
मैं पशू योनि में, जो महा दुख सहा।
नाथ! कैसे कहूं, आप जानो हहा॥नाथ मेरी०॥ ६॥

१. जल।

देवयोनी मनुजयोनि में भी दुखी।
नारकी जो हुआ, तो दुखी ही दुखी॥
नाथ मेरी हरो, जन्म व्याधि व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें, संसरण की कथा॥ ७॥

मैं कहूं क्या प्रभो, आप हो केवली।
मोह शत्रू मुझे, ये भ्रमावे बली॥नाथ मेरी०॥ ८॥

मोह को नाश मैं, आपके पास में।
नाथ आना चहूं, है यही आर्त मे॥नाथ मेरी०॥ ९॥

काव्य छन्द

रूपाचल जिन भवन, तनी जिनराज कहे है।
देव इंद्र धरणेन्द्र, सभी से वंद्य कहे हैं॥
मन वच काय लगाय, सदा उनके गुण गाऊँ।
पूजन अर्चन नमन, करूं भव से छुट जाऊँ॥ १०॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः जयमाला अर्घ्यं....।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के, तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा, जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से, वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर, यहां पर कभी ना आवते॥ १॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० २०]

हिमवान आदि देवभवन गृह चैत्यालय पूजा

199

अथ स्थापना—नरेंद्रछंद

जम्बूद्वीप के हिमवन आदी, नग पर देवभवन हैं।
सर्वभवन में शाश्वत जिनगृह, रत्नमयी उत्तम हैं॥
प्रति जिनगृह में जिन प्रतिमायें, इक सौ आठ प्रमित हैं।
उन सब जिनगृह जिनप्रतिमा को पूजन पाप नशत हैं॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थहिमवनपर्वतादिसंबंधिसर्वदेवभवनजिनालयसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थहिमवनपर्वतादिसंबंधिसर्वदेवभवनजिनालयसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थहिमवनपर्वतादिसंबंधिसर्वदेवभवनजिनालयसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टक—नरेंद्रछंद

पद्म सरोवर को जल उज्ज्वल, सुवरण भृंग भराया।
भक्ति भाव से जिन चैत्यालय, पूजत पाप नशाया॥
हिमवदादि के देवभवन में, जिन चैत्यालय सोहें।
उनको पूजूँ भक्ती से वे, कर्म कालिमा धोवें॥ १॥

ॐ ह्रीं हिमवदादिसंबंधिसर्वदेवभवनजिनालयेभ्यः जलं....।

कश्मीरी केशर घिस चंदन, दाह निवारण काजे।
शाश्वत जिनगृह पूजन करते, रोग शोक डर भाजे॥हिमवदादि०॥२॥

ॐ ह्रीं हिमवदादिसंबंधिसर्वदेवभवनजिनालयेभ्यः चंदनं....।

देवजीर सुखकार अखंडित, अक्षत धोकर लाया।
ज्ञान अखंड करने के हेतु, बहुविध पुंज रचाया॥हिमवदादि०॥ ३॥

ॐ ह्रीं हिमवदादिसंबंधिसर्वदेवभवनजिनालयेभ्यः अक्षतं....।

सुरभित सम सुरभित फूलों से, जिनगृह पूजों भाई।
आनंद कंद चिदानंद अनुपम, सुख पावो अधिकाई॥हिमवदादि०॥४॥

ॐ ह्रीं हिमवदादिसंबंधिसर्वदेवभवनजिनालयेभ्यः पुष्पं....।

कुंडलनी बरफी रसगुल्ला, दालमोठ भर थाली।
शाश्वत जिनगृह पूजन करते, क्षुधा रोग दुख टाली॥
हिमवदादि के देवभवन में, जिन चैत्यालय सोहें।
उनको पूजूँ भक्ती से वे, कर्म कालिमा धोवें॥ ५॥
ॐ ह्रीं हिमवदादिसंबंधिसर्वदेवभवनजिनालयेभ्यः नैवेद्यं....।
जगमग जगमग दीपशिखा यह, पापतिमिर हरणारी।
जिनगृह की नित करूँ आरती, भव आरत परिहारी॥हिमवदादि०॥६॥
ॐ ह्रीं हिमवदादिसंबंधिसर्वदेवभवनजिनालयेभ्यः दीपं....।
धूप सुगंधित खेय अग्नि में, महक उठी चहुंदिश में।
आतम गुण की सौरभ फैले, पूजत ही दश दिश में॥हिमवदादि०॥७॥
ॐ ह्रीं हिमवदादिसंबंधिसर्वदेवभवनजिनालयेभ्यः धूपं....।
एला केला अनन्नास औ, श्रीफल सरस मंगाये।
मोक्ष महाफल पावन हेतू, जिनपद निकट चढ़ाये॥हिमवदादि०॥८॥
ॐ ह्रीं हिमवदादिसंबंधिसर्वदेवभवनजिनालयेभ्यः फलं....।
जल, चंदन, अक्षत, माला चरु, दीप धूप फल लाके।
अर्घ चढ़ाऊँ वाद्य बजाऊँ, पुनि वंदूँ शिर नाके॥हिमवदादि०॥९॥
ॐ ह्रीं हिमवदादिसंबंधिसर्वदेवभवनजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

सोरठा

गंगानदि को नीर, जिनपद में धारा करूं।
शीघ्र करो भवतीर, सर्व अशांती परिहरूं॥ १०॥

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, पुष्पांजलि से पूजते।
आधि व्याधि दुख शून्य, हो जाते क्षण मात्र में॥ ११॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

हिमवन् पर्वत आदि के, सुरगृह के जिनगेह।
पुष्पांजलि कर पूजहूँ, मन वच तन धर नेह॥ १॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

चाल शेर

हिमवान पे हिमवान नाम देव का भवन।
उसमें है जिननिकेतन सुरनर करें नमन॥
मैं भाव भक्तिपूर्वक जिनगेह को जजूँ।
संसार भ्रमण कारण दुर्ध्यान से बचूँ॥ १॥

ॐ ह्रीं हिमवत्पर्वतस्य हिमवानदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

हिमवान नग पे भरतदेव का भवन कहा।
उसमें जिनेंद्र आलय रत्नों से बन रहा॥मैं०॥ २॥

ॐ ह्रीं हिमवत्पर्वतस्य भरतदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

हिमवान पे इला नाम की देवी का है भवन।
उसमें बना जिनालय, भविजन करें भजन॥मैं०॥ ३॥

ॐ ह्रीं हिमवत्पर्वतस्य इलादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस नग पे गंगा नाम की, देवी का गृह बना।
उसमें बना जिनालय, देता है सुख घना॥मैं०॥ ४॥

ॐ ह्रीं हिमवत्पर्वतस्य गंगादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस हिमवदद्रि पर है, श्रीदेवी का महल।
उसके यहां का जिनगृह, शिवतिय का है महल॥मैं०॥ ५॥

ॐ ह्रीं हिमवत्पर्वतस्य श्रीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस नग पे रोहितास्या देवी का सद्म है।
जिसमें जिनेंद्रगृह में जिनराजबिंब हैं॥मैं०॥ ६॥

ॐ ह्रीं हिमवत्पर्वतस्य रोहितास्यादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

है सिंधुदेवी का घर हिमवत्कुलाद्रि पर।
जिन गेह उसमें सुन्दर जजतें हैं सुर असुर॥मैं०॥ ७॥

ॐ ह्रीं हिमवत्पर्वतस्य सिंधुदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

हिमवन गिरि पे देवि सुरा का महल बना।
जिसके जिनायतन में भक्ति का रस घना॥मैं०॥ ८॥

ॐ ह्रीं हिमवत्पर्वतस्य सुरादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

हिमवान अचल पर है, सुर हैमवत सदन।
इसके जिनेश गृह में, रमता सुरों का मन॥मैं०॥ ९॥

ॐ ह्रीं हिमवत्पर्वतस्य हैमवतदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस नग पे वैश्रवण सुर का गृह मनोज्ञ है।
जिसके जिनायतन में, प्रतिमा मनोज्ञ है॥
मैं भाव भक्तिपूर्वक जिनगेह को जजूँ।
संसार भ्रमण कारण दुर्ध्यान से बचूँ॥ १०॥

ॐ ह्रीं हिमवत्पर्वतस्य वैश्रवणदेदभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

पर्वत द्वितीय पर महाहिमवान् सुर भवन।
उसमें जिनेंद्र आलय, हरता सभी का मन॥मैं०॥ ११॥

ॐ ह्रीं महाहिमवत्पर्वतस्य महाहिमवन्देवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

पर्वत महाहिमवान् पर सुर हैमवत भवन।
उसमें जिनेंद्र मंदिर सुर नर करें यजन॥मैं०॥ १२॥

ॐ ह्रीं महाहिमवत्पर्वतस्य हैमवतदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस ही गिरी पे रोहित, सुर का भवन कहा।
उसमें भि जैन मंदिर जो मुक्तिप्रद कहा॥मैं०॥ १३॥

ॐ ह्रीं महाहिमवत्पर्वतस्य रोहितदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस अद्रि पर ही देवी ह्री का भवन बना।
उसमें मनोज्ञ जिनगृह देता है सुख घना॥मैं०॥ १४॥

ॐ ह्रीं महाहिमवत्पर्वतस्य ह्रीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

हरिकान्ता सुरी का घर है इसी नग पर।
उसमें अपूर्व जिनगृह जो बना सौख्य कर॥मैं०॥ १५॥

ॐ ह्रीं महाहिमवत्पर्वतस्य हरिकांतादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

हरिवर्षदेव का घर इस अद्रि पर दिखे।
उसमें है जैनमंदिर जो मणिमयी दिपे॥मैं०॥ १६॥

ॐ ह्रीं महाहिमवत्पर्वतस्य हरिवर्षदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

वैडूर्यदेव का घर इस दूसरे नग पर।
मन वच से, वंदना है जिनगृह जो वहाँ पर॥मैं०॥ १७॥

ॐ ह्रीं महाहिमवत्पर्वतस्य वैडूर्यदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

है तीसरा पर्वत जो निषध नाम को धरे।
उसपर निषध सुर का भवन जिनगृह अतुल धरे॥मैं०॥१८॥

ॐ ह्रीं निषधपर्वतस्य निषधदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस अद्रि पे हरिवर्षदेव का भवन कहे।
उसमें है श्रीजिनालय जो सर्व दुख दहे॥मैं० ॥ १९ ॥
ॐ ह्रीं निषधपर्वतस्य हरिवर्षदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

निषधाद्रि पे पूरब विदेह देव का भवन।
उसमें जिनायतन है संपत्ति का सदन॥मैं० ॥ २० ॥
ॐ ह्रीं निषधपर्वतस्य पूर्वविदेहदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

इस ही निषधगिरी पर है हरित देव घर।
उसमें अनाांद जिनगृह वंदन करें सुर नर॥मैं० ॥ २१ ॥
ॐ ह्रीं निषधपर्वतस्य हरितदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

धृतिदेवि का महल भी इस अद्रि पर दिखे।
जिसमें जिनेंद्र मन्दिर रत्नों से जगमगे॥मैं० ॥ २२ ॥
ॐ ह्रीं निषधपर्वतस्य धृतिदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

सीतोदा सुरी का गृह , इसही अचल पे है।
उसमें अनादि जिनगृह पूजत ही भव दहे॥मैं० ॥ २३ ॥
ॐ ह्रीं निषधपर्वतस्य सीतोदादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

है अपरदेव का गृह इस नग पे शाश्वता।
जिसमें जिनेंद्र आलय भक्तों से भासता॥मैं० ॥ २४ ॥
ॐ ह्रीं निषधपर्वतस्य अपरदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

है रुचक देव का घर इस नग के शिखर पर।
इसमें जिनेंद्र मंदिर वंदूँ मैं रुची धर॥मैं० ॥ २५ ॥
ॐ ह्रीं निषधपर्वतस्य रुचकदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

गीताछंद

पर्वत कहा है नील नामक , नीलमणि सम शोभता।
उसके शिखर पर नील नामा , देव का गृह शोभता॥
इसमें जिनालय शाश्वता , वंदन करत भव दुख हरे।
हम पूजते यह अर्घ लेकर , सर्व संकट परिहरे॥ २६ ॥
ॐ ह्रीं नीलपर्वतस्य नीलदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

इस उपरि पूर्व विदेह नामक , देव का सुन्दर भवन।
देवांगना परिवार सह , रहता यहाँ सुख से सुमन॥इसमें० ॥ २७ ॥
ॐ ह्रीं नीलपर्वतस्य पूर्वविदेहदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

इस नीलगिरि पर देवी सीता , का अनुपम सद्म है।
परिवार देवी भी यहीं पर , रहें इनके संग हैं॥
इसमें जिनालय शाश्वता , वंदन करत भव दुख हरे।
हम पूजते यह अर्घ लेकर , सर्व संकट परिहरे॥ २८॥
ॐ ह्रीं नीलपर्वतस्य सीतादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं ....।
इस नीलगिरि पर कीर्ति देवी का भवन विख्यात है।
वह स्वर्णमय रत्नों जड़ा , दिव संपदा का वास है॥इसमें० ॥ २९॥
ॐ ह्रीं नीलपर्वतस्य कीर्तिदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं ....।
इस नीलगिरि पर देवि , नरकांता रहे निज धाम में।
उसमें अनेकों देवियाँ , रहती सदा उस साथ में॥इसमें० ॥ ३०॥
ॐ ह्रीं नीलपर्वतस्य नरकांतादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं ....।
इस अचल पर है देव अपर विदेह का सुन्दर भवन।
मरकतमणी आदिक दिपें , इस देवगृह में सघन धन॥इसमें० ॥ ३१॥
ॐ ह्रीं नीलपर्वतस्य अपरविदेहदेवभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं ....।
इस अद्रि पर है देव रम्यक, का महल रम्यक अती।
जो रत्नमणिमय पंचवर्णी , शोभता दिन-रात भी॥इसमें० ॥ ३२॥
ॐ ह्रीं नीलपर्वतस्य रम्यकदेवभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं ....।
इस गिरि शिखर पर देव अपदर्शन निजालय में रहे।
अणिमादि ऋद्धि विक्रिया से, दिविज के सुख को लहे॥इसमें० ॥ ३३॥
ॐ ह्रीं नीलपर्वतस्य अपदर्शनदेवभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं ....।
चौथा अचल रुक्मि कहाता , रजत सम सुन्दर अहा।
इसके शिखर पर रुक्मी नामा , देव का आलय कहा॥इसमें० ॥ ३४॥
ॐ ह्रीं रुक्मिपर्वतस्य रुक्मिदेवभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं ....।
इस रुक्मिगिरि पर देवरम्यक का भवन मन मोहता।
यह बहुखनों से युक्त मणियों से सतत ही शोभता॥इसमें० ॥ ३५॥
ॐ ह्रीं रुक्मिपर्वतस्य रम्यकदेवभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं ....।
इस अचल पर है देवि नारी का भवन बहु रम्य है।
उसमें कनकमणिमय छटा जिसका न आदि अंत है॥इसमें० ॥ ३६॥
ॐ ह्रीं रुक्मिपर्वतस्य नारीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं ....।

इस रुक्मिगिरि पर बुद्धिदेवी का भवन बहु शोभता।
जिन देवियों के साथ में, यह दिव्य गृह मन मोहता ॥इसमें० ॥ ३७ ॥
ॐ ह्रीं रुक्मिपर्वतस्य बुद्धिदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।
इस अचल पर है रुप्यकूलादेवि का अनुपम महल।
इस रजतमय गृह की छटा दिखती सदा अनुपम अखिल ॥इसमें० ॥३८ ॥
ॐ ह्रीं रुक्मिपर्वतस्य रूप्यकूलादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।
हैरण्यवत सुर का सदन इस अचल पर अतिशय दिपे।
जो स्वर्णमय सतखन अपूरब, देव परिकर से दिपे ॥इसमें० ॥ ३९ ॥
ॐ ह्रीं रुक्मिपर्वतस्य हैरण्यवतदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।
इस नीलगिरि पर देव मणि, कांचन भवन अति शोभता।
यह रजत कांचन मणि रतन से, बहुखना मन मोहता ॥इसमें० ॥ ४० ॥
ॐ ह्रीं रुक्मिपर्वतस्य मणिकांचनदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।
छट्ठा कुलाचल शिखरि नामा, स्वर्णमय विख्यात है।
इसके शिखर पर देव शिखरी, का भवन अति ख्यात है ॥इसमें० ॥४१ ॥
ॐ ह्रीं शिखरिपर्वतस्य शिखरिदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।
इस अद्रि पर हैरण्यवत, सुर का भवन स्वर्णिम बना।
परिवार सह वह देव उसमें, वास करता सोहना ॥इसमें० ॥ ४२ ॥
ॐ ह्रीं शिखरिपर्वतस्य हैरण्यवतदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।
इस अद्रि पर रसदेवि का, गृह सर्वजन का मन हरे।
इसमें रहें बहु देवियां, रसदेवि की सेवा करें ॥इसमें० ॥ ४३ ॥
ॐ ह्रीं शिखरिपर्वतस्य रसदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।
इस अचल पर है देवि रक्ता, नाम की निज सद्म में।
उसमें बनी बहुरंग मणिमय, छवि सुरों का मन रमें ॥इसमें० ॥ ४४ ॥
ॐ ह्रीं शिखरिपर्वतस्य रक्तादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।
शिखरी कुलाचल के शिखर पर, देवि लक्ष्मी का भवन।
इस देवि ने बहुपुण्य से, पाया है लक्ष्मी का सदन ॥इसमें० ॥ ४५ ॥
ॐ ह्रीं शिखरिपर्वतस्य लक्ष्मीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।
शिखरी गिरी पर स्वर्णकूला देवी का गृह स्वर्णमय।
अणिमादि बहुऋद्धि सहित इन देवि का सुख स्वर्णमय ॥इसमें० ॥४६ ॥
ॐ ह्रीं शिखरिपर्वतस्य स्वर्णकूलादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

इस अद्रि पर है रक्तवती देवी बसे निज सद्म में।
बहुपुण्य से यह देव की पर्याय मिलती जगत में॥
इसमें जिनालय शाश्वता, वंदन करत भव दुख हरे।
हम पूजते यह अर्घ लेकर, सर्व संकट परिहरे॥ ४७॥
ॐ ह्रीं शिखरिपर्वतस्य रक्तावतीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं....।
है गंधवति देवी भवन, इस शिखरि नामा अद्रि पर।
ये देवियां जिनभक्ति करके, पुण्य संचय में कुशल॥इसमें०॥ ४८॥
ॐ ह्रीं शिखरिपर्वतस्य गंधवतीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं....।
इस कुलगिरि पर देव ऐरावत, रहे निज धाम में।
जिनराज भक्ति में निरत, करता सतत शुभकाम ये॥इसमें०॥ ४९॥
ॐ ह्रीं शिखरिपर्वतस्य ऐरावतदेवभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं....।
इस अद्रि पर है देवमणि कांचन भवन सुन्दर कहा।
उसमें रहे नित देव यह अनुपम विभव से खुश महा॥इसमें०॥ ५०॥
ॐ ह्रीं शिखरिपर्वतस्य मणिकांचनदेवभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं....।

माल्यवंत गजदंत देव भवन अर्घ

नरेंद्रछंद

मेरु के ईशान दिशा में, माल्यवन्त गजदन्त कहा।
उस पर नव कूटों में दूजा, माल्यवन्त यह नाम लहा॥
इस पर देव बसे इस नामा, उसका गृह चैत्यालय है।
मैं इत अर्घ चढ़ाकर पूजूँ, वह समकित का आलय है॥ ५१॥
ॐ ह्रीं ईशानदिशि गजदंतपर्वतस्य माल्यवन्तदेवभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं...।
इस पर्वत पर उत्तर कुरु, नामक है कूट तीसरा जो।
उसमें देव रहे उत्तर बहु, वैभव परिकर युत वो॥
इसके गृह में जिनमंदिर वह जिनप्रतिमा का आलय है॥मैं इत०॥५२॥
ॐ ह्रीं ईशानदिशि गजदंतपर्वतस्य उत्तरकुरुदेवभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं..।
कच्छकूट पर देव भवन है, कच्छदेव उसमें रहता।
भक्ति भाव से अकृत्रिम जिन, प्रतिमा की पूजन करता॥
इसके गृह में०॥ ५३॥
ॐ ह्रीं ईशानदिशि गजदंतपर्वतस्य कच्छदेवभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं....।

सागर कूट बना इस नग पर, इस पर भवन मनोहर है।
भोगवती देवी का गृह यह, दिव्य भोग से सुखकर है॥
इनके गृह में० ॥ ५४ ॥

ॐ ह्रीं ईशानदिशि गजदंतपर्वतस्य भोगवतीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं . . . ।

इस नग पर है रजत कूट इक, इस पर भी गृह रम्य बना।
भोगमालिनी देवी रहती, नित अनुभवती सौख्य घना॥
इसके गृह में० ॥ ५५ ॥

ॐ ह्रीं ईशानदिशि गजदंतपर्वतस्य भोगमालिनीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं . . . . ।

इस पर्वत पर पूर्णभद्र नामक है कूट महारमणीय।
उस पर देव भवन में ये ही पूर्णभद्र रहता कमनीय॥
इसके गृह में० ॥ ५६ ॥

ॐ ह्रीं ईशानदिशि गजदंतपर्वतस्य पूर्णभद्रदेवभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं . . . . ।

सीताकूट इसी पर्वत पर, उसमें सीता देव रहे।
पुण्य योग से देवगती में, दिव्य सुखों को भोग रहे॥
इसके गृह में० ॥ ५७ ॥

ॐ ह्रीं ईशानदिशि गजदंतपर्वतस्य सीतादेवभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं . . . . ।

हरिसह कूट बना है नवमां, इस पर भवन बना सुन्दर।
हरिसह देव रहे इस गृह में, जिनवर भक्ती में तत्पर॥
इसके गृह में० ॥ ५८ ॥

ॐ ह्रीं ईशानदिशि गजदंतपर्वतस्य हरिसहदेवभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं . . . . ।

सौमनस गजदंत देव भवन अर्घ

मेरु के आग्नेय कोण में, सौमनस्य गजदन्त कहा।
इस पर सौमनस्य सुर का ही देव भवन अतिरम्य कहा॥
इसके गृह में० ॥ ५९ ॥

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि गजदंतपर्वतस्य सौमनस्यदेवभवनस्थितजिनालयेभ्य: अर्घ्यं . . . . ।

देवकुरु नामक सुर का गृह, इस पर्वत पर शोभ रहा।
इसमें देव बसे नित सुन्दर, दिव्य सुखों को भोग रहा॥

इसके गृह में जिनमंदिर वह जिनप्रतिमा का आलय है।
मैं इत अर्घ चढ़ाकर पूजूँ, वह समकित का आलय है॥ ६०॥
ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि गजदंतपर्वतस्य देवकुरुदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं . . .।
मंगल कूट इसी नग पर है, उस पर देव भवन शोभे।
मंगल नाम देव का गृह यह, बहु वैभव से युत शोभे॥
इसके गृह में०॥ ६१॥
ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि गजदंतपर्वतस्य मंगलदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं . . . .।
सौमनस्य गजदंत मनोहर, विमल कूट इसके ऊपर।
मित्रा देवी का गृह इस पर, मणि रत्नों से अति सुन्दर॥
इसके गृह में०॥ ६२॥
ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि गजदंतपर्वतस्य मित्रादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं . . . .।
इसी अद्रि पर कांचन नामा, कूट बना है सुन्दरतम।
इस पर रहे सुमित्रा देवी, उसका भवन बना उत्तम॥
इसके गृह में०॥ ६३॥
ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि गजदंतपर्वतस्य सुमित्रादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं . . .।
कूट विशिष्ट इसी नग पर है, जिस पर स्वर्णिम भवन बना।
देव विशिष्ट नाम का धारी, जिन भक्ति में सुदृढ़ मना॥
इसके गृह में०॥ ६४॥
ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि गजदंतपर्वतस्य विशिष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं . . .।

विद्युत्प्रभ गजदंत देवभवन अर्घ्य

मेरू के नैऋत में विद्युत्प्रभ गजदन्त तप्त स्वर्णिम।
विद्युत्प्रभ सुर रहता इस पर, उसका महल बना स्वर्णिम॥
इसके गृह में०॥ ६५॥
ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि गजदंतपर्वतस्य विद्युत्प्रभदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं . . .।
इस नग पर है कूट देवकुरु उस पर देव भवन सुन्दर।
देव देवकुरु नामा इसमें, देव संपदा से शुभतर॥
इसके गृह में०॥ ६६॥
ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि गजदंतपर्वतस्य देवकुरुदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं . . . .।

इस गजदन्त अद्रि पर सुन्दर, पद्मकूट है शिखर समान।
इस पर पद्मदेव का घर है, रत्नजड़ित सुन्दर सुखदान॥
इसके गृह में० ॥ ६७ ॥

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि गजदंतपर्वतस्य पद्मदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इसी अचल पर कूट कहाता, स्वस्तिक नामा शुभकारी।
इस पर भवन वारिषेणा, देवी का बना सौख्यकारी॥
इसके गृह में० ॥ ६८ ॥

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि गजदंतपर्वतस्य वारिषेणादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं..।

तपन कूट भी इस पर्वत पर, उस पर अचला देवी है।
कनक मणिमय महल इसी का, इसमें सुख से रहती है॥
इसके गृह में० ॥ ६९ ॥

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि गजदंतपर्वतस्य अचलादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं...।

कूट सितोज्ज्वल इस ही नग पर, शिखर समान दिखे सुन्दर।
देव सितोज्ज्वल का गृह इस पर, सुर वैभव से अति मनहर॥
इसके गृह में० ॥ ७० ॥

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि गजदंतपर्वतस्य सितोज्ज्वलदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस गिरि पर सीतोद कूट पर, दैव भवन सुरमन हारी।
उसमें सुर सीतोद नाम का, दिव्य सुखों का अधिकारी॥
इसके गृह में० ॥ ७१ ॥

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि गजदंतपर्वतस्य सीतोददेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस पर्वत पर हरिसह नामा, कूट बना शाश्वत सुन्दर।
उस पर हरि सह देव भवन में, देव जिनेश्वर का किंकर॥
इसके गृह में० ॥ ७२ ॥

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि गजदंतपर्वतस्य हरिसहदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

गंधमादन गजदंत देवभवन अर्घ्य

मेरू के वायव्य कोण में, गन्धमादनाचल सोहे।
देव गंधमादन का गृह भी, इस पर्वत पर मन मोहे॥

इसके गृह में जिनमंदिर वह जिनप्रतिमा का आलय है।
मैं इत अर्घ चढ़ाकर पूजूँ, जह समकित का आलय है॥ ७३॥
ॐ ह्रीं वायव्यदिशि गजदंतपर्वतस्य गंधमादनदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं . . .।

कूट देवकुरु भी इस नग पर, जिस पर रहे देवकुरु देव।
विक्रिय बल से मेरू पर जा, वंदन करे भक्तिवश एव॥
इसके गृह में० ॥ ७४॥
ॐ ह्रीं वायव्यदिशि गजदंतपर्वतस्य देवकुरुदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं . . .।

गंधमालिनी कूट इसी पर, उस पर भवन बना सुन्दर।
देव गंधमाली उसमें है, दिव्य सौख्य भोगे सुन्दर॥
इसके गृह में० ॥ ७५॥
ॐ ह्रीं वायव्यदिशि गजदंतपर्वतस्य गंधमालीदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं . . .।

इस पर्वत पर कूट स्फटिक, नामक शिखर समान कहा।
उसमें देवि सुभोगा रहती, उसका वैभव दिव्य कहा॥
इसके गृह में० ॥ ७६॥
ॐ ह्रीं वायव्यदिशि गजदंतपर्वतस्य सुभोगादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं . . .।

लोहित कूट बना इस नग पर, उस पर देवी का गृह है।
भोगमालिनी कहते इसको, इसका वैभव सुन्दर है॥
इसके गृह में० ॥ ७७॥
ॐ ह्रीं वायव्यदिशि गजदंतपर्वतस्य भोगमालिनीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं. . . .।

इस गिरि पर आनन्द कूट पर, आनन्द देव रहे निश दिन।
भक्ति भाव से आनंदित हो, जिनवन्दन करता प्रतिदिन॥
इसके गृह में० ॥ ७८॥
ॐ ह्रीं वायव्यदिशि गजदंतपर्वतस्य आनंददेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं . . . .।

पूर्व विदेह वक्षार देवभवन के अर्घ्य

दोहा

चित्रकूट वक्षार पर, चित्रदेव का गेह।
उसके जिनगृह को जजूँ, मन वच तन धर नेह॥
ॐ ह्रीं चित्रकूटवक्षारपर्वतस्य चित्रदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं . . . .।

चित्रकूट वक्षार पर , कच्छदेव का धाम।
इसके जिनगृह को जजूँ , मिले निजातम धाम॥ ७९ ॥
ॐ ह्रीं चित्रकूटवक्षारपर्वतस्य कच्छदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

इस नग पर देवी भवन , नाम सुकच्छा जान।
उसके गृह में जिन भवन , अर्घ्य चढ़ाऊं आन॥ ८० ॥
ॐ ह्रीं चित्रकूटवक्षारपर्वतस्य सुकच्छादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

नलिन कूट वक्षार पर , नलिन देव का वास।
उसके जिनगृह को यहां , अर्घ चढ़ाऊं आज॥ ८१ ॥
ॐ ह्रीं नलिनकूटवक्षारपर्वतस्य नलिनदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

नलिन कूट वक्षार पर , महाकच्छ सुर गेह।
उसके जिन गृह को जजूँ मिल शीघ्र निज गेह॥ ८२ ॥
ॐ ह्रीं नलिनकूटवक्षारपर्वतस्य महाकच्छदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

इस नग पर देवी भवन , कच्छावति का सौम्य।
उसके जिन गृह को जजूँ मिले निजातम सौख्य॥ ८३ ॥
ॐ ह्रीं नलिनकूटवक्षारपर्वतस्य कच्छावतीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

पद्मकूट वक्षार पर , पद्म देव आवास।
उसके जिनगृह जजूँ , पूरी होवे आश॥ ८४॥
ॐ ह्रीं पद्मकूटवक्षारपर्वतस्य पद्मदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

पद्मकूट वक्षार पर रहता सुर आवर्त।
उसके जिनगृह को जजूँ , मिटे जगत् परिवर्त॥ ८५ ॥
ॐ ह्रीं पद्मकूटवक्षारपर्वतस्य आवर्तदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

इस नग पर रहती सुरी , लांगलावर्त नाम।
उसके जिनगृह को जजूँ , मिले पूर्ण सुख धाम॥ ८६ ॥
ॐ ह्रीं पद्मकूटवक्षारपर्वतस्य लांगलावर्तदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

एकशैल वक्षार पर , एकशैल सुर सद्म।
इसके जिनगृह को जजूँ , प्राप्त करूँ शिव शर्म॥ ८७ ॥
ॐ ह्रीं एकशैलवक्षारपर्वतस्य एकशैलदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

एकशैल वक्षार पर , पुष्कल देव वसन्त।
उसके जिनगृह को जजूँ , हो दुःखों का अन्त॥ ८८ ॥
ॐ ह्रीं एकशैलवक्षारपर्वतस्य पुष्कलदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

इस नग पर पुष्कलावती, देवी का घर रम्य।
उसके जिनगृह को जजूँ, मन वच काय प्रणम्य॥ ८९॥
ॐ ह्रीं एकशैलवक्षारपर्वतस्य पुष्कलावतीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस वक्षार त्रिकूट पर, देव त्रिकूट निवास।
उसके जिनगृह को जजूँ, पूरे मन की आश॥ ९०॥
ॐ ह्रीं त्रिकूटवक्षारपर्वतस्य त्रिकूटदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस त्रिकूट गिरि पर बना, वत्सदेव का गेह।
उसका जिनमंदिर जजूँ, मन में धर बहु नेह॥ ९१॥
ॐ ह्रीं त्रिकूटवक्षारपर्वतस्य वत्सदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

भवन सुवत्सा देवि का, इस नग पर विख्यात।
उसके जिनगृह को जजूँ, हो निजगुण मम प्राप्त॥ ९२॥
ॐ ह्रीं त्रिकूटवक्षारपर्वतस्य सुवत्सादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

अद्रि वैश्रवण पर रहे, इसी नाम का देव।
उसके जिनगृह को जजूँ, सब दुख का हो छेव॥ ९३॥
ॐ ह्रीं वैश्रवणवक्षारपर्वतस्य वैश्रवणदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

महावत्स सुर का भवन, इस पर्वत पर जान।
उसका जिनमंदिर जजूँ, मिले भेद विज्ञान॥ ९४॥
ॐ ह्रीं वैश्रवणवक्षारपर्वतस्य महावत्सदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

वत्सावति देवी भवन, इस गिरि पर विलसंत।
उसके जिनगृह को जजूँ, हो मम सौख्य अनंत॥ ९५॥
ॐ ह्रीं वैश्रवणवक्षारपर्वतस्य वत्सावतीदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

है अंजन वक्षार पर, अंजनदेव निवास।
उसके गृह में जिन भवन, जजत लहूं निज वास॥ ९६॥
ॐ ह्रीं अंजनवक्षारपर्वतस्य अंजनदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस अंजन वक्षार पर, रम्य देव का धाम।
उसके जिनगृह को जजूँ, लहूं स्वात्म विश्राम॥ ९७॥
ॐ ह्रीं अंजनवक्षारपर्वतस्य रम्यदेव भवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस गिरि पर देवी रहे, नाम सुरम्या सिद्ध।
उसके जिनगृह को जजूँ, होऊं ज्ञान समृद्ध॥ ९८॥
ॐ ह्रीं अंजनवक्षारपर्वतस्य सुरम्यादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

आत्मांजन वक्षार पर, आत्मांजन सुर गेह।
उसके जिनगृह को जजूँ, हो जाऊं गत देह॥ ९९॥
ॐ ह्रीं अंजनवक्षारपर्वतस्य आत्मांजनदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

आत्मांजन वक्षार पर, रहे देव रमणीय।
इसके जिनगृह को जजूँ ,मिले सौख्य कमनीय॥ १००॥
ॐ ह्रीं आत्मांजनवक्षारपर्वतस्य रमणीयदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

देवी मंगलावति रहे, इस ही गिरि पर नित्य।
इसके जिनगृह को जजूँ, शीघ्र मिले पद नित्य॥ १०१॥
ॐ ह्रीं आत्मांजनवक्षारपर्वतस्य मंगलावतीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं...।

पश्चिम विदेह वक्षार देव भवन अर्घ्य

श्रद्धावान पहाड़ पर, श्रद्धावान मकान।
उसके जिनगृह को जजूँ, मिले स्वात्म विज्ञान॥ १०२॥
ॐ ह्रीं श्रद्धावानवक्षारपर्वतस्य श्रद्धावानदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

श्रद्धावान् गिरी उपरि, पद्म देव का वास।
उसके जिनगृह को जजूँ, होवे ज्ञान प्रकाश॥ १०३॥
ॐ ह्रीं श्रद्धावानवक्षारपर्वतस्य पद्मदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

देवि सुपद्मा का भवन, इस नग पर विख्यात।
उसके जिनगृह को जजूँ, नमूँ नमाकर माथ॥ १०४॥
ॐ ह्रीं श्रद्धावानवक्षारपर्वतस्य सुपद्मादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

विजटावान् पहाड़ पर, विजटावान् निकेत।
उसके जिनगृह को जजूँ, मिले भवोदधि सेतु॥ १०५॥
ॐ ह्रीं विजटावानवक्षारपर्वतस्य विजटावानदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं...।

महापद्म सुर का भवन, इस पर्वत पर जान।
उसके जिनगृह को जजूँ, मिले निजातम ज्ञान॥ १०६॥
ॐ ह्रीं विजटावानवक्षारपर्वतस्य महापद्मदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

पद्मावति देवी भवन, इस गिरि पर विलसंत।
उसके जिनगृह को जजूँ, बनूँ मुक्ति का कंत॥ १०७॥
ॐ ह्रीं विजटावानवक्षारपर्वतस्य पद्मावतीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....

आशीविष वक्षार पर, आशीविष सुर गेह।
उसके जिनगृह को जजूँ, करूँ धर्म से नेह॥ १०८॥
ॐ ह्रीं आशीविषवक्षारपर्वतस्य आशीविषदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

आशीविष वक्षार पर, शंख देव का धाम।
उसके जिनगृह को जजूँ, मिले मुक्ति का धाम॥ १०९॥
ॐ ह्रीं आशीविषवक्षारपर्वतस्य शंखदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

आशीविष वक्षार पर, नलिनी देवी सद्म।
इसके जिनगृह को जजूँ, वंदूँ जिनपद पद्म॥ ११०॥
ॐ ह्रीं आशीविषवक्षारपर्वतस्य नलिनीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

अद्रि सुखावह पर बसे, देव सुखावह नित्य।
उसके जिनगृह को जजूँ, होवे सब गुण नित्य॥ १११॥
ॐ ह्रीं सुखावहवक्षारपर्वतस्य सुखावहदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

अद्रि सुखावह पर रहे, कुमुद देव जिन भक्त।
उसके जिनगृह को जजूँ, मम पथ करो प्रशस्त॥ ११२॥
ॐ ह्रीं सुखावहवक्षारपर्वतस्य कुमुदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

अद्रि सुखावह पर रहे, सरिता देवी मान्य।
उसके जिनगृह को जजूँ, हों मुझ गुण बहु मान्य॥ ११३॥
ॐ ह्रीं सुखावहवक्षारपर्वतस्य सरितादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

चन्द्रमाल वक्षार पर, चन्द्रमाल सुर वास।
उसके जिनगृह को जजूँ, होवे स्वात्म विकास॥ ११४॥
ॐ ह्रीं चन्द्रमालवक्षारपर्वतस्य चन्द्रमालदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

चन्द्रमाल वक्षार पर, वप्रदेव का गेह।
उसके जिनगृह को जजूँ, मिले न फिर फिर देह॥ ११५॥
ॐ ह्रीं चन्द्रमालवक्षारपर्वतस्य वप्रदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

देवि सुवप्रा का भवन, इस गिरि पर अतिरम्य।
उसके जिनगृह को जजूँ, बार बार शिर नम्य॥ ११६॥
ॐ ह्रीं चन्द्रमालवक्षारपर्वतस्य सुवप्रादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

सूर्यमाल वक्षार पर, सूर्यमाल का धाम।
उसके जिनगृह को जजूँ, मिले सौख्य निष्काम॥ ११७॥
ॐ ह्रीं सूर्यमालवक्षारपर्वतस्य सूर्यमालदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

सूर्यमाल वक्षार पर, महावप्र सुर गेह।
उसके जिनगृह को जजूँ, मन वच तन धर नेह॥ ११८॥
ॐ ह्रीं सूर्यमालवक्षारपर्वतस्य महावप्रदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

वप्रावति देवी रहें, सूर्यमाल गिरि शीश।
उसके जिनगृह को जजूँ, नित्य नमाऊं शीश॥ ११९॥
ॐ ह्रीं सूर्यमालवक्षारपर्वतस्य वप्रावतीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

नागमाल वक्षार पर , नागमाल सुर धाम।
उसके जिनगृह को जजूँ, मन वच काय प्रणाम॥ १२०॥
ॐ ह्रीं सूर्यमालवक्षारपर्वतस्य नागमालदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

नागमाल गिरि पर रहे, गन्धदेव जिन भक्त।
उसके जिनगृह को जजूँ, निज पर करूँ विभक्त॥ १२१॥
ॐ ह्रीं नागमालवक्षारपर्वतस्य गंधदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

देवि सुगन्धा का भवन, इस ही गिरि पर मान्य।
उसके जिनगृह को जजूँ, हो मम यश जग मान्य॥ १२२॥
ॐ ह्रीं नागमालवक्षारपर्वतस्य सुगंधादेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

देवमाल वक्षार पर, देवमाल सुर सद्म।
उसके जिनगृह को जजूँ, भजूँ नाथ पद पद्म॥ १२३॥
ॐ ह्रीं देवमालवक्षारपर्वतस्य देवमालदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

देवमाल वक्षार पर, गंधिल देव निवास।
उसके जिनगृह को जजूँ, हों मम कर्म विनाश॥ १२४॥
ॐ ह्रीं देवमालवक्षारपर्वतस्य गंधिलदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं...।

गन्ध मालिनी देवि का ,इस गिरि पर नित वास।
उसके जिनगृह को जजूँ, यश सौरभ विकसात॥ १२५॥
ॐ ह्रीं देवमालवक्षारपर्वतस्य गंधमालिनीदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....

विजयार्ध के देव भवन जिनालय के अर्घ्य

शंभुछंद

इस जंबूद्वीप में दक्षिण दिश, है भरत क्षेत्र शाश्वत सुन्दर।
उसके मधि विजयारध पर्वत, यह रजतमयी त्रयकटनी धर॥

इस पर है भरतदेव का गृह, उसमें जिनगृह शाश्वत माना।
हम पूजें अर्घ्य चढ़ाकर के, जिससे पावें सुख मनमाना॥ १२६॥
ॐ ह्रीं भरतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य भरतदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।
इस नग पर नृत्यमाल सुर का, गृह सुन्दर स्वर्णमयी शोभे।
यह देव पूर्व में किये हुये, निज पुण्य उदय का फल भोगे॥
इसके गृह में जिन चैत्यालय, महिमाशाली शाश्वत माना।
हम पूजें०॥ १२७॥
ॐ ह्रीं भरतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य नृत्यमालदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं...।
मणिभद्र देव का भवन यहां, उसमें यह देव निवास करे।
जिनवर भक्ती कर पुण्य लिया, उससे ही अनुपम सौख्य भरे॥
इसके गृह में जिन चैत्यालय, महिमाशाली शाश्वत माना।
हम पूजें०॥ १२८।
ॐ ह्रीं भरतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य मणिभद्रदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।
विजयार्ध देव का भवन इसी, नग पर सुन्दर शाश्वत शोभे।
यह देव स्वतंत्र रहे इस पर, बस चक्रवर्ती को नत होवे॥
इसके गृह में०॥ १२९॥
ॐ ह्रीं भरतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य विजयार्धदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।
इस गिरि पर पूर्णभद्र सुर का, गृह अकृत्रिम बहुरत्नमयी।
यह देव रहे इस पर फिर भी, सुखपूर्वक विचरें जहां कहीं॥
इसके गृह में०॥ १३०॥
ॐ ह्रीं भरतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य पूर्णभद्रदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।
इस नग में गुफा तिमिस्रा है, उसके ऊपर भी कूट बना।
उस पर कृतमाल देव का गृह, जो चक्रवर्ती का भक्त घना॥
इसके गृह में०॥ १३१॥
ॐ ह्रीं भरतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य कृतमालदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।
इस नग पर अष्टमकूट कहा, उस पर है भरत देव रहता।
निज विक्रिय शक्ती से बहु विध के, रूप धरे क्रीड़ा करता॥
इसके गृह में०॥ १३२॥
ॐ ह्रीं भरतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य भरतदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस पर्वत का जो अन्त्य शिखर, उस पर वैश्रवण देव रहता।
वह अनन्यवश होकर के भी, षट् खंडजयी के वश रहता॥
इसके गृह मे० ॥ १३३ ॥

ॐ ह्रीं भरतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य वैश्रवणदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

शंभुछंद

इस जंबूद्वीप के उत्तर में, ऐरावत क्षेत्र भरतसम है।
उसके मधि विजयारध पर्वत, त्रयकटनी युक्त रजतमय है॥
उस पर ऐरावत देव भवन, उसमें जिनगृह शाश्वत माना।
हम पूजें अर्घ चढ़ाकर के, जिससे पावें सुख मनमाना॥ १३४॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य ऐरावतदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

विजयार्ध गिरी में गुफातिमिस्रा, के ऊपर इक शिखर बना।
इस पर कृतमाल देव रहता, वह चक्रवर्ती का भक्त घना॥
इसके गृह में जिन चैत्यालय, महिमाशाली शाश्वत माना।
हम पूजें अर्घ चढ़ाकर के, जिससे पावें सुख मनमाना॥ १३५॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य कृतमालदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं...।

इस गिरी पर है मणिभद्र देव का, भवन कनकमय रम्य कहा।
यह देव निवास करे इसमें, विचरण करता भी यहां वहां॥
इसके गृह में० ॥१३६॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य मणिभद्रदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं...।

इस गिरि पर है विजयार्ध देव का, महल अनेक रतन निर्मित।
यह देव चक्रवर्ती के वश होकर, भी पुण्य करे संचित॥
इसके गृह में० ॥१३७॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य विजयार्धदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं..।

इस नग पर पूर्णभद्र सुर का, अति सुन्दर भवन बना शाश्वत।
यह देव निजी परिवार सहित, उसमें निवास करता संतत॥
इसके गृह में० ॥१३८॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य पूर्णभद्रदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस गिरि में खण्डप्रपात गुफा, उसके ऊपर में एक कूट।
उस पर सुर नृत्यमाल का गृह, जो दिव्य रत्न से अनुस्यूत॥

इसके गृह में जिन चैत्यालय, महिमाशाली शाश्वत माना।
हम पूजें अर्घ चढ़ाकर के, जिससे पावें सुख मनमाना॥ १३९॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य नृत्यमालदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस गिरि पर अष्टम कूट बना, उसमें ऐरावत देव रहे।
यह अष्ट रिद्धि से सुख भोगे, जिन भक्ती में तल्लीन रहे॥
इसके गृह में०॥ १४०॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य ऐरावतदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस गिरि के अन्तिम कूट उपरि, वैश्रवण देव का गृह उत्तम।
यह देव विक्रिया कर विमान से, घूमें सुख भोगे अनुपम॥
इसके गृह में०॥ १४१॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्रविजयार्धपर्वतस्य वैश्रवणदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

बत्तीस विदेह के विजयार्ध देव भवन के अर्घ

रोलाछंद

कच्छा देश विदेह, उस मधि विजयारध है।
आठ शिखर पर आठ, देव भवन राजत हैं॥
प्रतिगृह में जिन गेह, मन वच तन से वंदूँ।
रिद्धि सिद्धि प्रद येह, पूजत ही दुख खंडूँ॥ १४२॥

ॐ ह्रीं कच्छादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

कहा सुकच्छा देश, उसके मधि रजताचल।
आठ कूट पर आठ, देव भवन सुख आकर॥प्रतिगृह०॥ १४३॥

ॐ ह्रीं सुकच्छादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

महाकच्छ है देश, उस मधि रजत गिरी है।
आठ शिखर पर आठ, सुरगृह सौख्य भरे हैं॥प्रतिगृह०॥ १४४॥

ॐ ह्रीं महाकच्छदेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

कच्छावति शुभ देश, उसके मध्य रजत नग।
आठ शिखर है आठ, देव भवन हैं अकृत॥प्रतिगृह०॥ १४५॥

ॐ ह्रीं कच्छावतीदेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

आवर्ता है देश, उसके बीच रजत गिरि।
आठ शिखर हैं आठ, देव भवन उन सब परि॥प्रतिगृह०॥ १४६॥
ॐ ह्रीं आवर्तदेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः
अर्घ्यं....।

लांगलवर्ता देश, उसके मधि विजयारध।
आठ कूट पर आठ, देव भवन सुखकारक॥प्रतिगृह०॥१४७॥
ॐ ह्रीं लांगलावर्तदेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः
अर्घ्यं....।

देश पुष्कला मध्य, रजताचल चाँदी का।
आठ कूट पर आठ, देव भवन सुरगण का॥प्रतिगृह०॥ १४८॥
ॐ ह्रीं पुष्कलादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः
अर्घ्यं....।

देश पुष्कलावति के, ठीक बीच रजताचल।
सुरगृह उस पर आठ, देव रहें अतिशय बल॥प्रतिगृह०॥ १४९॥
ॐ ह्रीं पुष्कलावतीदेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः
अर्घ्यं....।

वत्सादेश विदेह, उसमें रूप्याचल है।
आठ देव के नित्य, वहां पे देव महल हैं॥प्रतिगृह०॥ १५०॥
ॐ ह्रीं वत्सादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः
अर्घ्यं....।

देश सुवत्सा मध्य, विजयारध अति शोभे।
तीजी कटनी उपरि, सुरगृह आठ सुशोभे॥प्रतिगृह०॥ १५१॥
ॐ ह्रीं सुवत्सादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः
अर्घ्यं....।

महावत्सा शुभ देश, उसके मध्य रजत नग।
आठ कहे सुरगेह, रमते देव वहां सब॥प्रतिगृह०॥ १५२॥
ॐ ह्रीं महावत्सादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः
अर्घ्यं....।

वत्सावती सुदेश, विजयारध को धारे।
आठ शिखर पर आठ, देवभवन अति प्यारे॥

प्रतिगृह में जिन गेह, मन वच तन से वंदूँ।
रिद्धि सिद्धि प्रद येह, पूजत ही दुख खंडूँ॥ १५३॥
ॐ ह्रीं वत्सावतीदेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

रम्या देश विदेह, मध्य रजत गिरि धारे।
सुर भवनों में आठ, देव बसें निधि धारे॥प्रतिगृह०॥ १५४॥
ॐ ह्रीं रम्यादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

देश सुरम्या मध्य, रजत गिरी रूपामय।
उस पर सुरगृह आठ, सुरगण हेतु सुखालय॥प्रतिगृह०॥ १५५॥
ॐ ह्रीं सुरम्यादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

रमणीया शुभ देश, उस मधि रूपाचल है।
त्रयकटनी युत श्रेष्ठ, इस पर आठ महल हैं॥प्रतिगृह०॥ १५६॥
ॐ ह्रीं रमणीयादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

देश मंगलावति शुभ, इस मधि रजत अचल है।
उस पर सुरगृह आठ, कनकमयी सुखकर हैं॥प्रतिगृह०॥ १५७॥
ॐ ह्रीं मंगलावतीदेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

चौपाई

पद्मा देश विदेह महान, उसके मधि विजयारध मान।
उस पर आठ देवगृह जान, उनके जिनगृह जजूँ महान॥ १५८॥
ॐ ह्रीं पद्मादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ।

देश सुपद्मा सब सुखखान, उसके मध्य रजतगिरि जान।
उस पर आठ देवगृह जान, उनके जिनगृह जजूँ महान्॥ १५९॥
ॐ ह्रीं सुपद्मादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

देश महापद्मा विख्यात , उसके मधि रूपाचल ख्यात ।उस पर० ॥१६० ॥

ॐ ह्रीं महापद्मादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

देश पद्मकावती महान् , उसके बीच रजतगिरि मान ।उस पर० ॥ १६१ ॥

ॐ ह्रीं पद्मकावतीदेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

शंखादेह विदेह अनूप , उसके मध्य रजतगिरि शुभ्र ।उस पर० ॥ १६२ ॥

ॐ ह्रीं शंखादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

नलिनीदेश विदेह विशेष, मध्य रजतगिरि से शोभेत ।उस पर० ॥ १६३ ॥

ॐ ह्रीं नलिनीदेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

कुमुदा देश रतन भंडार , रूपाचल से अति मनहार ॥उस पर० ॥ १६४ ॥

ॐ ह्रीं कुमुदादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

सरितादेश अतुल सुखदान, रूप्याचल से बहु गुणवान ।उस पर० ॥१६५ ॥

ॐ ह्रीं सरितादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

वप्रादेश अतुल धनवान , रजताचल से महिमावान् ।उस पर० ॥ १६६ ॥

ॐ ह्रीं वप्रादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

देश सुवप्रादेश मनोज्ञ, मध्य रजतगिरि से अति योग्य ।उस पर० ॥१६७ ॥

ॐ ह्रीं सुवप्रादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

देश महावप्रा अतिशायि, मध्य रजतगिरि अति सुखदायि ।उस० ॥१६८ ॥

ॐ ह्रीं महावप्रादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

वप्रावती देश धनवान , मध्य रूप्यगिरि से सुखदान ।उस पर० ॥१६९ ॥

ॐ ह्रीं वप्रावतीदेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

गंधादेश कीर्ति की खान , मध्य रजतगिरि से गुणवान्।
उस पर आठ देवगृह जान , उनके जिनगृह जजूँ महान्॥१७०॥
ॐ ह्रीं गंधादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

देश सुगंधा सुख दातार , रजताचल से शुभ्र अपार।उस पर०॥ १७१॥
ॐ ह्रीं सुगंधादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

देश गंधिला यश की खान, शुभ्र रजतगिरि के अमलान॥उसपर०॥१७२॥
ॐ ह्रीं गंधलादेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

गंधमालिनी देश सुरम्य , रजताचल से दुष्ट अगम्य।उस पर०॥ १७३॥
ॐ ह्रीं गंधमालिनीदेशविदेहमध्यविजयार्धपर्वतस्य अष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

अनावृत यक्ष देवभवन जिनगृह अर्घ्य

मेरू के उत्तर दिश में है , उत्तरकुरु भोगभूमि उत्तम।
उसमें मणिमय जंबूतरु की , पूरब शाखा पर देवभवन॥
उस पर रहता है यक्ष अनावृत , देव निजी परिवार सहित।
जंबूद्वीपाधिपती[1] दशदिश का , स्वामी यह बहुशक्ति सहित॥

दोहा

कृष्ण वर्ण चउभुज धरे , गरुड़ासन सुखकार।
शंख चक्र कुण्डी तथा , अक्षमाल कर धार॥ १७४॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपरक्षकअनावृतयक्षदेवगृहजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य—शंभुछंद

छह कुल पर्वत गजदंत चार , सोलह वक्षार अचल सुन्दर।
चौंतिस रजताचल हैं इन पर , सुरगृह उनमें जिनगृह सुन्दर॥
मेरू पर्वत की ईशान दिशा में , यक्ष अनावृत देव भवन।
इन इक सौ पचहत्तर जिनगृह , जिनप्रतिमा को पूजूँ धर मन॥ १७५॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थकुलपर्वतगजदंतवक्षारविजयार्धपर्वतसंबंधिदेवभवनअनावृतयक्ष-भवनस्थितजिनगृहस्थितजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

१. प्रतिष्ठा तिलक पृ० ३६३

शुभ हस्तिनागपुर तीर्थ क्षेत्र में, जंबूद्वीप बना सुन्दर।
इसमें इक सौ तेईस देव, भवनों में जिनगृह अति मनहर॥
उन सबकी जिन प्रतिमाओं को, मैं पूजूँ अर्घ चढ़ा करके।
ये कामधेनु जिनप्रतिमायें, इच्छित फल को फलती सबके॥ १७६॥

ॐ ह्रीं हस्तिनागपुरतीर्थक्षेत्रस्थकृत्रिमजंबूद्वीपस्थत्रयोविंशत्युत्तरशतदेवभवनजिनचैत्य-गृहजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं....।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं....।

जयमाला

शंभुछंद

जय जय सुरगृह के जिन आलय, जय जय उन सबकी जिन प्रतिमा।
जय जय जिनगृह समकित आलय, जय जय उनकी अद्भुत महिमा॥
इन जिनगृह को सुरगण पूजें, संगीत नृत्य कर भक्ति करें।
भव भव के संचित पापों को, जिन भक्ती से निःशक्ति करें॥ १॥

हिमवन शिखरी पर दश-दश मह-हिमवन् रुक्मी पर सात-सात।
निषधाद्रि नील पर आठ-आठ, गजदंत पे छह-छह आठ-आठ॥
वक्षारों पर अड़तालिस हैं, चौंतिस विजयार्ध पे आठ-आठ।
इक सौ चौहत्तर कूटों पर हैं, देव भवन शाश्वत विख्यात॥ २॥

सब में जिनगृह प्रति जिनगृह में, जिन प्रतिमा इक सौ आठ कही।
उनका जो वंदन करते हैं, वे पा लेते हैं मोक्ष मही॥
जो जंबूद्वीप का रक्षक है, वह यक्ष अनावृत नाम धरे।
उसके घर में भी चैत्यालय, जो चित्त सरोज विकास करे॥ ३॥

जो हस्तिनागपुर में निर्मित, यह जंबूद्वीप अति मनहारी।
इसमें इक सौ तेईस देव, भवनों के जिनगृह सुखकारी॥
जिनगृह में मान स्तम्भ चैत्य, सिद्धार्थ वृक्ष में जिन प्रतिमा।
स्तूप व तोरण द्वार आदि में, जिन प्रतिमा हैं अनूपमा॥ ४॥

मंगल घट मंगल द्रव्य धूप, घट मालायें भी स्वर्णमयी।
जिन प्रतिमायें छवि वीतराग, धारें जो शाश्वत रत्नमयी॥
हम सब जिनगृह जिन प्रतिमा की, पूजा अर्चा वंदना करें।
निज आत्मनिधी को पाकर के, भव भव दुख की खंडना करें॥ ५॥

दोहा

सुरगृह के जिनगेह को, जो पूजें धर प्रीति।
करे 'ज्ञानमति' पूर्ण वो, यही पुरातन रीति॥ ६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थहिमवदादिपर्वतदेवभवनस्थितजिनचैत्यालयजिनप्रतिमाभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जम्बूद्वीप के, तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा, जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से वे, आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर, यहाँ पर कभी ना आवते॥ १॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० २१]

सर्व देवभवन गृह चैत्यालय पूजा

स्थापना—गीताछंद

नंदन वनादिक स्थलों में, देवगण के गृह कहे।
उन सर्व में जिनधाम हैं, उनमें जिनेश्वर बिंब हैं॥
सब देवगण बहु भक्ति से, पूजन भजन वंदन करें।
हम उन जिनेश्वरसद्म अरु, जिनबिंब का अर्चन करें॥

ॐ ह्रीं नंदनवनादिदेवभवनस्थितजिनचैत्यालयजिनबिंबसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं नंदनवनादिदेवभवनस्थितजिनचैत्यालयजिनबिंबसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं नंदनवनादिदेवभवनस्थितजिनचैत्यालयजिनबिंबसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथ अष्टक—गीताछंद

सीतानदी का नीर शीतल, स्वर्णझारी में भरूँ।
निज आत्मसमरस पान करने, हेतु त्रयधारा करूँ॥
नंदन वनादि सुर गृहों में, जैन मंदिर शोभते।
जो पूजते वे शीघ्र ही, निज कर्म मल को धोवते॥ १॥

ॐ ह्रीं नंदनवनादिदेवभवनस्थितजिनचैत्यालयजिनबिंबेभ्यः जलं ....।

रविकांति सम चंदन सुगंधित, भर कटोरी ले लिया।
भव ताप शांति हेतु जिनमंदिर जिनाकृति चर्चिया॥नंदन०॥ २॥

ॐ ह्रीं नंदनवनादिदेवभवनस्थितजिनचैत्यालयजिनबिंबेभ्यः चंदनं ....।

तंदुल अखंडित शशि किरण सम, धौत उज्ज्वल ले लिये।
निज के अखंडित सौख्य हेतु, पुंज की रचना किये॥नंदन०॥ ३॥

ॐ ह्रीं नंदनवनादिदेवभवनस्थितजिनचैत्यालयजिनबिंबेभ्यः अक्षतं ....।

चंपा चमेली मोंगरा, बेला जुही कुसुमावली।
अर्पण करत ही शीघ्र मुझको, प्राप्त हो स्वगुणावली॥नंदन०॥ ४॥

ॐ ह्रीं नंदनवनादिदेवभवनस्थितजिनचैत्यालयजिनबिंबेभ्यः पुष्पं ....।

पेड़ा अंदरसा खीर मोतीचूर के लड्डू लिये।
नैवेद्य लेकर पूजते ही, स्वात्म अमृत पाइये॥नंदन०॥ ५॥

ॐ ह्रीं नंदनवनादिदेवभवनस्थितजिनचैत्यालयजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं ....।

कर्पूर ज्योति ज्वलित करके, आरती करते अबे।
अज्ञान तम भग जाय अन्तर, ज्ञान की ज्योति जगे॥नंदन०॥ ६॥

ॐ ह्रीं नंदनवनादिदेवभवनस्थितजिनचैत्यालयजिनबिंबेभ्यः दीपं ....।

दश गंध धूप सुगंध लेकर, अग्नि में खेऊं यहां।
सब कर्म भस्मी भूत होवे, गुण सुरभि फैले यहां॥नंदन०॥ ७॥

ॐ ह्रीं नंदनवनादिदेवभवनस्थितजिनचैत्यालयजिनबिंबेभ्यः धूपं ....।

अंगूर आम अनार पिस्ता, द्राक्ष फल भर थाल में।
अर्पण करूं पूजन करूं, कर जोड़ नाऊँ भाल मैं॥

नंदन वनादि सुर गृहों में, जैन मंदिर शोभते।
जो पूजते वे शीघ्र ही, निज कर्म मल को धोवते॥ ८॥
ॐ ह्रीं नंदनवनादिदेवभवनस्थितजिनचैत्यालयजिनबिंबेभ्यः फलं....।
जल गंध अक्षत पुष्प चरु दीपक सु धूप व फल लिये।
इन द्रव्य को ले अर्घ अर्पूं, भाव भक्ती धर हिये॥नंदन०॥९॥
ॐ ह्रीं नंदनवनादिदेवभवनस्थितजिनचैत्यालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं....।

दोहा

नंदनवन की वापिका, का जल स्वच्छ पवित्र।
शांतिधारा मैं करूं, होवे चित्त पवित्र॥ १०॥
शांतये शांतिधारा।
सुमनसवन के सुमन से, पुष्पांजलि करंत।
मन सुमनस होता तुरत, बहुविधि सुगुण भरंत॥ ११॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

नंदन वन आदिक मधी, देव भवन अगणीत।
इनके घर में जिनभवन, पूजूँ धर मन प्रीति॥
इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

शंभुछंद

नंदनवन में पूर्वादिक दिश में, लोकपाल के भवन बने।
भवनों के दोनों पार्श्वों में, नंदन आदिक अठ कूट बने॥
इन सब सदनों में आठ देवियां, रहती हैं वैभवयुक्ता।
उनके गृह में जिनमंदिर हैं, उनको मैं पूजूँ भक्तियुता॥ १॥
ॐ ह्रीं नंदनवनसंबंधिमेघंकरामेघवतीसुमेघामेघमालिनीतोयंधराविचित्रापुष्पमाला-अनिन्दितादेवीभवनस्थितजिनचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं....।
सौमनस नाम वन में इस विध हैं, आठ कूट सुन्दर माने।
इनके ऊपर जो भवन बने, उनमें देवी रहती जाने॥
उनके गृह में जिनगृह शाश्वत, जो सुरगण का मन हरते हैं।
उनकी पूजा भक्ती करके, हम भव-भव के दुःख हरते हैं॥ २॥
ॐ ह्रीं सौमनसवनसंबंधिमेघंकरादिअष्टदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

हिमवन् आदिक छह पर्वत पर, क्रम से छह सरवर सुन्दर हैं।
प्रत्येक सरोवर में माने हैं, कूट पांच जो मनहर हैं॥
इन तीसों पर हैं जिनमंदिर, जिनकी हम पूजा करते हैं।
जिनवर की भक्ती वंदन से, सब रोग शोक दुःख टरते हैं॥ ३॥

ॐ ह्रीं पद्ममहापद्मतिगिंछकेसरिमहापुंडरीकपुण्डरीकसरोवरसंबंधित्रिंशत्कूटदेव-भवनस्थितजिनचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं....।

गंगा सिन्धु आदिक देवी के, कूट चतुर्दश मनहर हैं।
उनके गृह की छत पर कमलों पर, जिन प्रतिमायें सुन्दर हैं॥
निज भवनों में इन देवी के, गृह में सुन्दर चैत्यालय हैं।
उनको हम अर्घ्य चढ़ाकर के, पूजें वे सब सुख आलय हैं॥ ४॥

ॐ ह्रीं गंगासिंधुरोहितरोहितास्याहरितहरिकांतासीतासीतोदानारीनरकांतासुवर्णकूला-रूप्यकूलारक्तारक्तोदानदीनां अधिष्ठात्रीदेवीभवनस्थितजिनचैत्यालयजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

दो देवकुरु उत्तर कुरु में औ, भद्रसाल पूर्वा पर में।
सीता-सीतोदा के दोनों तट पर दो-दो दिग्गजगिरि हैं॥
इन आठों पर क्रम से रहते, सुर पद्म नील स्वस्तिक अंजन।
सुर कुमुद पलाश अवतंस रोचन, इनके गृह में जिनगृह को नमन॥५॥

ॐ ह्रीं पूर्वादिदिशागतपद्मनीलस्वस्तिकांजनकुमुदपलाशावतंसरोचननामदिग्गज-पर्वतानां तत्तन्नामधारिदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस नील गिरि से दक्षिण में, सीता नदि के दोनों तट पर।
निषधाचल के उत्तर में नदि, सीतोदा के दोनों तट पर॥
क्रम से हैं चार यमक पर्वत, उन पर देवों के भवनों में।
जिन मंदिर शाश्वत बने हुये, उनको पूजें भवताप हने॥ ६॥

ॐ ह्रीं चित्रविचित्रयममेघनामपर्वतानां तत्तन्नामधारिदेवभवनस्थितजिनचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं....।

नाभीगिरि चार कहे उन पर, देवों के भवन बखाने हैं।
वे क्षेत्र हैमवत हरि रम्यक, हैरण्यवत में माने हैं॥
उन पर हैं देव स्वाति चारण, और पद्म प्रभास नाम धारी।
इनके गृह के जिन मंदिर को, मैं पूजूँ भव भव दुख हारी॥ ७॥

ॐ ह्रीं हैमवतहरिरम्यकहैरण्यवतक्षेत्रसंबंधिश्रद्धावान् विजटावान् पद्मवान्गंधवान्ना-भिगिरिषु स्वातिचारणपद्मप्रभासदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं...

बत्तिस विदेह भरतैरावत दो, चौंतिस कर्म भूमि ये हैं।
इनमें छह खंड बने उन सब में, पांच पांच म्लेच्छ खंड हैं॥
प्रत्येक मध्य के म्लेच्छ खंड में, इक इक वृषभाचल माने।
उन पर देवों के भवनों में, जिनगृह की हम पूजा ठाने॥ ८॥

ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु प्रत्येकमध्यम्लेच्छखंडगतचतुस्त्रिंशत्वृषभाचल-संबंधिदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

सीता सीतोदा के तट पर, दो सौ कांचनगिरि माने हैं।
उन सब पर देवों के गृह हैं, जो शाश्वत रम्य बखाने हैं॥
इनमें मरकत मणि कांति सदृश, देवों के रूप मनोहर हैं।
उन सबके गृह में जिनमंदिर, उनकी पूजा सब सुखकर है॥ ९॥

ॐ ह्रीं सीतोदानदीउभयतटसंबंधिद्वयशतकांचनगिरिषु कांचनदेवभवनस्थितजिना-लयेभ्यः अर्घ्यं....।

हिमवन गिरि पद्म सरोवर में, श्रीदेवी रहती बीच कमल।
जिसके इक लख चालीस हजार, इक सौ पंद्रह परिवार कमल॥
इन सब कमलों पर भवन बने, सब भवनों में जिनगृह माने।
उन सबको अर्घ चढ़ाकर के, हम पूजें भाव भक्ति ठाने॥ १०॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ हिमवत्पर्वतसंबंधिपद्मसरोवरकमलमध्यश्रीदेवीभवनतत्परिवार-कमलमध्यपरिवारदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

महहिमवान् का द्रह महापद्म, उनमें ह्री देवी का पंकज।
दो लाख व अस्सी हजार दो सौ, तीस कहे परिवार जलज॥
इन सब कमलों पर०॥ ११॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थमहाहिमवत्पर्वतसंबंधिमहापद्मसरोवरकमलमध्यह्रीदेवीभवनतत्परि-वारकमलमध्यपरिवारदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

निषधाचल पर सरवर तिगिंछ, के बीच कमल पर धृतिदेवी।
परिवार पांच लख साठ सहस, चउशत औ साठ कमल लघु भी॥
इन सब कमलों पर०॥१२॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थनिषधपर्वतसंबंधितिगिंछसरोवरकमलमध्यधृतिदेवीभवनतत्परि-वारकमलमध्यपरिवारदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

नीलाचल पर सरवर केसरि, मधि पंकज पर कीर्ती देवी।
परिवार पांच लख साठ सहस, चउशत औ साठ कमल लघु भी॥
इन सब कमलों पर० ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थनीलपर्वतसंबंधिकेसरिसरोवरकमलमध्यकीर्तिदेवीभवनतत्परिवार-कमलमध्यपरिवारदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

रुक्मी गिरि पर महापुंडरिक, द्रह के वारिज पर बुद्धि रहे।
दो लाख व अस्सी हजार दो सौ, तीस कमल परिवार कहे॥
इन सब कमलों पर० ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थरुक्मिपर्वतसंबंधिमहापुंडरीकसरोवरकमलमध्यबुद्धिदेवी-भवनतत्परिवारकमलमध्यपरिवारदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

शिखरी गिरि पुंडरीक द्रह में, लक्ष्मी देवी है कमल मध्य।
परिवार इक लाख सहस चालिस, इक सौ पंद्रह उस द्रह के मध्य॥
इन सब कमलों पर० ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थशिखरिपर्वतसंबंधिपुंडरीकसरोवरकमलमध्यलक्ष्मीदेवीभवनतत्परि-वारकमलमध्यपरिवारदेवीभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

इस जंबूवृक्ष के उत्तर की, शाखा पर जिनमंदिर जानो।
त्रय शाखा पर आदर व अनादर, देवों के गृह सरधानो॥
परिवार वृक्ष इक लाख तथा, चालीस हजार इक सौ उन्नीस।
इक सबमें देव रहें सबके गृह में जिनमंदिर नमूँ नित्त॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थउत्तरकुरुईशानकोणे जंबूवृक्षस्थितदेवभवनतत्परिवारवृक्षस्यपरि-वारभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

शाल्मलि तरु देवकुरू में है, उसमें दक्षिण पर जिनगृह है।
त्रय शाखा पर वहां वेणु वेणुधारी देवों के जिनगृह हैं॥
परिवार वृक्ष इक लाख तथा, चालीस हजार इक सौ उनीस।
उन सबमें देव रहें सबके, गृह में जिनमंदिर नमूँ नित्त॥ १७ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थदेवकुरुआग्नेयकोणे शाल्मलिवृक्षस्थितदेवभवनतत्परिवारवृक्षस्थित परिवारभवनस्थितसर्वजिनालयेभ्यः अर्घ्यं ....।

सीता-सीतोदा में दस-दस, सरवर हैं उनमें कमल खिले।
सबमें इक लख चालिस हजार, इक सौ पंद्रह लघु कमल खिलें॥

इन सबमें नागकुमारी[1] औ, उनकी परिवार देवियां हैं।
उन सबके गृह में जिनगृह हैं, उन सबको अर्घ चढ़ाऊं मैं॥ १८॥

ॐ ह्रीं सीतासीतोदानदीमध्ये विंशतिसरोवरेषु प्रत्येकमध्यकमलस्थितनागकुमारी-देवीभवनतत्परिवारकमलदेवीभवनस्थितसर्वजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस जंबूद्वीप में विजयारध, चौंतिस त्रय कटनी उन सबमें।
दूजी कटनी के उभय भाग में, आभियोग्य सुर नगर बने॥
उन सब सुरगृह में जिनगृह हैं, उन सबको अर्घ चढ़ाऊं मैं।
इन शाश्वत जिनगृह को पूजूँ, भव भव के दुःख मिटाऊं मैं॥ १९॥

ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतानां द्वितीयश्रेणीउभयपार्श्वयोः आभियोग्यजातीय-व्यंतरदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस जंबूद्वीप में सत्रह लख, व्यानवे सहस नब्बे नदियां।
उन सबके तोरण द्वारों में, मणिमय शाश्वत जिन प्रतिकृतियां॥
उन सब जिनबिंबों को नित प्रति, हम अर्घ चढ़ाकर यजते हैं।
औ अन्य सभी तोरण द्वारों की, जिन प्रतिमा को भजते हैं॥ २०॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थनवतिप्रमुखनदीसप्तदशलक्षद्विनवतिसहस्रपरिवारनदीनां तोरणद्वा-रेषुनिर्मितशाश्वतमणिमयसर्वजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

इस जंबूद्वीप के परकोटे में, चार दिशा में चार द्वार।
पूरब दिश रक्षक विजय देव का, पूर्व दिशा में विजय द्वार॥
दक्षिण पश्चिम उत्तर दिश में, विजयंत जयंत अपराजित हैं।
इन मुख्य द्वार में जिनप्रतिमा, उन सबको हम नित पूजत हैं॥ २१॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपप्राकारस्य चतुर्दिशायां विजयवैजयंतजयंतअपराजितद्वारस्थितजिन-प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

इन महा द्वार के ऊपर ही, आकाश में इनके नगर बनें।
उनमें विजयादिक देव रहें, बहु परिकर से ये सुखी घने॥
इनके गृह के जिनमंदिर को हम, अर्घ चढ़ाकर यजते हैं।
जिनमंदिर के दर्शन वंदन, पूजन से सब अघ कटते हैं॥ २२॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपप्राकाररक्षकविजयवैजयंतजयंतअपराजितदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

इस जंबूद्वीप में जहां कहीं भी, भवन वासि के हैं आवास।
उनके गृह में जिनगृह मानें, उनको नमूँ नमाकर माथ॥

---

१. जंबूद्वीपपण्णति पृष्ठ ११२।

जल गंधादिक अर्घ मिलाकर, जिनप्रतिमा को पूजूँ आज ।
सर्व अमंगल दूर भगाकर, प्राप्त करूं निज का साम्राज्य॥ २३ ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभवनवासिदेवभवनस्थितसर्वजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

व्यंतर के तीन स्थान कहे, जो पुर आवास भवन से हैं।
पुर द्वीप समुद्रों में माने, द्रह गिरि तरु में आवास रहें॥
चित्रा पृथ्वी के तले भवन, इन सबमें व्यंतर रहते हैं।
आवास, भवनपुर इन के जो, उनके जिनगृह को यजते हैं॥ २४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थव्यंतरदेवानां भवनपुरआवासस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

जंबूद्वीप में दो शशि औ, दो रवि माने इन्द्र प्रतीन्द्र।
उनके गृह में जिनमंदिर हैं, उनको मैं वंदूँ भक्तिलीन॥
ये नित्य गमन करते रहते, मेरू की परिक्रमा विधि से।
इनसे ही दिन औ रात्रि बने, इनके जिनगृह को पूजूँ मैं॥ २५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थद्विचंद्रद्विसूर्यभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

शशि इन्द्र प्रतीन्द्र रवी अठवीस, नक्षत्र अठ्यासी ग्रह माने।
छ्यासठ हजार नव सौ पछत्तर, कोड़ा कोड़ी तारे माने॥
यह एक चंद्र परिवार इसे, दूना करिये तब जितने हैं।
इन सब ज्योतिष गृह में जिनगृह, उन सबको नितप्रति पूजूँ मैं॥ २६॥

ॐ ह्रीं चन्द्रद्वयपरिवारे द्विसूर्यषट्पंचाशत्नक्षत्रषट्सप्तत्यधिकशतग्रहएकलक्षत्रयस्त्रिंशत्सहस्रनवशतपंचाशत्कोटाकोटितारागणज्योतिष्कदेवभवनस्थितजिनालयेभ्यः अर्घ्यं....।

पूर्व लवण समुद्र में गंगानदी जहां गिरती वहं पर।
मागधसुरं का ग्रह है सिंधु, मदि प्रवेश पर प्रभाससुर॥
वैजयंतद्वार के ढिग समुद्र में, वरतनु देव निवास कहा।
इन तीनों सुरग्रह में जिनगृह, जिनप्रतिमाओं को जजूँ यहां॥ २७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिगंगासिंधुप्रवेशस्थानवैजयंतद्वारस्थानसमुद्रेषु मागधप्रभासवरतनुदेवभवनस्थितजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

ऐरावत क्षेत्र में रक्ता, रक्तोदा नदि का प्रवेश जहं पर।
अपराजित द्वार निकट लवण, समुद्र में भी सुरगृह वहं पर॥

मागध प्रभास वरतनु सुर गृह, उनमें जिनभवन अकृत्रिम हैं।
उन जिनगृह जिनप्रतिमाओं को, मैं पूजूँ वे सब अप्रतिम हैं॥ २८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिरक्तारक्तोदानदीप्रवेशस्थानअपराजितद्वारस्थानलवणसमुद्रेषु-मागधप्रभासवरतनुदेवभवनस्थितजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

बत्तीस विदेह की गंगा सिंधु, रक्ता रक्तोदा नदी कहीं।
सीता-सीतोदा के तट पर, उनका प्रवेश स्थान सही॥
वहां के चक्री षट्खंड विजय में, मगध प्रभास वरतनु को।
वश करते हैं उन सुरगृह में, पूजूँ जिनगृह जिनप्रतिमा को॥ २९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिद्वात्रिंशत्विदेहक्षेत्रस्थचतुःषष्टिगंगासिंधुरक्तारक्तोदानदीप्रवेश-स्थानद्वारस्थानेषु मागधप्रभासवरतनुदेवभवनस्थितजिनगृहजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य

इस जंबूद्वीप में मेरुशैल, पर्वत नदि सरवर कुण्डों में।
तरु पर वनखंड कोटरों में गिरि गुफा कूपवापी तट में॥
प्राकार वेदिका आदि स्थल में, जहां कहीं भी सुर रहते।
उन सबके घर के जिनमंदिर, जिनप्रतिमाओं को हम यजते॥ ३०॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिसुमेरुपर्वतादिसर्वपर्वतनदीसरोवरकुंडवृक्षवनखंडवृक्षकोटर-गिरिगुफाकूपवापिकानदीतटप्राकारवेदिकादिस्थानेषु चतुर्निकायदेवभवनस्थितसर्व-जिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा

सुरभवनों में जिन भवन, शाश्वत सिद्ध अनादि।
उन सबकी जिनमूर्ति को, जजत हरूँ भव व्याधि॥ १॥

शंभुछंद

इस जंबूद्वीप में मेरु आदि, गिरि पर देवों के भवन बने।
सुर भवनवासि अरु व्यंतर के, ज्योतिषसुर के नभ आंगन में॥

सौधर्म इंद्र आदिक वैमानिक, देवों के भी भवन यहां।
वे आकर क्रीड़ा करते हैं, निज-निज थल में जो बनें यहां॥ २॥

इन सब सुरगृह में अकृत्रिम, जिनमंदिर रत्नों के मानें।
सबमें हैं इक सौ आठ कही, जिन प्रतिमायें भव दुख हानें॥
मंदिर में मान स्तम्भ बने, सिद्धार्थ वृक्ष अरु चैत्यवृक्ष।
उन सबमें जिनवरबिंब कहे, उन सबको पूजूँ एक चित्त॥ ३॥

स्तूपों तोरण द्वारों में, अन्यत्र कहीं भी जिन प्रतिमा।
उन सबको वंदूँ बार-बार, जिन प्रतिमा की अद्भुत महिमा॥
नंदन वन सौमनसादिक में, इंद्रों के सभा भवन सुन्दर।
उनमें जो जिनमंदिर शोभें, उन सबको पूजूँ मन शुचिकर॥ ४॥

सब सुरगण निज-निज भवनों में, परिवार सहित जिन भवनों में।
वैभव से पूजा करते हैं, नाचें गाते जिन भक्ती में॥
जिनगृह जिन प्रतिमा सर्ववंद्य, गणधर मुनिगण वंदन करते।
सुरगण चक्री नरपति खग नर, सब जन भी जिन अर्चन करते॥ ५॥

सम्यग्दर्शन से रहित देव, देवी जिन दर्शन के फल से।
सम्यग्दर्शन पा जाते हैं, तब वे संसार जलधि तिरते॥
जो सम्यग्दृष्टी देव वहां, जिनबिंबों को नित यजते हैं।
वे अतिशय पुण्य कमा करके, जल्दी भव वारिधि तरते हैं॥ ६॥

हम भी जिन भवनों को पूजें, जिनप्रतिमाओं को नित पूजें।
भक्ती से वंदन प्रणमन कर, भव भव के दुःखों से छूटें॥
सम्यग्दर्शन को निर्मल कर, जिनसम निजआत्मा को ध्याकर।
निज 'ज्ञानमती' केवल कर लूँ, प्रभु भक्ती का यह फल पाकर॥ ७॥

दोहा

जिन प्रतिमा चिंतामणी, मन चिंतित फल देत।
सर्व मनोरथ पूर्णकर, गुण संपति भर देत॥ ८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिनंदनवनमेरुगुफादिसर्वदेवभवनस्थितजिनालयजिनप्रतिमाभ्यः जयमाला अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के, तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा, जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से, वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर, यहाँ पर कभी ना आवते॥ १॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० २२]

कृत्रिम जिनमंदिर जिनबिंब पूजा

स्थापना—शंभुछंद

इस जंबूद्वीप में चौंतिसों ही, कर्म भूमि में जिनमंदिर।
चक्री हलधर नारायणादि, मनुजों से निर्मापित सुन्दर॥
देवों द्वारा भी निर्मापित, अगणित जिनगृह जिन प्रतिमायें।
उन त्रैकालिक सुरनर वंदित का, आह्वानन कर गुण गायें॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु चक्रवर्तीबलभद्रनारायणप्रतिनारायणमहामंडलीकमंडलीकराजाप्रजादिमनुष्यैर्देवैश्चनिर्मापितत्रैकालिकसर्वजिनमंदिरजिनबिंबसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु चक्रवर्तीबलभद्रनारायणप्रतिनारायणमहामंडलीकमंडलीकराजाप्रजादिमनुष्यैर्देवैश्चनिर्मापितत्रैकालिकसर्वजिनमंदिरजिनबिंबसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिषु चक्रवर्तीबलभद्रनारायणप्रतिनारायणमहामंडलीकमंडलीकराजाप्रजादिमनुष्यैर्देवैश्चनिर्मापितत्रैकालिकसर्वजिनमंदिरजिनबिंबसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टक—छंद-चौबीसों श्री जिनचंद

जिन वच सम पावन नीर, सुरभित भर लाया।
त्रय धार करत जिनईश, चरणों शिर नाया॥

कृत्रिम जिनगृह जिनबिंब, जितने त्रय कालिक।
सब पूजूँ त्रिकरण शुद्ध, पाऊँ सुख शाश्वत॥ १॥
ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातसुरनरनिर्मापितसर्वजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः जलं..।
जिन तन सम गंध सुगंध, चंदन घिस लाया।
भव दाह[1] शमन के हेतु, जिन चर्चन आया॥कृत्रिम०॥ २॥
ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातसुरनरनिर्मापितसर्वजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः चंदनं....।
जिनवच सम उज्ज्वल शालि, धोकर थाल भरा।
उज्ज्वल अखंड पद हेतु तुम ढिग पुंज धरा॥कृत्रिम०॥ ३॥
ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातसुरनरनिर्मापितसर्वजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अक्षतं....।
बहु रंग बिरंग गुलाब, हरसिंगार लिया।
जिन यश सम सुरभित पुष्प, चरण चढ़ाय दिया॥कृत्रिम०॥ ४॥
ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातसुरनरनिर्मापितसर्वजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं..।
खाजे ताजे सोहाल, बरफी मालपुआ।
जिन वच सम तृप्तीकार, चरू चढ़ाय दिया॥कृत्रिम०॥ ५॥
ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातसुरनरनिर्मापितसर्वजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं....।
जिन भामंडल सम ज्योति, दीपक लौ चमके।
दीपक से जिन पद पूज, आतम ज्योति जगे॥कृत्रिम०॥ ६॥
ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातसुरनरनिर्मापितसर्वजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः दीपं..।
बहु गंध विमिश्रित धूप, खेऊँ अग्नी में।
जिन कीर्ति सदृश शुभ गंध, फैले चहुं दिश में॥कृत्रिम०॥ ७॥
ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातसुरनरनिर्मापितसर्वजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः धूपं..।
आड़ू लीची बादाम, पिस्ता द्राक्ष लिया।
बहु सरस मधुर फल अर्घ्य, शिवफल आश किया॥कृत्रिम०॥ ८॥
ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातसुरनरनिर्मापितसर्वजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः फलं..।
जल फल वसु द्रव्य मिलाय, अर्घ बनाय लिया।
निज पद अनर्घ के हेतु, अर्घ चढ़ाय दिया॥कृत्रिम०॥ ९॥
ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातसुरनरनिर्मापितसर्वजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

सोरठा

जिन आलय जिनबिंब, सब जग शांतिकर सदा।
शीघ्र हरो जगद्वंद्व, शांतिधारा मैं करूं॥ १०॥

शांतये शांतिधारा।

बेला हर सिंगार, पुष्प सुगंधित ले लिये।
मिले सौख्य भंडार, पुष्पांजलि से पूजते॥ ११॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

त्रैकालिक जिनगृह कहें, जिन प्रतिमा भी नंत।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले भवोदधि अन्त॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

शंभुछंद

उस भरत क्षेत्र के आर्यखंड में, नगरि अयोध्या के पूरब।
देव मनुज आदिक निर्मापित, अतीत जिनगृह संख्यातीत॥
वर्तमान के भी हैं अगणित, भाविकाल के नंतानंत।
पुरी अयोध्या के जिनगृह, जिनप्रतिमा सबको जजूँ निशंक॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रआर्यखंडसंबंधिअयोध्यायाः पूर्वदिक्गंगानदीपर्यंतत्रैकालिकसर्वकृत्रिमजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

पुरी अयोध्या से दक्षिण में, लवण जलधि तक जितने भी।
देव चक्रवर्ती मनुजादिक, निर्मापित जिनगेह सभी॥
भूत भविष्यत् के अनंत हैं, वर्तमान के अगणित भी।
उन सब जिनगृह जिनप्रतिमा को, पूजूँ त्रिकरण शुद्ध अभी॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रआर्यखंडसंबंधिअयोध्यायाः दक्षिणदिक्लवणसमुद्रपर्यंतत्रैकालिकसर्वकृत्रिमजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

नगरि अयोध्या से पश्चिम दिक्, सिंधु नदी तक हैं जितने।
सुरनर असुर आदि से कारित, जिनगृह बिंब अनंत बनें॥

भूत भविष्यत् वर्तमान के, उन सबको मैं नित्य जजूँ।
रोग शोक दुःख कष्ट मिटाकर, निजरस अमृत स्वाद चखूँ॥ ३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रआर्यखंडसंबंधिअयोध्यायाः उत्तरदिक्विजयार्धपर्वतपर्यंत-त्रैकालिकसर्वकृत्रिमजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

इस पुरी अयोध्या के उत्तर दिश, में विजयार्ध अचल तक भी।
जितने जिनमंदिर रचे गये, जितनी जिन प्रतिमायें हों भी॥
उन त्रयकालिक को नित्य जजूँ, वे सर्व अमंगल दूर करें।
जो पूजें ध्यावें भक्ति करें, उनके घर मंगल सौख्य भरें॥ ४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडसंबंधिअयोध्यायाः उत्तरदिक्विजयार्धपर्वतपर्यंत-त्रैकालिकसर्वकृत्रिमजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

ऐरावत के आर्यखंड के, मध्य अयोध्या[1] पुरी कही।
इसके पूरब रक्तानदि के, तट तक सब सुरनर कृत ही॥
इस नगरी में भी जिन मंदिर, जिनबिंब नृसुर मुनिगण वंदित।
सब भूत भविष्यत वर्तमान, त्रयकालिक उनको पूजूँ नित॥ ५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रार्यखंडसंबंधिअयोध्यायाः पूर्वदिक्रक्तानदीपर्यंत-त्रैकालिकसर्वकृत्रिमजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

इस नगरि अयोध्या के दक्षिण, विजयार्ध गिरी तक जिनमंदिर।
जितने भी हों उन सबको, अरु जिन प्रतिमा को भी मन शुचिकर॥
मैं पूजूँ वंदूँ भक्ति करूँ, जिनभक्ती अमोघ शक्ती है।
निश्चित ही मनवाञ्छित फलती, नहिं व्यर्थ कभी जा सकती है॥ ६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रार्यखंडसंबंधिअयोध्यायाः दक्षिणदिक्विजयार्धपर्वत-पर्यंतत्रैकालिकसर्वकृत्रिमजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

इस पुरी अयोध्या के पश्चिम, दिश रक्तोदा तट तक जितने।
जिनमंदिर जिनबिंब मनोहर, नर सुर आदिक से हि बने॥
भूत भावि के कहे अनंते, वर्तमान के अगणित हैं।
उन सबके वंदन पूजन से, सब दुख दारिद विगलित हैं॥ ७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रार्यखंडसंबंधिअयोध्यायाः पश्चिमदिक्रक्तोदानदीपर्यंत-त्रैकालिकसर्वकृत्रिमजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

इस नगरी के उत्तर में, लवणांबुधि तक जितने जिनगृह।
चक्री राजा नर सुर आदिक, से निर्मापित अतिशय सुखगृह॥

---

१. तत्त्वार्थराजवार्तिक अ. ३ सूत्र १० की टीका में वार्तिक नं. २२।

उन त्रैकालिक जिनमंदिर अरु, जिनप्रतिमा को पूजूँ रुचि से।
इन पूजा से अपमृत्यु टले, आगंतुक भी संकट टलते॥ ८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रार्यखंडसंबंधिअयोध्यायाः उत्तरदिक्लवणसमुद्रपर्यंत-त्रैकालिकसर्वकृत्रिमजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

दोहा

सोलह पूर्व विदेह में, जितने कृत जिनगेह।
त्रय कालिक जिनबिंब को, जजूँ सदा धर नेह॥ ९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थषोडशपूर्वविदेहदेशसंबंधित्रैकालिकसर्वकृत्रिमजिनमंदिरजिन-प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

सोलह अपर विदेह में, कृत्रिम जिनवर सद्म।
सबको पूजूँ भक्ति से, जिन कृति के पद पद्म॥ १०॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थषोडशपश्चिमविदेहदेशसंबंधित्रैकालिकसर्वकृत्रिमजिनमंदिरजिन-प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

शंभुछंद

चौंतिस विजयार्ध गिरी ऊपर, विद्याधर मानव रहते हैं।
उनके बनवाये जिनमंदिर, जिनबिंब सर्व दुख दहते हैं॥
उन सब त्रैकालिक को पूजूँ, वे अतिशय पुण्य प्रदाता हैं।
जो जिन भक्ती में लीन रहें, उनके वे मुक्ति विधाता हैं॥ ११॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशद्विजयार्धपर्वतविद्याधरश्रेणीसंबंधित्रैकालिकसर्वकृत्रिम-जिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

जो प्रतिमा प्रातिहार्य संयुत, अरु यक्ष यक्षणी युत शोभें।
जो तीर्थंकर के चिह्न सहित, अठ मंगल द्रव्य सहित शोभें॥
ये प्रतिमायें अर्हंतों की, इन सबसे विरहित सिद्धों की।
आचार्य उपाध्याय साधु की, प्रतिमायें सबको पूजूँ भी॥ १२॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातत्रैकालिकसर्वकृत्रिमअर्हत्सिद्धाचार्योपा-ध्यायसाधुप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

वृषभादिक चौबिस जिनप्रतिमा, अरु तीस चौबीसी जिनप्रतिमा।
सीमंधर युगमंधर आदिक, इन बीस जिनेश्वर की प्रतिमा॥
जो भरत रामचंद्रादि सिद्ध, पद प्राप्त हुये उनकी प्रतिमा।
इन सबको पूजूँ नितप्रति मैं, इनकी है अकथ अतुल महिमा॥ १३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातत्रैकालिकचतुर्विंशतितीर्थंकरसीमंधर-प्रभृतिविहरमाणविंशतितीर्थंकरभरतरामचंद्रप्रभृतिसिद्धपदप्राप्तसर्वेषां जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

दक्षिण में श्रवणवेल्गुल में, बाहुबलि प्रतिमा मनहारी।
चामुंडराय निर्मित ऊंची, सत्तावन फुट बहु सुखकारी॥
इनके चरणांबुज सन्निधि में, ध्यान किया स्तुति करके।
मेरू आदिक उपलब्ध हुआ, बाहुबली को जजूँ अबे॥ १४॥

ॐ ह्रीं दक्षिणप्रान्ते सप्तपंचाशत्फुटउत्तुंगश्रीबाहुबलिस्वामिप्रतिमायै अर्घ्यं....।

हस्तिनागपुर क्षेत्र में जंबूद्वीप स्थल पर जिन प्रतिमा।
कल्पवृक्ष महावीर प्रभु की, जिन की अतुल अकथ महिमा॥
श्रीशांति कुंथु अर वृषभदेव अरु भरत बाहुबलि प्रतिमायें।
सब जिनप्रतिमा नंदीश्वरादि की जजूँ सर्व दुख मिट जाये॥ १५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रसंबंधिहस्तिनागपुरक्षेत्रस्थितजंबूद्वीपस्थले कल्पवृक्षस्वरूप-महावीरस्वामिशांतिकुंथुअरनाथवृषभदेवभरतबाहुबलिआदिजिनप्रतिमानंदीश्वरद्वीपरचनामध्यस्थितजिनप्रतिमादिसर्वजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं....।

जो चौंतिस कर्म भूमियों में, पर्वत वनखंड सरोवर में।
नदियों में कुआँ तलाबों में, गिरी गुफा कंदरा लेनी में॥
मणिरत्न स्वर्ण चांदी पत्थर, बालू आदिक की जिनप्रतिमा।
चट्टानों पर उत्कीर्ण हुई, उन सबको जजूँ अतुल महिमा॥ १६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंबंधिपर्वतवनखंडसरोवरनदीकूपतडागगिगुफा-कंदरालेनीआदिस्थानस्थितमणिरत्नपाषाणदिनिर्मित-भित्तिउत्कीर्णादिसर्वकृत्रिमजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

रोलाछंद

जय जय जिनवर सद्म, सुर नर से निर्मित जो।
जय जय जिनवर सद्म, गणधर से वंदित जो॥
जय जय जिनवर बिंब, वीतराग छवि सुन्दर।
जय जय जिनवर बिंब, पूजें नमें पुरन्दर॥ १॥

इस युग में सुर इंद्र, सर्व प्रथम यहां आके।
पुरी अयोध्या मध्य, जिनवर सद्म रचाके॥
चारों दिश में चार, जिनमंदिर बनवाये।
आदिनाथ के समय, आदि पुराण बताये॥ २॥

भरत प्रथम चक्रीश, गिरि कैलाश शिखरपर।
रत्नों के जिनवेश्म, बनवाये सुर मनहर॥
वाराणसि के मध्य, सुलोचना कन्या ने।
रत्नों के जिनसद्म, अतिशय जिनप्रतिमायें॥
बनवाई थीं बहुत, उनकी पूजा की थी।
उस कन्या के हेतु, स्वयंवर प्रथा हुई थी॥ ३॥

चक्री हरिषेणादि, रामचन्द्र पुरुषों ने।
बनवाये थे बहुत, जिनमंदिर रत्नों से॥
काल अनादी से हि, अब तक भी बहु भविजन।
जिनमंदिर जिन बिंब, बनवाते हैं शुचिमन॥
आगे काल अनंत, तक भी बनवायेंगे।
उस फल से वे भव्य, भवदधि तिर जायेंगे॥ ४॥

धनिया सम जिनगेह, सरसों सम लघु प्रतिमा।
बनवाते जो भव्य, उनके पुण्य कि महिमा॥
वे निश्चित निज आथी, को जिनसम कर लेते।
थोड़े ही भव लेय, फिर शिवश्री वर लेते॥ ५॥

जो नर मंदिर माहिं, घंटा तोरण लावें।
छत्र चंवर उपकर्ण, सिंहासन सुचढ़ावें॥
चंदवा वंदनवार, ध्वज से खूब सजावें।
मंगल द्रव्य व धूप घट दे पुण्य उपावें॥ ६॥

विधिवत कर अभिषेक, पूजा नित्य करे हैं।
नृत्य गीत संगीत, करके पुण्य भरे हैं॥
वे ही श्रावक मान्य, जिन पूजा के फल से।
इंद्र संपदा भोग, मुक्ति वल्लभा वरते॥ ७॥

गणधर मुनिगण इंद्र, सुर नरखगपति वंदित।
तीन लोक में श्रेष्ठ, जिन आलय जिन प्रतिकृति॥
मैं भी मन वच काय, सै पूजूँ जिन आलय।
जिनवर बिंब समूह, जजूँ मिले निज आलय॥ ८॥

शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध, मैं हूं ज्ञान स्वरूपी।
नित्य निरंजन सिद्ध, अविचल अकल अरूपी॥
ज्ञानानंद स्वभाव, परमानंद स्वरूपी।
वर्ण गंध रसहीन, चिच्चैतन्य अमूर्ती॥ ९॥

मेरी आत्मा शुद्ध, निश्चयनय से जिन है।
पर व्यवहार नयात्, संसारी दुःखित है॥
जिन भक्ती से आत्म शक्ती प्रगटित होवे।
जो जिनसम कर देत, भव भव दुख खो देवे॥१०॥

दोहा

जिन भक्ती सम कल्पतरु, और नहीं जग मध्य।
केवल 'ज्ञानमती' अतः, मांगों भाक्तिक सर्व॥ ११॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपेस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातत्रैकालिकसर्वकृत्रिमजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः जयमाला अर्घ्यं....।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के, तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा, जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से, वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्ण कर, यहां पर कभी ना आवते॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० २३]

समवसरण पूजा

स्थापना—नरेन्द्रछंद

कर्म भूमि के आर्यखंड में, तीर्थंकर विहरे हैं।
समवसरण के मध्य राजतें, भविजन पाप हरे हैं॥
देश विदेहों में तीर्थंकर, समवसरण नित रहता।
भरतैरावत में चौथे ही, काल में यह दिख सकता॥ १॥

दोहा

जिनवर समवसरण यही, धर्म सभा की भूमि।
आह्वानन कर मैं जजूँ, मिले आठवीं भूमि॥ २॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरदेवसमवसरणसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं तीर्थंकरदेवसमवसरणसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं तीर्थंकरदेवसमवसरणसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टक—सोरठा

सिंधुनदी को नीर, जल से पूजत मन शुची।
मिलता ज्ञान शरीर, समवसरण पूजूँ सदा॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकरदेवसमवसरणाय जलं....।

शीतल गंध सुगंध, चंदन चर्चे अघ टले।
मिले सौख्य अनिंद्य, समवसरण पूजूँ सदा॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकरदेवसमवसरणाय चंदनं....।

शालि स्वच्छ अखंड, पुंज चढ़ाते अखय पद।
होवे ज्ञान अखंड, समवसरण पूजूँ सदा॥ ३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकरदेवसमवसरणाय अक्षतं....।

बेला कमल गुलाब, पुष्प सुगंधित अर्पते।
मिटे सुतन मन व्याधि, समवसरण पूजूँ सदा॥ ४॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकरदेवसमवसरणाय पुष्पं....।

लड्डू मोती चूर, बहुविध चरू चढ़ावते।
होवे क्षुधा विदूर, समवसरण पूजूँ सदा॥ ५॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकरदेवसमवसरणाय नैवेद्यं....।

घृत का दीप जलाय, करूं आरती तम टलें।
भेद ज्ञान प्रकटाय, समवसरण पूजूँ सदा॥ ६॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकरदेवसमवसरणाय दीपं....।

अगर तगर से मिश्र, धूप सुगंधित खेवते।
घातिकर्म हो भस्म, समवसरण पूजूँ सदा॥ ७॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकरदेवसमवसरणाय धूपं....।

लीची आम अनार, सरस फलों से पूजते।
मिले आत्मसुख सार, समवसरण पूजूँ सदा॥ ८॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकरदेवसमवसरणाय फलं....।

जल गंधादिक लेय, अर्घ बनाकर पूजते।
मिलता सौख्य अमेय, समवसरण पूजूँ सदा॥ ९॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकरदेवसमवसरणाय अर्घ्यं....।

शांतिधारा देत, शांति हो सब विश्व में।
पूर्ण स्वस्थता हेत, समवसरण पूजूँ सदा॥ १०॥
शांतये शांतिधारा।

मल्ली हरसिंगार, पुष्पांजलि अर्पण किये।
हो नवनिधि भंडार, समवसरण पूजूँ सदा॥ ११॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

समवसरण यजते मिले, सर्व ऋद्धि नवनिद्धि।
पुष्पांजलि चढ़ावते, सर्व मनोरथ सिद्ध॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

नरेंद्रछंद

ऋषभदेव का समवसरण था, बारह योजन विस्तृत।
धूलीसाल कोट से वेष्टित, ऋद्धि सिद्धि नवनिधि भृत॥
धर्म सभा है गोल मनोहर, बारह गण से पूरित।
सुरनर पशु सुनते दिव्य ध्वनि, जजूँ भक्ति से मैं नित॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतियुक्तश्रीऋषभदेवसमवसरणाय अर्घ्यं....।

अजितनाथ का समवसरण था, साढ़े ग्यारह योजन।
नाम स्मरण मात्र से अब भी, करता पाप विमोचन॥
मानस्तंभ आदि को वंदत, मान गलित हो जावे।
जो जन पूजें मन वच तन से, स्वास्थ्य लाभ को पावें॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीअजितनाथसमवसरणाय अर्घ्यं....।

संभव जिन का समवसरण, जो ग्यारह योजन माना।
गंध कुटी के मध्य जिनेश्वर, सिंहासन अमलाना॥
बीस हजार सीढ़ियां चढ़कर, बाल वृद्ध रोगी जन।
इक मुहूर्त में उन पर पहुंचे, यह अतिशय पूजें हम॥ ३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीसंभवनाथसमवसरणाय अर्घ्यं....।

अभिनंदन जिन समवसरण है, साढ़े दश योजन का।
रोग शोक दुख दारिद संकट, नाशे भव्य जनों का॥
मैं नित पूजूं अर्घ सजाकर, आतम अनुभव पाऊँ।
अजर अमर पद परम धाम पा, नहीं पुनर्भव पाऊँ॥ ४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीअभिनंदनजिनसमवसरणाय अर्घ्यं...

सुमतिनाथ का समवसरण है, दश योजन कहलाया।
भव्यों ने निज कुमति दूरकर, निज पर सुमति उपाया॥
पूजादान शील तप पालो, श्रावक धर्म सुनाया।
पंच महाव्रत मुनि धर्म है, पूजूँ मन वच काया॥ ५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीसुमतिनाथसमवसरणाय अर्घ्यं....।

पद्म प्रभू की कमल छवी है, चौंतिस अतिशय धारी।
साढ़े नव योजन का शोभे, समवसरण सुखकारी॥
कोट वेदिका लता भूमि, आदिक युत इंद्र बनावे।
गणधर मुनिगण चक्रवर्ती गण, नमते शीश नमावें॥ ६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीपद्मप्रभजिनसमवसरणाय अर्घ्यं....।

प्रभु सुपार्श्व का समवसरण है, नव योजन का सुन्दर।
मान स्तंभ चार दिश में हैं, रचना करें पुरंदर॥
भामंडल में दर्शक भविजन, सात निजी भव देखें।
पूजूँ ध्याऊँ जिनगुण गाऊँ, आत्मनिधी तब दीखे॥ ७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितसुपार्श्वनाथसमवसरणाय अर्घ्यं....।

चंद्र प्रभू का समवसरण था, साढ़े आठ सुयोजन।
चंद्रकिरण सम कांति मनोहर, हरती भव्यों का मन॥
घातिकर्म हन केवलज्ञानी, त्रिभुवन सूर्य कहाये।
चंद्रसूर्य सम सौम्य तेज हो, तुम गुणमणि को गायें॥ ८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितचंद्रप्रभनाथसमवसरणाय अर्घ्यं....।

पुष्पदंत का समवसरण है, योजन आठ कहाया।
फिर भी असंख्यात भव्यों को, अपने मध्य समाया॥
देव देवियां असंख्य रहते, नर पशु संख्यातें हैं।
समवसरण की महिमा अनुपम, पूजत सुख पाते हैं॥ ९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितपुष्पदंतजिनसमवसरणाय अर्घ्यं....।

शीतल जिनका समवसरण था, साढ़े सात सुयोजन।
उन प्रभु का बस नाम स्मरण ही, कर देता शीतल मन॥
देव देवियां गीत नृत्य से, जिनगुण गान उचरते।
जो पूजें नित भक्ति भाव से, वे भव वारिधि तरते॥१०॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितशीतलनाथसमवसरणाय अर्घ्यं....।

श्री श्रेयांस का समवसरण था, योजन सात सुविस्तृत।
इन्द्रनील मणि भूमि मनोहर, हरता सुर नर का चित॥
पशु गण भी सब वैर छोड़कर, दिव्य ध्वनि को सुनते।
दो त्रय भव में तर जाते हैं, मैं पूजूँ तन मन से॥ ११॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रेयांसजिनसमवसरणाय अर्घ्यं....।

वासुपूज्य का लाल कमल सम, सुरभित तनु अतिसुंदर।
समवसरण साढ़े छह योजन, इंद्र बना प्रभु किंकर॥
प्रातिहार्य मंगल द्रव्यादिक, शोभे समवसरण में।
चक्रवर्ति भी निज वैभव को, तुच्छ गिने उस क्षण में॥ १२॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितवासुपूज्यजिनसमवसरणाय अर्घ्यं....।

विमलनाथ का समवसरण था, छह योजन गोलाकृति।
चारों तरफ चार मुख प्रभु के, देख रहे सब जन इत॥
वापी में जलभरा वहां जो, उसमें निज भव देखें।
अतिशय प्रभु का कहा अनूपम, पूजत ही निज पेखें॥ १३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितविमलनाथसमवसरणाय अर्घ्यं....।

समवसरण था अनंत जिनका, साढ़े पांच सुयोजन।
चैत्य भूमि के चैत्य वृक्ष में, जिन प्रतिमायें अनुपम॥
सम्यग्दृष्टी प्रभु वंदन कर, भव अनंत हरते हैं।
अनंतदर्शन ज्ञान प्राप्त हो, जो पूजन करते हैं॥ १४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितअनंतनाथसमवसरणाय अर्घ्यं....।

समवसरण श्री धर्मनाथ का, योजन पांच कहाया।
भविजन खेती को धर्मामृत, वर्षाकर हरसाया॥
सागार रु अनगार धर्म दो, भेद रूप माना है।
जिनवर समवसरण जो पूजें, पावें शिवथाना है॥ १५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीधर्मनाथसमवसरणाय अर्घ्यं....।

समवसरण था शांतिनाथ का, साढ़े चार सुयोजन।
आत्यन्तिक सुख शांति हेतु, उन वाणी जन मनमोहन॥
मिथ्या दृष्टी अभव्य जन प्रभु, दर्शन नहिं कर पावे।
सम्यग्दृष्टी दर्शन करके, भव जलधी तर जावे॥ १६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीशांतिनाथसमवसरणाय अर्घ्यं....।

कुंथुनाथ का समवसरण था, योजन चार विख्याता।
प्राणि मात्र पर दया करो सब, यह उपदेश सुनाता॥
जहां प्रभू का श्रीविहार हो, रोग उपद्रव टलते।
सब जन परमानंद प्राप्त कर, सुख से प्रभु को भजते॥ १७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीकुंथुनाथसमवसरणाय अर्घ्यं....।

अर जिनवर का समवसरण था, साढ़े तीन सुयोजन।
मोह अरी को जीत लिये तब, मिला विभव सर्वोत्तम॥
ज्ञान दर्शनावरण रजों को, अन्तराय को नाशें।
हम पूजें उन तीर्थंकर को, अंतर ज्योति प्रकाशें॥१८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीअरनाथसमवसरणाय अर्घ्यं....।

मल्लिनाथ का समवसरण था, योजन तीन कहाया।
कर्ममल्ल के विजयी प्रभु का, सुरनर मिल गुण गाया॥
आर्यखंड में श्रीविहार से, क्षेत्र पवित्र कहाये।
नाम लेत ही आपद टलती, शत्रु मित्र बन जायें॥ १९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितमल्लिनाथसमवसरणाय अर्घ्यं....।

मुनिसुव्रत का समवसरण था, ढाई योजन सुन्दर।
गणधर मुनिगण ऋषिगण सुरगण, नरगण पशुगण मनहर॥
द्वादश सभा मध्य सब बैठे, निज निज के कोठे में।
वंदन कर उपदेश श्रवण कर, निज आतम पोषें वे॥ २०॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितमुनिसुव्रतजिनसमवसरणाय अर्घ्यं....।

नमि जिनवर का समवसरण था, दो योजन मन भाया।
सरवर पुष्प वाटिका वापी, महलों से मन भाया॥
नृत्य करें बहु देव अप्सरा, नाटक शालाओं में।
पूजन से भव भ्रमण दूर हो, पाप नशें इक क्षण में॥ २१॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितनमिजिनसमवसरणाय अर्घ्यं....।

नेमिनाथ का समवसरण था, योजन डेढ़ बताया।
वरदत्तादिक गणधर गुरु ने, सबको बोध कराया॥
सभी आर्यिकाओं में मान्या, राजमती थीं गणिनी।
उस अचिन्त्य वैभव को जजते, मिले स्वात्म निर्झरणी॥ २२॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितनेमिनाथसमवसरणाय अर्घ्यं....।

पार्श्वनाथ का समवसरण था, एक कोश इक योजन।
कमठ शत्रु ने भी वहँ आकर, किया वैर का मोचन॥
पद्मावति धरणेंद्र भक्त प्रभु, संकट मोचन विश्रुत।
चिंतामणि पारस की महिमा, कलियुग में भी अद्भुत॥ २३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितपार्श्वनाथसमवसरणाय अर्घ्यं....।

महावीर का समवसरण था, इक योजन अतिशायी।
ढाई हजार वर्ष के पहले, सुरनर गण सुखदायी॥
उन प्रभु की ध्वनि गौतम ने चुनि, आज मिली हम सबको।
पूजूँ ध्याऊँ भक्ति बढ़ाऊँ शीघ्र नशाऊँ भव को॥ २४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीमहावीरस्वामिसमवसरणाय अर्घ्यं....।

जंबूद्वीप के ऐरावत में, आर्यखंड में नामी।
वर्तमान तीर्थंकर चौबिस, पंचकल्याणक स्वामी॥
बालचंद्र से वीरसेन तक, जिनवर समवसरण को।
श्रद्धा रुचि से पूजन करके, उनकी गहूँ शरण को॥ २५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीबालचंद्रसुव्रतअग्निसेन-नंदिसेनश्रीदत्तव्रतधरसोमचंद्रधृतिदीर्घशतायुष्यविवसितश्रेयानविश्रुतजलसिंहसेनउप-शांतगुप्तशासनअनंतवीर्यपार्श्वअभिधानमरुदेवश्रीधरशामकंठअग्निप्रभअग्निदत्तवीर-सेननामचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणेभ्यः अर्घ्यं....।

पूर्व विदेह देश में सोलह, आर्यखंड उन दो में।
सीमंधर युगमंधर जिनके, समवसरण हैं शोभें॥
उनको अगणित सुरनर मिलकर, भक्तिभाव से पूजें।
तीर्थंकर प्रभु के दर्शन कर, सर्व कर्म अरि धूजें॥ २६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थषोडशपूर्वविदेहदेशसंबंधिसीमंधरयुगमंधरजिनसमवसरणाय अर्घ्यं....।

अपर विदेह देश में सोलह, आर्यखंड उन दो में।
बाहु सुबाहु तीर्थंकर के, समवसरण हैं शोभें॥
उनमें असंख्यात सुरगण हैं, नर पशु सब संख्याते।
जिनभक्ती से आत्मशुद्ध कर, भव भव दुःख नशाते॥ २७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थषोडशपश्चिमविदेहदेशसंबंधिबाहुसुबाहुतीर्थंकरसमवसरणाय अर्घ्यं...।

चौंतिस कर्म भूमि में जो हों, भूत भावि संप्रति में।
तीर्थंकर के समवसरण थे, होते अरु होवेंगे॥
उन सबको पूर्णार्घ समर्पित, करके निज पद पाऊँ।
चौंतिस अतिशय सहित देव, तीर्थंकर के गुण गाऊँ॥ २८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातत्रैकालिकतीर्थंकरसमवसरणेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

कर्म भूमि में अन्य केवली, जिनवर जो भी मानें।
भूत भविष्यत् वर्तमान के, जितने भी परमाणे॥
सुरकृत गंध कुटी में राजें, प्रातिहार्य से शोभित।
दिव्य ध्वनी से भविसंबोधें, पूजूँ गंध कुटी नित॥ २९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातत्रैकालिकसामान्यकेवलिगंधकुटीभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनाममजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा

समवसरण तीर्थेश के, जिनमंदिर सत्यार्थ।
गाऊँ गुणमाला अबे, सिद्ध करें सर्वार्थ॥ १॥

छंद—हे दीनबंधु

जय जय जिनेंद्र तीर्थ नाथ, गुण मणी भरें।
जय जय जिनेंद्र तीर्थ नाथ, जग सुखी करें॥
जब घाति कर्म को हना, तब केवली हुये।
तुम ज्ञान में तब लोक वा, अलोक दिख गये॥ २॥

तब इंद्र की आज्ञा से, धनपती यहां आया।
अद्भुत अपूर्व रम्य, समवसरण बनाया॥
रवि बिंब सदृश गोल, इंद्र नील मणी का।
इस भूमि से वह बीस, सहस हाथ था ऊँचा॥ ३॥

चारों दिशा में सीढ़ियां हैं, बीस सहस ही।
वे एक एक हाथ ऊँची, सर्व सुखमयी॥
चारों दिशा में चार, मानस्तम्भ बने हैं।
जो दर्श से ही मानियों का, मान हने हैं॥ ४॥

पहला है धूलिसाल कोट, सर्व रत्न का।
फिर चैत्य के प्रासाद की, मानी है भूमिका॥
फिर नाट्यशाला फेर मान, स्तम्भ की भूमी।
फिर वेदिका प्रथम है पुनः, खातिका बनी॥ ५॥

वेदी लता भूमि के बाद कोट दूसरा।
उपवन बनी व नाट्यशाला वेदि ध्वज धरा॥

परकोट तृतीय कल्पभूमि नाट्य शालिका।
वेदी भवन धरा स्तूप कोट चतुर्था॥ ६॥

पश्चात् श्रीमंडप की भूमि जो फटिक मयी।
वेदी के बाद प्रथम द्वितीय तृतीय पीठ ही॥
इसके उपरि है गंध कुटी मध्य सिंहासन।
उस पर सहस्रदलमयी स्वर्णिम कमल आसन॥ ७॥

चतुरंगुल अधर तीर्थनाथ इसपे राजते।
निज दिव्य ध्वनि से असंख्य भव्य तारते॥
बालक व वृद्ध अंध वधिर, पंगु आदि भी।
मुहूर्त में ही चढ़ते लोग, सीढ़ियां सभी॥ ८॥

नाटक गृहों में अप्सरा, अभिनय विविध करें।
तीर्थंकरों के पंच कल्याणक को विस्तरें॥
गणधर व चक्रवर्ती पुण्य पुरुष चरित का।
नाटक करें सब लोक का, मन हर रहीं नीका॥९॥

मिथ्यादृशी पाखंडि शूद्र जन वहां नहीं।
जो दर्श करें नाथ का, वे भव्य हैं सही॥
बाधा बिना बैठें सभी, निज निज के हि कोठे।
मुनिगण व आर्यिका व देव देवि असंख्ये॥ १०॥

नर पशु सभी निज निज के वैर भाव छोड़ के।
प्रभु का सुने उपदेश, रुचि से हाथ जोड़ के॥
प्रभु वीर का समवसरण, योजन सु एक था।
फिर भी असंख्य देव का, निवास वहां था॥ ११॥

अतिशय जिनेंद्र देव की, अवगाहना शक्ती।
जो भव्य हैं वे ही वहां, कर सकते हैं भक्ती॥
भव्यों के पुण्य से प्रभू का, श्रीविहार हो।
दुर्भिक्ष रोग शोक उपद्रव वहां न हो॥ १२॥

सब कर्म भूमियों में ये समवसरण बनें।
ये भूत भावि काल के अनन्त हैं गिनें॥

ये सार्व भौम नाथ की हैं धर्म सभायें।
इनको नमें वे निज को सर्व गुण से सजायें॥ १३॥

दोहा

जो तीर्थंकर को नमें, समवसरण पूजंत।
सकल 'ज्ञानमति' संपदा, वे पा लेत तुरंत॥ १४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातत्रैकालिकसर्वतीर्थंकरकेवलिसमवसरण-गंधकुटीभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं....।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जंबूद्वीप के, तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा, जिनधर्म जिनश्रुत साधु को॥
जो पूजते हैं भक्ति से, वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर, यहां पर कभी ना आवते॥

इत्याशीर्वादः।

[पूजा नं० २४]

सिद्ध पूजा

स्थापना—गीताछंद

इस प्रथम जंबूद्वीप में, जो जन्मते नर श्रेष्ठ हैं।
वे कर्म हन कर सिद्ध होते, वे प्रमुख परमेष्ठि हैं॥
परद्वीप से सुर आदि द्वारा, आ यहां से शिव गये।
उन सिद्ध का आह्वान कर, पूजें उन्हें धर निज हिये॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिसर्वस्थानात्सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिसर्वस्थानात्सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिसर्वस्थानात्सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टक—नरेंद्रछंद

सीतानदि को तीरथमय जल, पयसम मुनि मनहारी।
जन्म जरा मृति ताप तीन हर, धार करूँ हितकारी॥
जंबूद्वीप से सिद्ध हुए जो, होते हैं होवेंगे।
उनको मैं पूजूँ वे मुझको, सर्व सिद्धि देवेंगे॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिसर्वस्थानात्सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः जलं....।

कंचनद्रव सम कुंकुम केशर, भ्रमर समूह रमे हैं।
सिद्धों की अर्चा करने से, भव वन में न भ्रमें हैं॥जंबूद्वीप०॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिसर्वस्थानात्सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः चंदनं....।

दुग्ध सिंधु के फेन सदृश अति, उज्ज्वल अक्षत लाये।
अमृत सम पुंजों को सब, सिद्धों के निकट चढ़ायें॥जंबूद्वीप०॥ ३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिसर्वस्थानात्सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अक्षतं....।

जुही चमेली मल्ली चंपा, सुवरण पुष्प मंगाये।
घ्राण नयन प्रिय सिद्ध प्रभु को, पुष्पांजलि चढ़ायें॥जंबूद्वीप०॥ ४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिसर्वस्थानात्सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः पुष्पं....।

बरफी पेड़ा मोदक खाजे, पूरण पोली लाये।
क्षुधारोग हर सिद्धचक्र को, पूजन मध्य चढ़ाये॥जंबूद्वीप०॥ ५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिसर्वस्थानात्सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः नैवेद्यं....।

मणिमय दीप रतनमय ज्योती, दशदिश तम हरता है।
सिद्धगणों की करें आरती, मोह तिमिर नशता है॥जंबूद्वीप०॥ ६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिसर्वस्थानात्सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः दीपं....।

कालागरु चंदन मलयागिरि, धूप सुगंधित लेके।
दश दिश सुरभित करूं धूम से, धूप अगनि में खेके॥जंबूद्वीप०॥७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिसर्वस्थानात्सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः धूपं....।

एला केला सेव मौसम्बी, श्रीफल बहुफल लाये।
घ्राण नयन प्रीणन[१] सिद्धों को शिवफल हेतु चढ़ायें॥जंबूद्वीप०॥ ८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिसर्वस्थानात्सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः फलं....।

---

१. तृप्त करने वाले।

जल फल आदिक अर्घ संजोकर, उसमें रतन मिलाऊँ।
सिद्ध प्रभू को अर्घ चढ़ाकर, स्वयं सिद्ध पद पाऊँ॥
जंबूद्वीप से सिद्ध हुए जो, होते हैं होवेंगे।
उनको मैं पूजूँ वे मुझको, सर्व सिद्धि देवेंगे॥ ९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिसर्वस्थानात्सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

दोहा

प्रासुक मिष्ट पवित्र जल, क्षीर जलधि समश्वेत।
प्रभु पद धारा मैं करूँ, तिहुंजग शांति हेत॥ १०॥

शांतये शांतिधारा।

कमल केतकी पुष्प ले, पुष्पांजलि करंत।
इंद्र चक्रिपद पायकर, अनुपम सौख्य धरंत॥ ११॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

भूत भविष्यत काल के, वर्तमान के सिद्ध।
पुष्पांजलि कर पूजते, मिले सिद्धि नवनिद्धि॥ १॥

इवि मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

शंभुछंद

इन भरत और ऐरावत के, आरजखंड में षट्परिवर्तन।
चौथे हि काल में मुक्ती हो, नहिं अन्य काल में मुक्ति गमन॥
चौथे के जन्में पंचम में, शिवपद पा कोई नर इसविध।
उपसर्ग निमित छहकाल में भी, मुक्ती हो सबको जजूँ त्रिविध॥ १॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतैरावतार्यखंडयोः षट्कालेभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्व-सिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

कच्छा आदिक बत्तिस विदेह के, आर्यखंड में शाश्वत ही।
शिव प्राप्त करें नर पुंगव नित, वहां काल परावर्तन नाहीं॥
उन क्षेत्रों से जो सिद्ध हुये, होते हैं, होवेंगे आगे।
उन सबकी पूजा भक्ति करें, मेरे सब पाप शत्रु भागें॥ २॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ द्वात्रिंशत्विदेहक्षेत्रार्यखंडेभ्यः सिद्धपदप्राप्तप्राप्नुवत्प्राप्स्यत्सर्व-सिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

हैमवत हरि देव कुरू उत्तरकुरु रम्यक औ हैरण्यवतं।
इन छह में भोगभूमि मानी, जो जघन्य मध्यम औ उत्तम॥
निज इच्छा से कोई मुनि भी, उपसर्ग निमित से या कोई।
उन क्षेत्रों से मुक्ती पाते, सब सिद्ध जजूँ मन शुचि होई॥ ३॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ षट्भोगभूमिक्षेत्रेभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

इक सौ सत्तर हैं म्लेच्छ खंड, वहां ऋद्धि सहित मुनि जा सकते।
अथवा उपसर्ग निमित्त कोई, वहां ले जाकर मुनि को रखते॥
वहां केवल ज्ञान प्राप्त करके, शिव प्राप्त करें अगणित मुनिगण।
उन सब सिद्धों को पूजूँ मैं, मेरे भी प्रगटित हो गुणगण॥ ४॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थ सप्तत्यधिकशतम्लेच्छखंडेभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्व सिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

इस जंबूद्वीप के बीच सुमेरु, पर्वत तुंग कहाता है।
पृथ्वी पर दश हजार योजन, विस्तृत औ गोल कहाता है॥
पृथ्वी के भद्रशालवनयुत, इस गिरि से कूट गुफादिक से।
जो सिद्ध हुये होते होंगे, उन सबको पूजूँ भक्ती से॥ ५॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरोः भद्रशालवनकूटशिखरगुफादिसर्वस्थानेभ्यः सिद्धपद-प्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

हिमवन महाहिमवन निषधनील, रुक्मी शिखरी छह पर्वत से।
इन पर जो कूट भवन वन की, वेदी हैं उन सब स्थल से॥
जो सिद्ध हो चुके, होते हैं, आगे होंगे सब सिद्धों को।
मैं पूजूँ अर्घ चढ़ा करके, फिर निज में ही पाऊँ निज को॥ ६॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थहिमवदादिषट्कुलपर्वतानां शिखरकूटभवनादिभ्यः सिद्धपदप्राप्त-त्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

मेरू के चारों विदिशा में, गजदंत चार पर्वत सुंदर।
उन पर से सिद्ध हुये होते, होवेंगे जो भी उत्तम नर॥
उन सबको अर्घ चढ़ा करके, भव भव के दुःखों से छूटूँ।
निजआत्म सुधारस को पाकर, निजपरमातम सुख को भोगूँ॥ ७॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुर्गजदंतपर्वतेभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

पूर्वापर क्षेत्र विदेह मध्य, सोलह वक्षार गिरी मानें।
उन पर से जो नर सिद्ध हुये, होते हैं, होवेंगे मानें॥
उन सबको पूजूँ अर्घ लिये, वे सिद्धि वधू के स्वामी हैं।
भक्तों की सिद्धी में निमित्त, वे सबके अंतर्यामी हैं॥ ८॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थषोडशवक्षारपर्वतेभ्यः सिद्धपदप्राप्तप्राप्नुवत्प्राप्स्यत्त्रैकालिकसर्व-सिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

भरतैरावत बत्तीस विदेह, इन चौंतिस कर्म भूमियों में।
चौंतिस विजयार्धअचल मानें, त्रय त्रय कटनी हैं उन सब में॥
इन पर्वत से जो मुक्त हुये, होते हैं आज व होवेंगे।
उन सबको पूजूँ अर्घ लिये, वे मेरा कलिमल धोवेंगे॥ ९॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिगतचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतेभ्यः सिद्धपदप्राप्त-त्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

हैं नाभीगिरि हैमवत व हरी, रम्यक हिरण्यवत क्षेत्रों में।
ये चार अचल हैं ठीक बीच, उन भोग भूमि के क्षेत्रों में॥
उनसे जो मानव सिद्ध हुये, प्रायः परकृत उपसर्गों से।
उन सबको अर्घ चढ़ाऊं मैं, मेरे वांछित फलते इनसे॥ १०॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुर्नाभिगिरिभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं...।

नीलाचल से मेरु की तरफ, सीता के पूर्व-अपर तट पर।
निषधाचल से मेरु की ओर, सीतोदा पूर्व-अपर तट पर॥
ये चार यमकगिरि चित्र विचित्र, यमक औ मेघ नाम वाले।
इनसे जो सिद्ध हुये मानव, उनको पूजें शिवसुख पालें॥ ११॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुर्यमकगिरिभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

इन देवकुरु उत्तरकुरु में, सीता सीतोदा के तट पर।
दो-दो दिग्गज पर्वत मानें, ये आठ कहें सुर हैं इन पर॥
पद्मोत्तरनील, स्वस्तिक अंजन, औ कुमुद पलाश अवतंस रोचन।
इनसे जो मुक्त हुये मानव, उनकी पूजा से हो शोभन॥ १२॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थअष्टदिग्गजपर्वतेभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

सब कर्मभूमि चौंतिस में छह, खंडों में आर्यखंड इक है।
पण म्लेच्छखंड के मध्यम में, वृषभाचल एक एक गिरि हैं॥

इन चौंतिस पर्वत से अनंत, मुनि सिद्ध हुये होते होंगे।
उन त्रयकालिक सब सिद्धों को, पूजूँ वे मम भ्रम खोवेंगे॥ १३॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्वृषभाचलेभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

सीता सीतोदा के अंदर हैं, बीस सरोवर उन तट पर।
कांचनगिरि पांच पांच मानें, सब मिलकर दो सौ हैं सुंदर॥
उन पर शुक वर्ण सदृश सुर हैं, उन गिरि से सिद्ध हुये जो भी।
उन त्रय कालिक भी सिद्धों को, पूजूँ मम कर्म नशें सब भी॥१४॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थद्विशतकांचनगिरिभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं...।

उत्तर कुरु में है जंबुवृक्ष, औ देवकुरू में शाल्मलि है।
इन दोनों की बारह वेदी, जो चारों तरफी घेरे हैं॥
उनमें परिवारवृक्ष इक लख, चालिस हजार इक सौ उन्नीस।
उन स्थल से जो सिद्ध हुये, उन सबको पूजूँ नाय शीश॥ १५॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसपरिवारजंबूवृक्षशाल्मलिवृक्षेभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्व-सिद्धेभ्यः अर्घ्यं...।

गंगा सिंधू रोहित रोहीतास्या व हरित् हरिकांत नदी।
सीता सीतोदा नारी नरकांता सुवर्ण रुप कूला भी॥
रक्ता रक्तोदा ये चौदह नदियां निज निज परिवार सहित।
इन जलमय क्षेत्रों से मुक्ती, पाई उन सबको जजूँ स्वहित॥ १६॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थनिजनिजपरिवारनदीकुंडतोरणद्वारसहितगंगादिचतुर्दशनदीभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

पूर्वा पर क्षेत्र विदेह मध्य, बारह विभंग नदियां मानी।
ये क्षेत्र भेद में सीमासम, अकृत्रिम नदियां सरधानी॥
परिवार नदी अठवीस सहस, प्रत्येक नदी की तुम मानों।
उन जल से भी जो मुक्ति गये, उनकी पूजा कर दुख हानो॥ १७॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थनिजनिजपरिवारनदीकुंडतोरणद्वारसमेतद्वादशविभंगानदीभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

बत्तिस विदेह में गंगसिंधु, रक्ता रक्तोदा नदियां हैं।
चौदह हजार परिवार सहित, प्रतिक्षेत्र में दो दो नदियां हैं॥

इन जल स्थान से जो मुनिगण, उपसर्ग सहन कर सिद्ध हुये।
उन त्रयकालिक सब सिद्धों को, जजते मुझ सिद्धि निमित्त हुये ॥१८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थद्वात्रिंशत्विदेहसंबंधिनिजनिजपरिवारनदीकुंडतोरणद्वारसहितचतुः-षष्ठिगंगादिनदीभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं ....।

जो कर्म भूमि चौंतिस के, आर्यखंड में उपसमुद्र माने।
राजधानि से वार्धि तथा महानदी तरफ में ही माने॥
उन सब समुद्र से जो मुनिवर, उपसर्ग निमित्त से सिद्ध हुये।
उन सबको प्रणमूँ बार बार, वे मुझ पातकक्षय हेतु हुये॥ १९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्आर्यखंडगतचतुस्त्रिंशत्उपसमुद्रेभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं ....।

भरतैरावत दो क्षेत्रों में, कृत्रिम नग गुफा कंदरादिक।
तालाब नदी वापी कुल्या, कूपादि महासागर आदिक॥
निजरुचि से वा पर के निमित्त, इन स्थानों से जो सिद्ध हुये।
उन सब को अर्घ चढ़ाऊं मैं, वे सब मुझ सिद्ध निमित्त कहे॥२०॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभरतैरावतमध्ये कृत्रिमपर्वतनदीगुफाकंदराद्रहनदीवापीकुल्याकूप-महासागरआदिस्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं ....।

जंबूद्वीप का परकोटा, अठयोजन तुंग रत्न निर्मित।
तल में बारह मधि में सुआठ, ऊपर चउ योजन से संयुत॥
इसके ऊपर मधि में वेदी, के उभय पार्श्व में वन खंड हैं।
इस परकोटे से सिद्ध हुये, उनको मम शिरसा वंदन है॥ २१॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपजगतीतत्रस्थचतुर्महाद्वारस्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं ....।

कोई नर साढ़े तीन हाथ, कुछ सवा पांच सौ धनुष तुंग।
नर शिव पाते जघन्य उत्तम, मध्यम भी मधि की ऊंचाई युत॥
इन अगणित अवगाहन संयुत, जो सिद्ध हुये उन त्रयकालिक।
सब सिद्धों को नितप्रति पूजूँ, मेरी आत्मा हो स्वयं सिद्ध॥ २२॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थजघन्यमध्यमोत्तमशरीरावगाहनाभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्व-सिद्धेभ्यः अर्घ्यं ....।

कोई मानव कुछ अधिक आठ, वर्षों की जघन आयु लेकर।
कोई इक कोटी पूर्व वर्ष, की उत्तम आयु को लेकर॥

मध्यम के भेद मध्यगत सब, इन आयु से जो सिद्ध हुये।
उन सबको पूजूँ अर्घ लिये, अपमृत्यु टले बस इसीलिये॥ २३॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थजघन्यमध्यमोत्तमआयुर्भ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

कोई नर स्त्रीभाववेद, व नपुंसक भाववेद लेकर।
कोई नर पुरूष भाववेदी, ये शिवपद पाते तीनों नर॥
पर निश्चित ही हो द्रव्य पुरुष, सिद्धान्त यही बतलाता है।
सम विषमवेद से सिद्ध हुये, उन पूजूँ वे सुखदाता हैं॥ २४॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थभावगतविषमसमवेदधारकद्रव्यपुरुषवेदेभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

कोई मुनिवर पद्मासन से, या खड्गासन से सिद्ध बनें।
सिद्धी का आसन अन्य नहीं, यह सब सिद्ध ग्रंथ वर्णे॥
इन सबके भी आकार वहां, आत्मा प्रदेश से बन जाते।
हो देह नष्ट फिर भी वैसे, मानें उन पूजूँ मन लाके॥ २५॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपद्मासन-खड्गासनेभ्यः सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

बत्तिस विदेह में कर्मभूमि, शाश्वत वहँ काल चतुर्थ सदा।
भरतैरावत में छहकालों, का परिवर्तन होता रहता॥
अव सर्पिणी चौथे काल तथा, उत्सर्पिणी काल तीसरे से।
हुंडावसर्पिणी तिसरे में, शिव पहुंचे जजूँ उन्हें रुचि से॥ २६॥
ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थद्वात्रिंशत्विदेहक्षेत्रेभ्यः संततसिद्धपदप्राप्तेभ्यः भरतैरावतक्षेत्रसंबंधिचतुःकालेभ्यः कदाचित् चतुर्थकालजन्मप्राप्तमनुष्यपंचमकालेभ्यः हुंडावसर्पिणीनिमित्ततृतीयकालेभ्यश्चसिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

छह माह आठ समयों में छह सौ, आठ मुनी शिव जाते हैं।
इस तरह अनंतानंत भूत, भावी नर सिद्ध कहाते हैं॥
उन सभी सिद्ध परमेष्ठी की, पूजा अर्चा स्तुती करूं।
निज आत्म सुधारस पी करके, निज में ही निज को प्रगट करूं॥ २७॥
ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपस्थअष्टसमयाधिकषण्मासात् अष्टोत्तरषट्शतमुनिसिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

तीर्थंकर होकर पंच कल्याणक, त्रय द्वय पा बहु सिद्ध हुये।
चक्रेश्वर हलधर कामदेव, उत्तम पद पा बहु सिद्ध हुये॥

सामान्य मनुज अगणित अनत , सब कार्य नष्ट कर सिद्ध हुये।
उन सब त्रैकालिक सिद्धों को , मैं जजूँ सदा धर भक्ति हिये॥ २८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थतीर्थंकरचक्रवर्तीबलभद्रकामदेवादिपदप्राप्तसामान्यमनुष्यादित्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं....।

सब गिरि वन पर्वत गुफा नदी , सरवर तरु कूप तड़ागों से।
तलघर नभ आंगन छिद्र बिलादिक, जल थल के सब भागों से॥
मेरु की चूलिका से जहां से है , बालमात्र अंतर ऊपर।
उस जगह मेरु की गुफा मध्य से , सिद्ध हुये पूजूँ रुचिधर॥ २९॥

ॐ ह्रीं मेरुचूलिकागिरिपर्वतगुफानदीसरोवरवृक्षकूपतडागछिद्रबिलादिसुरंगजलस्थलादिसर्वस्थानात्सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं.....।

दोहा

प्रथम द्वीप से सिद्ध पद , प्राप्त करें जो भव्य।
उन सबको पूर्णार्घ्य से , जजूँ मिले पद नव्य॥ ३०॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपात् सिद्धपदप्राप्तत्रैकालिकसर्वसिद्धेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

त्रिभंगी छंद

जय जय सब सिद्धा , कहे अनंता , लोक शिखर पर राज रहे।
जय अष्ट गुणों युत , नंतगुणों युत , फिर भी किंचित पास न है॥
जय नित्य निरंजन , भवि आनंदन , मुनि मन कमल विकास करें।
जय त्रिभुवन के गुरु, गुणमणि से गुरु, भविजन ही तुम ध्यान धरें॥१॥

नाराच छंद

नमो नमो अनंत सिद्ध , चक्र भूत काल के।
नमो नमो अनंत सिद्ध , चक्र भाविकाल के॥
नमो नमो सुवर्तमान , के अनंत सिद्ध हैं।
नमोऽस्तु जबूंद्वीप से , अनंत नंत सिद्ध हैं॥ २॥

उचारते जो भक्ति से , प्रसिद्ध सिद्ध नाम को।
जपे सदा हि भक्ति से, लहें समस्त सिद्धि को॥

अभूतपूर्व सिद्ध भी, अनादि से प्रसिद्ध हैं।
अनंत काल तक भी होयेंगे भवीक सिद्ध हैं॥ ३॥

निगोद जीव से भि लेय कर अनंत जीव हैं।
समस्त शक्ति रूप से, विशुद्ध सिद्ध ही रहें॥
परन्तु व्यक्त रूप से, प्रसिद्ध सिद्ध जो हुये।
स्वजन्म मृत्यु नाश वे, अंनत सौख्य पा लिये॥ ४॥

समस्त अंतरातमा, निजात्म तत्त्व को लहें।
विशुद्ध सिद्ध मैं स्वयं, स्वभाव से हि श्रद्धहैं॥
अंनत गुण समुद्र में न दोष का भि लेश है।
अंनत ज्ञान दर्श सौख्य, वीर्य ये विशेष हैं॥ ५॥

निजात्म शुद्ध ध्यावते हि, आतमा विशुद्ध हो।
अशुद्ध जो गिने स्व को, वो सर्वदा न शुद्ध हो॥
उभै नयों को आश्रये, वो शुद्ध आत्म अनुभवे।
तथापि व्यवहार से, चरित्र पालता रहे॥ ६॥

प्रभो! तुम्हीं त्रिलोक वंद्य, सिद्ध हो प्रसिद्ध हो।
प्रभो! तुम्हीं शतेन्द्र वंद्य, परम ब्रह्म सिद्ध हो॥
प्रभो! तुम्हीं को ध्याय के, अनंत सिद्ध हो गये।
अनंत होयंगे तुम्हीं को, ध्याय अन्य विधि न है॥ ७॥

घत्ता

जय सिद्धि वधूवर, जग परमेश्वर, परमपिता रक्षा कीजे।
मुझ 'ज्ञानमती' को, निजपद दे दो, फेर भले कुछ मत दीजे॥ ८॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थत्रैकालिकसर्वअनंतानंतसिद्धेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जम्बूद्वीप के, तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा, जिन धर्म जिनश्रुत साधु को॥
नित पूजते हैं भक्ति से, वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर, यहां पर कभी ना आवते॥

इत्याशीर्वादः।

बड़ी जयमाला

262

सोरठा

चिन्मय ज्योति स्वरूप, परमात्मा होते यहीं।
नमूँ नमूँ चिद् रूप, चिंतामणि चैतन्य को॥ १॥

शंभुछंद

जय जय अर्हंत देव जिनवर, जय जय छ्यालिस गुण के धारी।
जय समवसरण वैभव श्रीधर, जय जय अनंत गुण के धारी॥
जय जय जिनवर केवल ज्ञानी, गणधर अनगार केवली सब।
जय गंधकुटी में दिव्य ध्वनी, सुनते असंख्य सुर नर पशु सब॥ २॥

इन चौंतिस कर्म भूमियों में, केवल ज्ञानी होते रहते।
फिर कर्म अघाती भी हनकर, वे सिद्धि वधू वरते रहते॥
ऐसे ये सिद्ध अनंत हुये, हो रहे और भी होवेंगे।
जय जय सब सिद्धों की वे मुझ सिद्धि में निमित्त होवेंगे॥ ३॥

निज साम्य सुधारस आस्वादी, मुनिगण जहँ नित्य विचरते हैं।
आचार्य प्रवर चउविध संघ के, नायक जहँ मार्ग प्रवर्तें हैं॥
दीक्षा शिक्षा देकर शिष्यों, पर अनुग्रह निग्रह भी करते।
प्रायश्चित देकर शुद्ध करें, बालकवत् पोषण भी करते॥ ४॥

गुरु उपाध्याय मुनि अंग पूर्व, शास्त्रों का वाचन करते हैं।
चउविध संघों को यथायोग्य, श्रुत का अध्यापन करते हैं॥
मिथ्यात्व तिमिर से मार्ग भ्रष्ट, जन को सम्यक् पथ दिखलाते।
जो परंपरा से गुरुमुख से, पढ़ते वे निज निधि को पाते॥ ५॥

निज आत्म साधना में प्रवीण, अतिघोर तपस्या करते हैं।
वे साधू शिवमारग साधें, बहु ऋद्धि सिद्धि को वरते हैं॥
विक्रिया ऋद्धि चारण ऋद्धी, सर्वौषधि ऋद्धी धरते हैं।
अक्षीण महानस ऋद्धी से, सबजन को तर्पित करते हैं॥ ६॥

इन चौंतिस कर्म भूमियों में, जन्में ही मुनि बन सकते हैं।
फिर गगन गमन ऋद्धी बल से, सर्वत्र भ्रमण कर सकते हैं॥
वे ढाई द्वीप तक ही जाते, उससे बाहर नहिं जा सकते।
नर जन्म व मुक्ती मार्ग यहीं, यहां से ही सिद्धि पा सकते॥ ७॥

तीर्थंकर धर्म चक्रधारी, जिन धर्म प्रवर्तन करते हैं।
इन कर्म भूमियों में ही वे, शिव पथ का वर्तन करते हैं॥
जय जय इस जैन धर्म की जय, यह सार्वभौम है धर्म कहा।
सब प्राणिमात्र को अभयदान, देवे सब सुख की खान कहा॥ ८॥

तीर्थंकर के मुख से खिरती, वाणी सब जन कल्याणी है।
गणधर गुरु उसको धारण कर, सब ग्रंथ रचें जिनवाणी है॥
गुरु परंपरा से अब तक भी, यह सारभूत जिनवाणी है।
इसकी जो पूजा भक्ती करें, उनके भव भव दुख हानी है॥ ९॥

इस जंबूद्वीप की आठ सहस, अरु चार शतक चौबिस प्रतिमा।
उनचास सहस चउ सौ चौंसठ, ये मध्यलोक की जिन प्रतिमा॥
नवसौ पचीस कोटि त्रेपन अरु, लाख सत्ताइस सहस कहीं।
नवसौ अड़तालिस जिन प्रतिमा, इन सबको मैं नित नमूँ सही॥ १०॥

व्यंतर ज्योतिष के असंख्यात, जिनगृह की जिन प्रतिमायें हैं।
प्रति जिनगृह इक सौ आठ, एक सौ आठ रहें प्रतिमायें हैं॥
इस जंबूद्वीप के अकृत्रिम, जिन मंदिर अट्ठत्तर ही हैं।
जिनमंदिर शाश्वत चार शतक, अट्ठावन मध्यलोक में हैं॥ ११॥

ये सात करोड़ बहत्तर लख, जिनमंदिर भवन वासि के हैं।
चौरासी लाख सत्तानवे, हजार तेइस वैमानिक के हैं॥
अठ कोटि सुछप्पन लक्ष सत्तानवे, सहस चार सौ इक्यासी।
सब जिनगृह व्यंतर ज्योतिष के, उन संख्यातीत कही राशि॥ १२॥

इन कर्म भूमि में अगणित भी, कृत्रिम जिनगृह प्रतिमायें।
सुरपति चक्री हलधर आदिक, नर सुरकृत वंदत सुख पाएं॥
जो प्रतिमा प्रातिहार्य संयुत, अरु यक्ष यक्षिणी से युत हैं।
निज चिह्न व मंगल द्रव्य सहित वे अर्हंतों की प्रतिकृति हैं॥ १३॥

सब प्रातिहार्य चिह्नादि रहित, प्रतिमा सिद्धों की कहलाती।
अथवा अकृत्रिम प्रतिमायें, सब सिद्धों की मानी जाती॥
आचार्य उपाध्याय साधु, की प्रतिमायें कर्म भूमि में हैं।
कुछ पंचपरमेष्ठी नव देवों, की प्रतिमायें भी निर्मित हैं॥ १४॥

अर्हत सिद्ध आचार्य उपाध्याय, साधु पंच परमेष्ठी हैं।
जिनधर्म जिनागम जिनप्रतिमा, जिनगृह सब मिल नवदेव कहें॥
ये होते कर्मभूमियों में, हो चुके अनंतों होवेंगे।
इन सबको वंदन बार बार, भक्तों के कलिमल धोवेंगे॥ १५॥

इन ढाई द्वीपों से बाहर बस शाश्वत जिनगृह जिनप्रतिमा।
नहिं पंच परमगुरु आदि वहां, नहिं शिवपथ नहिं नर गमन वहां॥
सब इंद्र इंद्राणी देव देवियां, भक्ती से वहां जाते हैं।
वंदन पूजन अर्चन करके, अतिशायी पुण्य कमाते हैं॥ १६॥

फिर भी इन कर्म भूमियों में, जन्मे मानव सुकृतशाली।
जो रत्नत्रय का साधन कर, शिव प्राप्त करें महिमाशाली॥
तीर्थंकर आदि महापुरुषों को, सुरपति भी वंदन करते।
कब मिले मनुजभव तप धारें, शिव लहें भावना मन धरते॥ १७॥

इन कर्म भूमि की महिमा से ही, जंबूद्वीप महान् कहा।
निज आत्म सुधारस आस्वादी, मुनिगण करते हैं वास यहां॥
बहिरात्म अवस्था छोड़ अंतरात्मा बन नर पुरुषार्थ करें।
परमानंदामृत आस्वादी, परमात्मा बन शिवनारि वरें॥ १८॥

हे नाथ ! अनादी से लेकर अब तक भी अनंतों कालों तक।
चारों गति में मैं घूम रहा, दुख सहा अनंतों कालों तक॥
अब धन्य हुआ तुम भक्ति मिली, सम्यग्दर्शन को प्राप्त किया।
बस रत्नत्रय को पूर्ण करो, इस हेतू से ही शरण लिया॥ १९॥

जो कुछ चारित्र धरा मैंने, वह निरतिचार निर्दोष बने।
हो अंत समाधी से मरना, निज के ही गुण हों प्राप्त घने॥
हों आधि व्याधि उपसर्ग भले ही, नाथ! आप से भक्ति रहे।
हे नाथ ! आपके ही चरणों में, मन मेरा अनुरक्त रहे॥ २०॥

जय गोमटेश जय बाहुबली, जिनके चरणों के सानिध में।
यह जंबूद्वीप मन में आया, जो आज बना हस्तिनापुर में॥
जय जय सुमेरु पर्वत कृत्रिम, चौरासी फुट ऊंचा सुन्दर।
सोलह जिनमंदिर जिनप्रतिमा से, शोभ रहा अतिशय मनहर॥ २१॥

इसके दर्शन से पाप टलें, हो पुण्य प्रगट जग में ख्याती।
जन मनोकामना जो करते, वह शीघ्र सफल देखी जाती॥
जय जय जंबूतरु शाल्मलि तरु, के जिनमंदिर जिनप्रतिमायें।
जय जंबूद्वीप के जिनमंदिर, जय उनमें राजित प्रतिमायें॥
जय देवभवन के इक सौ तेइस, जिनगृह जिनप्रतिमाओं की।
जो रुचि से यहां दर्श करते, वे वंदें अकृत जिनालय भी॥ २२॥

जय जय शाश्वत मेरू पर्वत, जय जंबूद्वीप के जिनमंदिर।
जय सुर भवनों के जिनमंदिर, जय उनमें जिनप्रतिमा मनहर॥
चारण ऋद्धीश्वर ऋषिगण भी, जहां वंदन करने जाते हैं।
शुद्धात्मा के अनुरागी भी, वहां निज आत्मा को ध्याते हैं॥ २३॥

जय जय अर्हंत सिद्ध सूरी, जय उपाध्याय साधूगण की।
जय जय जिनधर्म जिनागम की, जय जय जिनबिंब जिनालय की॥
जय जय नवदेव तीनकालिक, जय चिन्मय ज्योति निरंजन की।
जय जय त्रैलोक्य अभयदायक, जय जय जय श्रीजिनशासन की॥ २४॥

घत्ता

जय जय तीर्थंकर, विश्व हितंकर, धर्मचक्रधर तुमहिं नमूँ।
जय 'ज्ञानमती' को, केवल कर दो, निजगुण भर दो नित प्रणमूँ॥ २५॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः
जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीताछंद

जो भव्य जम्बूद्वीप के तीर्थंकरों को तीर्थ को।
जिन चैत्य चैत्यालय तथा, जिन धर्म जिनश्रुत साधु को॥

नित पूजते हैं भक्ति से, वे आत्मनिधि को पावते।
फिर 'ज्ञानमति' को पूर्णकर, यहां पर कभी ना आवते॥

इत्याशीर्वादः।

दोहा

ज्येष्ठ सुदी श्रुत पंचमी, मंगल समय प्रभात।
वीर संवत् पच्चीस सौ, बारह शुभ अवदात॥ १॥

जंबूद्वीप विधान यह, महामृत्युञ्जय नाम।
गणिनी ज्ञानमत्यार्यिका, पूर्ण किया सुखधाम॥ २॥

जब तक श्री जिनधर्म है, तब तक रहे विधान।
अतिशायी यह मेरु भी, तब तक रहे महान्॥ ३॥

प्रशस्ति

अकृत्रिम मेरु सुदर्शन को, शत बार नमन शत बार नमन।
कृत्रिम इस मेरु सुदर्शन को, शत बार नमन शत बार नमन॥
जिनका है सार्वभौम शासन, सब जीव दयामय धर्म एक।
उन वीरप्रभु को नमस्कार, उनकी भक्ती ही शरण एक॥ १॥

शुभ संवत् वीर निर्वाण चौबिस सौ, अट्ठत्तर थी घड़ी धन्य।
आचार्य देशभूषण गुरु से, मैं ब्रह्मचर्य व्रत लिया धन्य॥
थी शरदपूर्णिमा जन्म तिथि, उस ही दिन गृह परित्याग किया।
ईस्वी सन् उन्नीससौ बावन में, अठरह वर्ष को पूर्ण किया॥ २॥

श्रीमूलसंघ में कुंदकुदं, आम्नाय शारदागच्छ कहा।
गण बलात्कार माना इसमें, सब मुनियों को वंदना महा॥
इस कलियुग में चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शांतिसागर।
उनके इक शिष्य हुए सूरी, जिनका था नाम पायसागर॥ ३॥

इनके सुशिष्य जयकीर्ति हुए, इनके हैं शिष्य देशभूषण।
आचार्यरत्न जग में प्रसिद्ध, ये ख्यात विश्व में जगभूषण॥
संवत्[1] चौबिससौ उन्यासी, चांदनपुर में इन गुरुवर ने।
क्षुल्लिका वीरमति किया मुझे, शुभ चैत्रबदी एकम तिथि में॥ ४॥

चौबिस सौ इक्यासी दक्षिण, जा शांतिसिंधु के दर्श किए।
जब इनने यम संन्यास लिया, निज पट्ट वीरसागर को दिए॥
गुरु आज्ञा से जयपुर आकर, गुरु वीरसिंधु का दर्श किया।
फिर माधोराजपुरा में ही, गुरु ने दीक्षा आर्यिका दिया॥ ५॥

मुझको महाव्रत दे 'ज्ञानमती', कर जीवन मेरा धन्य किया।
स्वाध्याय पठन-पाठन करके, मैंने कुछ ज्ञानाभ्यास किया॥
चौबिससौ तिरासी संवत् में, गुरुवर की समाधी होने पर।
उन प्रथम शिष्य शिवसागर मुनि, आचार्य हुए चउसंघ हितकर॥ ६॥

चौबिससौ नवासी संवत् में, आर्यासंघ पृथक विहार किया।
सम्मेद शिखर वंदन करके, फिर श्रवणबेल गुल गमन किया॥

---

१. यहां संवत् से वीर निर्वाण संवत् लिया है

चौबिससौ इक्यानवे संवत्, श्री बाहुबली का ध्यान किया।
इस मध्य लोक के अकृत्रिम, जिनमंदिर का शुभ भान हुआ॥ ७॥

उस ही निमित्त से आज हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप बना।
राजा श्रेयांस ने स्वप्न में देखा, मेरु यहां साकार बना॥
यह कैसा स्वर्णिम योग अहो ! इस ही नगरी में रचना का।
नित याद रहेगा वृषभदेव, आहारदान अरु दाता का॥ ८॥

संवत् पचीससौ दो मैंने, मध्यलोक जिनगृह पूजा।
इन्द्रध्वज नाम विधान रचा, इस सम नहिं अन विधान दूजा॥
संवत् पचीससौ आठ में जम्बूद्वीप ज्ञान ज्योती निकली।
दिल्ली से धर्म प्रभावना हित, बहु जैनधर्म को विजय मिली॥ ९॥

भारत की प्रधानमंत्री इन्द्रा गांधी के कर कमलों से।
उन्नीससौ बियासी चार जून, को हुआ प्रवर्तन वैभव से॥
पूरे भारत में तीन वर्ष, तक इसका भ्रमण अपूर्व हुआ।
बहु राजनीति नेताओं ने, इसका स्वागत भरपूर किया॥१०॥

सर्वत्र अहिंसा धर्म एकता, का प्रचार सौहार्द प्रेम।
बहु जैन अजैनों ने मिलकर, स्वागत कर धारे व्रत व नेम॥
संवत् पचीससौ ग्यारह शुभ, वैशाख सुदी अष्टमी तिथि के।
सन् अट्ठाईस मई उन्नीससौ, पच्चासी में ज्योती ये॥११॥

नरसिंहराव रक्षा मंत्री ने, स्थाई की हस्तिनापुर में।
यह ज्ञानज्योति प्रज्वलित अखंडित, की जो मान्य हुई जग में॥
इस जम्बूद्वीप जिनप्रतिमाओं का, आदिनाथ प्रतिमा का तब।
हुआ पंचकल्याणक शुभ वैशाख, सुदी अष्टमी से बारस तक॥ १२॥

प्रत्येक देश के नर नारी, जो ज्ञान ज्योति में इन्द्र बने।
सबने मेरू पर चढ़ करके, अभिषेक किया हो मुदित घने॥
इस जम्बूद्वीप को देख सभी, जन गद गद हो जय जय बोले।
सब स्वयं सिद्ध प्रतिमाओं के, दर्शन कर मन कपाट खोले॥ १३॥

थी बहुत दिनों से मन उमंग, मैं जम्बूद्वीप विधान रचूँ।
इस जम्बूद्वीप में जितने भी हों, वंद्य पुरुष सबको हि यजूँ॥

यह मनोकामना पूर्ण हुई, जब शुभ मंगल बेला आई।
शुभ ज्येष्ठ सुदी पंचमी जिसे, श्रुतपंचमी से सबने गाई॥ १४॥

ईस्वी सन् उनीससौ छयासी, संवत् पचीससौ बारह में।
यह विधान रचना पूर्ण हुई, बहु सरस मधुर शुभ काव्यों में॥
इसमें चौबिस पूजा व अर्घ हैं, एक हजार आठ सुन्दर।
पूर्णार्घ सताइस जयमाला, पच्चीस बनी हैं जन मनहर॥ १५॥

अपमृत्यु हरण में यह विधान, सर्वोत्तम है निश्चित समझो।
इसलिए महामृत्युंजय भी यह, अपर नाम इसका समझो॥
धवला[1] को इस विधान को भी, करके शिविका में विराजमान।
शोभा यात्रा उत्सव करके, भक्तों ने किया पूजा विधान॥ १६॥

अतिशायि मेरु सुदर्शन के, दर्शन से ईप्सित फलते हैं।
ये कल्पवृक्ष महावीर प्रभू, सब मनरथ पूरे करते हैं॥
वृषभेश शांति कुंथू अर जिन, भरतेश बाहुबलि गुण गाये।
मणिभद्र अनावृत यक्ष स्थल की, रक्षा करके चमकाये॥ १७॥

जो अष्टसहस्री ग्रन्थ व मूलाचार व्याकरण आदि शास्त्र।
अनुवाद किया कुछ लिखी पुस्तकें, जो हैं इक सौ तीस मात्र॥
श्री कुंदकुंद कृत नियमसार, प्राभृत की संस्कृत टीका मैं।
स्याद्वाद चन्द्रिका नाम रची, अनुवाद किया निज भाषा में॥ १८॥

आर्यिका रत्नमति माताजी, रहिं तेरह वर्ष मेरे संघ में।
मेरी रचनायें देख देख, हर्षित होती थीं बहु मन में॥
यहां मेरु प्रतिष्ठा को देखा, होकर अशक्त भी साथ दिया।
इस ज्ञानज्योति के वर्तन की, महती प्रभावना देख लिया॥ १९॥

निज क्षीण देह को देख यहीं, विधि से समाधि को ग्रहण किया।
थी माघ वदी नवमी पंद्रह, जनवरी देह को त्याग दिया॥
संवत् पचीस सौ ग्यारह में, इस पंचकल्याणक से पहले।
ये संयतिका स्वर्गस्थ हुईं, इन कीर्ति सदा जग में फैले॥ २०॥

---

१. षट्खंडागम ग्रंथ धवला टीका सहित की प्रथम पुस्तक को

जयशील रहें ये मम जननी, इनके ही सत्संस्कारों से।
वय अठरह वर्ष में ही मैंने, गृह त्याग दिया पुरुषार्थों से॥
जयशील रहें गुरुवर्य देशभूषण आचार्य रत्न जग में।
जिनके अवलंबन से मुझको, रत्नत्रय निधी मिली क्षण में॥ २१॥

जयशील रहें आचार्य शांतिसागर चरित्रचक्री यतिवर।
जयशील रहें उन पट्टशिष्य आचार्य वीरसागर गुरुवर॥
जयशील रहें उन पट्ट शिष्य, शिवसागर सूरि सदा जग में।
जयशील रहें ये वर्तमान, आचार्य धर्मसागर जग में॥ २२॥

जयशील रहें ये अभयमती, आर्यिका शिवमती भी जग में।
जयशील ये जंबूद्वीप सदा, स्थायी रहे हस्तिनापुर में॥
यह वीरज्ञानोदय ग्रन्थ माला, अरु सम्यग्ज्ञान पत्रिका भी।
आचार्य वीरसागर संस्कृत, सद् विद्यापीठ रहें थिर भी॥ २३॥
जयशील दिगम्बर जैन त्रिलोक, शोध संस्थान रहे जग में।
इसके सब कार्य सुकर्तागण, जय लहें समृद्धि करें जग में॥
ब्रह्मचारी मोतीचन्द रवीन्द्र-कुमार माधुरी तीनों ही।
चिरकाल जियें गुरु की आज्ञा, पालें प्रभावना करें सही॥ २४॥

दोहा

जब तक रवि शशि जगत् में, तब तक सौख्य निधान।
जंबूद्वीप विधान यह, करे जगत् कल्याण॥ २५॥

इति जंबूद्वीपविधानप्रशस्तिः।

जैनं जयतु शासनम्।

आरती

ॐ जय जम्बूद्वीप जिनं , स्वामी जय जम्बूद्वीप जिनं।
इसके बीचोंबीच सुशोभित , स्वर्णाचल अनुपम ॥ॐ जय० ॥

जम्बूद्रुम से सार्थक , जम्बूद्वीप कहा ।स्वामी०
मणिमय नग चैत्यालय-२ , से युत शोभ रहा ॥ॐ जय० ॥ १ ॥

मेरु सुदर्शन पूर्व अपर में , बत्तिस हैं नगरी ।स्वामी०
तीर्थंकर की सतत जहां पर-२ , दिव्य ध्वनी खिरी ॥ॐ जय० ॥ २ ॥

सिद्धकूट अरु सुरगृह में भी , जिनप्रतिमा शाश्वत ।स्वामी०
ऋद्धि सहित ऋषि वंदन करके-२ , पीते परमामृत ॥ॐ जय० ॥ ३ ॥

सर्व केवली तीर्थंकर अरु , परमेष्ठी होते ।स्वामी०
इस ही भूपर जन्में-२ , अरु शिव भी पहुँचे ॥ॐ जय० ॥ ४ ॥

इसी हेतु यह द्वीप जगत में , पावन पूज्य कहा ।स्वामी०
तीर्थंकर जन्माभिषेक भी-२ , करते इन्द्र जहां ॥ॐ जय० ॥ ५ ॥

हंस्तिनागपुर में यह रचना , वैभव पूर्ण बनी ।स्वामी०
ज्ञानमती की अमरकृती यह-२ , सुन्दर सौख्य घनी ॥ॐ जय० ॥ ६ ॥

अठसत्तर जिनगेह अकृत्रिम , अतिशय युत शोभें ।स्वामी०
लहें "माधुरी" क्रम से शिवपुर-२ , जो जिनवर पूजें ॥ॐ जय० ॥ ७ ॥

भजन

श्री जम्बूद्वीप विधान, करें जन आन, मान जो प्राणी,
वे पावें शिव कल्याणी।
तीनों लोकों में मध्यलोक, उसमें थोड़ा-सा मनुजलोक।
संख्यातीते नर हुए वहां शिवगामी, वे पावें शिव कल्याणी॥ १॥

सब में पहला है जंबूद्वीप, जो वन सागर युत है सजीव।
जिनबिम्बों से पर्वत की छटा सुहानी, वे पावें शिव कल्याणी॥ २॥

बीचों बीच मेरु सुदर्शन है., सोलह चैत्यालय युत वन हैं।
जन्माभिषेक प्रभु पांडुकशिला महानी, वे पावें शिव कल्याणी॥ ३॥

पूरब पश्चिम में हैं विदेह, जहां दिव्यध्वनि खिरती सदैव।
सीमंधर स्वामी की हितकारी वाणी, वे पावें शिव कल्याणी॥ ४॥

हस्तिनापुरी में यह रचना, है बनी सौम्य सुन्दर सुमना।
श्री ज्ञानमती माता की अमिट निशानी, वे पावें शिव कल्याणी॥ ५॥

इसमें जो प्रतिमा राज रहीं, हैं स्वयं सिद्ध शाश्वत जिनकी।
दर्शन कर संचित पापराशि हो हानी, वे पावें शिव कल्याणी॥ ६॥

जो नर यह पाठ रचाते हैं, भव भव में सुख पा जाते हैं।
नहिं रहे अशान्ती अपमृत्यु की कहानी, वे पावें शिव कल्याणी॥ ७॥

है सतत प्रभो मेरी इच्छा, बन जाऊं तुम मम दो शिक्षा।
यह कहे "माधुरी" हो जावे भवहानी, वे पावें शिव कल्याणी॥ ८॥

विधान की रचयित्री गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी की पूजन

—आर्यिका चन्दनामती

अथ स्थापना

पूजन करो जी,

श्री गणिनी ज्ञानमती माताजी की पूजन करो जी।
जिनकी पूजन करने से अज्ञान तिमिर नश जाता है।
जिनकी दिव्य देशना से शुभ ज्ञान हृदय बस जाता है॥
उनके श्री चरणों में आह्वानन स्थापन करते हैं।
सन्निधीकरण विधीपूर्वक पुष्पांजलि अर्पित करते हैं॥

पूजन करो जी,

श्री गणिनी ज्ञानमती माताजी की पूजन करो जी॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री ज्ञानामती माताजी अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्री ज्ञानामती माताजी अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्री ज्ञानामती माताजी अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अष्टक

ज्ञानमती जी नाम तुम्हारा, ज्ञान सरित अवगाहन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है॥
मुझ अज्ञानी ने माँ जब से, तेरी छाया पाई है।
तब से दुनियाँ की कोई छवि, मुझको लुभा न पाई है॥
ज्ञानामृत जल पीने हेतू, तव पद में मेरा मन है॥
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीज्ञानामतीमाताजी जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन और सुगंधित गंधों की वसुधा पर कमी नहीं।
लेकिन तेरी ज्ञान सुगंधी से सुरभित है आज मही॥
उसी ज्ञान की सौरभ लेने को, आतुर मेरा मन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीज्ञानामतीमाताजी संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

जग के नश्वर वैभव से मैनें शाश्वत सुख था चाहा।
पर तेरे उपदेशों से वैराग्य हृदय मेरे भाया॥
अक्षय सुख के लिये मुझे तेरा प्रवचन ही साधन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्रीज्ञानामतीमाताजी अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कामदेव ने जिन बाणों से जब युग को था ग्रसित किया।
तुमने अपनी कोमल काया लघुवय में ही तपा दिया॥
इसीलिए तव पद में आकर शान्त हुआ मेरा मन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्रीज्ञानामतीमाताजी कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मानव सुन्दर पकवानों से अपनी क्षुधा मिटाते हैं।
लेकिन उनके द्वारा भी नहिं भूख मिटा वे पाते हैं॥
आत्मा की संतृप्ति हेतु तव वाणी मेरा भोजन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्रीज्ञानामतीमाताजी क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युत के दीपों से जग ने गृह अन्धेर मिटाया है।
ज्ञान का दीपक लेकर तुमने अन्तरंग चमकाया है॥
घृत का दीपक लेकर माता हम करते तव प्रणमन हैं।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है॥ ६॥

ॐ ह्रीं श्रीज्ञानामतीमाताजी मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों ने ही अब तक मुझको यह भव भ्रमण कराया है।
तुमने उन कर्मों से लड़कर त्याग मार्ग अपनाया है॥
धूप जलाकर तेरे सम्मुख हम करते तव पूजन हैं।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है॥ ७॥

ॐ ह्रीं श्रीज्ञानामतीमाताजी अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कितने खट्टे-मीठे फल को मैंने अब तक खाया है।
तुमने मां जिनवाणी का अनमोल ज्ञानफल खाया है॥
तव पूजनफल ज्ञाननिधी मिल जावे यह मेरा मन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है॥ ८॥

ॐ ह्रीं श्रीज्ञानामतीमाताजी मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पिच्छी कमण्डलुधारी माता नमन तुम्हें हम करते हैं।
अष्ट द्रव्य का थाल सजाकर अर्घ्य समर्पण करते हैं॥
युग की पहली ज्ञानमती के चरणों में अभिवन्दन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है॥ ९॥

ॐ ह्रीं श्रीज्ञानामतीमाताजी अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शेर छंद

हे मां तू ज्ञान गंग की पवित्र धार है।
तेरे समक्ष गंगा की लहरें बेकार हैं॥
उस धार की कुछ बूँद से जलधार मैं करूँ।
वह ज्ञान नीर मैं हृदय के पात्र में भरूँ॥

शांतये शांतिधारा.....

स्याद्वाद अनेकान्त के उद्यान में माता।
बहुविध के पुष्प खिले तेरे ज्ञान में माता॥
कतिपय उन्हीं पुष्पों से मैं पुष्पांजलि करूँ।
उस ज्ञानवाटिका में ज्ञान की कली बनूँ॥

दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्....

जयमाला

दोहा— ज्ञानमती को नित नमूँ, ज्ञान कली खिल जाय।
ज्ञानज्योति की चमक में, जीवन मम घुल जाय॥
हे बालसती, मां ज्ञानमती, हम आए तेरे द्वार पे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाये हैं।

शरद पूर्णिमा दिन था सुन्दर तुम धरती पर आईं।
उन्निस सौ चौतिस में माता मोहिनी जी हर्षाईं॥...माता।
थे पिता धन्य, नगरी भी धन्य, मैना के इस अवतार पे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं॥ १॥

बाल्यकाल से ही मैना के मन वैराग्य समाया।
तोड़ जगत के बन्धन सारे छोड़ी ममता माया॥...माता।
गुरु संग मिला, अवलम्ब मिला, पग बढ़े मुक्ति के द्वार पे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं॥ २॥

शांतिसिधु की प्रथम शिष्यता वीर सिन्धु ने पाई।
उनकी शिष्या ज्ञानमती जी ने ज्ञान की ज्योति जलाई॥...माता।
शिवरागी की, वैरागी की, ले दीप सुमन का थाल रे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं॥ ३॥

माता तुम आशीर्वाद से जम्बूद्वीप बना है।
हस्तिनापुर की पुण्यधरा पर कैसा अलख जगा है॥.. माता।
ज्ञानज्योति चली, जगभ्रमण करी, तेरे ही ज्ञान आधार पे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं॥ ४॥

यथा नाम गुण भी हैं वैसे तुम हो ज्ञान की दाता।
तुम चरणों में आकर के हर जनमानस हर्षाता॥.. माता।
साहित्य सृजन, श्रुत में ही रमण, कर चलीं स्वात्म विश्राम पे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं॥ ५॥

गणिनी माता के चरणों में यही याचना करते।
कहे "चन्दनामती" ज्ञान की सरिता मुझमें भर दे॥.. माता।
ज्ञानदाता की जगमाता की वंदना करूँ शत बार मैं,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं॥ ६॥

दोहा

लोहे को सोना करे, पारस जग विख्यात।
तुम जग को पारस करो, स्वयं ज्ञानमती मात॥ ७॥

ॐ ह्रीं श्रीज्ञानामतीमाताजी जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

ब्राह्मी माता के सदृश, ज्ञानमती जी मात।
सदी बीसवीं की प्रथम, क्वांरी कन्या आप॥

इत्याशीर्वादः।